बून्दी राज्य का इतिहास

•

लेखक

स्व० श्री जगदीशसिंह गहलोत

एम आर ए एस , एफ आर जी एस.,

भूतपूर्व अधीक्षक,

पुरातत्व व संग्रहालय विभाग, जोधपुर

•

सम्पादक

श्री सुखवीरसिंह गहलोत, एम ए (हिन्दी व इतिहास)

श्री जी आर परिहार, एम ए (इतिहास व राजनीति)

प्रकाशक
चन्द्रलेखा गहलोत
हिन्दी साहित्य मन्दिर
गहलोत निवास मेड़ती दरवाजा
जोधपुर

अप्रेल १९५०

मूल्य ४)

बून्दी राज्य

बून्दी जिले का क्षेत्रफल २१३८९ वर्गमील है।

पहाड़—इस राज्य के बीचों बीच अरावली पहाड़ है जो उत्तर पूर्व में माधोपुर की पहाड़ियों से मिला हुआ है। लाखेरी के पास से यह दोहरी श्रेणी में चलकर राज्य के दक्षिण-पश्चिम में मेवाड़ की पहाड़ियों से जा मिला है। इस प्रकार अरावली पहाड़ से इस राज्य के लगभग दो बराबर भाग हो गये हैं। उत्तर का भाग पहाड़ी है जिसमें एक ही फसल होती है। दक्षिण का भाग समतल है जो बहुत ही उपजाऊ तथा दो फसली है।

नाल—(घाटा)—पहाड़ में होकर निकलने वाले तंग रास्तों को यहां 'नाल' कहते हैं। ऐसी नालें इस राज्य में पांच हैं। एक राजधानी बून्दी में "जैतु की नाल" के नाम से प्रसिद्ध है जिसमें होकर कोटा देवली एवं नसीराबाद की छावनी (अजमेर) को सड़क गई है। दूसरी जैतिवास नामक गांव के पास है जिसमें होकर टोंक का मार्ग है। तीसरी रामगढ़ और खटकड़ के पास है जहां मेज नदी पहाड़ को काटती हुई उत्तर से दक्षिण की ओर जाती है। चौथी राज्य की सीमा पर उत्तर पूर्व में लाखेरी कस्बे के पास (लाखेरी घाटा) है। पांचवां सणिया का घाटा है जो उदयपुर राज्य को जाता है।

बून्दी राज्य में अरावली पहाड़ की सब से ऊंची चोटी सातूर के पहाड़ की है जो समुद्र की सतह से १७९५ फुट ऊंची है। यह बून्दी नगर के १० मील पश्चिम को है। बून्दी नगर के किनारे पर तारागढ़ नामक पहाड़ी १४२६ फुट ऊंची है। धनीलगढ़ में खजवास के पास की पहाड़ी १६६२ फुट गेमोली में १५६६ फुट और हिन्डोली में ११२८ फुट ऊंची है।

नदियां—इस राज्य की सब से बड़ी नदी चम्बल है जो राज्य की पूर्वी और दक्षिणी सीमा पर बहती है। इस नदी का प्राचीन नाम चर्मण्वती है। यह नदी राज्य की सीमा में कहीं-कहीं बहती है। इस नदी का पाट कहीं कहीं २४० फुट तक है। इसकी गहराई केशोरायपाटन के पास बहुत ज्यादा है। सिवाय चम्बल के यहां की अन्य नदियां बरसाती हैं जो गर्मियों में सूख जाती हैं। चम्बल नदी विन्ध्याचल पहाड़ के उत्तरी पार्श्व से निकल कर मध्य भारत और उदयपुर राज्यों में होती हुई दक्षिण में बून्दी राज्य व कोटा राज्य की सीमा बनाती हुई बहती है। कुछ दूर कोटा राज्य में बहकर तहसील पाटण कापरेण और लाखेरी की पूर्वी सीमा बनाती हुई यह इन्द्रगढ़ (कोटा) में चली जाती है। आगे जाकर जयपुर, करौली और धोलपुर राज्यों को मध्यभारत के राज्य से अलग करती हुई और मध्यभारत की सीमा बनाती हुई पूर्वोत्तर में उत्तर के

इटावा नगर के पास यमुना नदो मे जा मिलती है। इसकी कुल लम्बाई लगभग ६५० मील है। बून्दी राज्य मे इसकी लम्बाई लगभग ७८ मील है। इसके किनारे पर प्रसिद्ध नगर भैंसरोडगढ (मेवाड) कोटा, पाटण, धोलपुर आदि बसे है। इसका उपयोग सिंचाई व जल विद्युत के लिये अभी तक नही किया गया था। अब राजस्थान सरकार ने इसके लिये ७० करोड रुपये की चम्बल योजना हाथ मे ली है। जिसमे ३ बडे बाध और एक सिचाई बाध का निर्माण होगा। इस योजना के पूर्ण होने पर वे कोटा, बून्दी और सवाई माधोपुर जिलो मे सिचाई के लिये जल और विद्युत की बहुतायत उपलब्धि मे कृषि और उद्योग-धन्धो के विकास मे महत्वपूर्ण सहायता मिलेगी।

बून्दी राज्य मे चम्बल की बडी सहायक नदी मेज है, जो मेवाड के पूर्वी भाग के १,७०० फुट ऊँचे पहाडो से निकल कर शामपुरा होती हुई नेगट के पास बून्दी राज्य मे प्रवेश करती है। यह बून्दी की उत्तरी तहसीलें हीडोली, गोठडा, गडोली मे बहती हुई आडावला पहाड को खटकड के पास काट कर, दक्षिण मे लाखेरी होती हुई कोटा-बून्दी की सीमा पर पाली के पास चम्बल नदी मे जा मिली है। इस प्रकार यह इस राज्य मे २६ मील बही है। इस पर मुख्य गाव अलोद, दबलाना, बडगाव, गूढा, खटकड, बराणा, और पचीपला बसे हुए है।

मेज की बडी सहायक नदिया सूकली और बेजीन है। सूकली (मागली) नदी दक्षिण पश्चिम की पहाडियो मे होकर मेवाड की ओर से आती है और घोडा पछाड तथा तालेडा (ताई) की नदियो के पानी को लेकर भैंसखेडा के पास मेज नदी मे मिल जाती है। ताई नदी से मिलकर यह कूरल नदी कहलाने लगती है। इस पर करजूणा, चावरस, बागदा, एवरा और जैथल आदि प्रसिद्ध स्थान हैं।

बेजीन (भूजान) नदी पश्चिम की ओर मेवाड के ईटोदा के पहाडो से आकर कुछ दूर तहसील हीडोली मे बहकर जयपुर राज्य से सीमा बनाती हुई तहसील गोठडा मे होकर सादेडा के सगम पर बरगाव (बडगाव) के पास मेज नदी मे मिल जाती है। इस पर गोठडा और बाल दो बडे गाव है।

इसके सिवाय बनास नदी तहसील नैणवा मे तीन मील के लगभग बहती है। इस के तट पर बून्दी राज्य के मुख्य गाव कोरावास और जलसीना है।

झील और बांध—इस राज्य मे कोई बडी झील नही है। बरदा बध वि० स० १९८२ (ई० सन् १९२५) मे बनाया गया था। डुगारी मे कनक सागर झील लगभग चार वर्ग मील है। हीडोली मे रामसर नामक पुराना बध है। इसकी

पक्की पाल महाराव रघुवीरसिंह ने बनवाकर उस पर बहुत अच्छी कोठी बनवाई है। नैणवा में गांव के दक्षिण-पश्चिम और पूर्वी-उत्तर में तीन तालाब हैं जिनमें सब से बड़ा नवलसागर, नवलसिंह सालकी का संवत् १४६० (ई० सन् १४०३) का बनवाया हुआ है। बून्दी राजधानी से ४ मील पर फूलसागर है जहां बून्दी नरेशों के गरमियों में निवास करने के लिये फूलबाग में महल बने हुए हैं। इसी के दक्षिण में जोधसागर है। हीडोली के रामसागर, डुगारी के कनकसागर तथा बरधावध में मछली पकड़ी जा सकती है।

बून्दी शहर के उत्तर में मीना जेता का बनवाया जेतसागर नामक बड़ा तालाब है। यह पहाड़ी से सटा हुआ है। बरसात में जब इस तालाब का मोटा (वाट-बहर) चलने लगता है उस समय यहां का दृश्य बड़ा सुहावना लगता है। नगर के पश्चिम में रामबाग और बाग के बीच में नवलसागर है। यहां सिंचाई कुओं से होती है और लगभग दस हजार कुए हैं। यों झीलों व तालाबों से भी काफी मात्रा में सिंचाई होती है।

आबहवा—यहां की आबहवा सामान्यतः अच्छी है लेकिन तरी होने से बुखार और वातराम (गठिया) की शिकायत ज्यादा रहती है। सर्दियों में तापक्रम ५१ से ८१ डिग्री गर्मियों में ६८ से १०८ डिग्री फेरनहीट रहता है। राज्य में वर्षा का औसत २८ इञ्च है। यों ई० सन् १९०० (सं० १९५०) में ४२ इञ्च के लगभग वर्षा हुई थी। संवत् १९८३ (ई० सन् १९२६) आधे भाद्रपद (भादों) तक ६ इञ्च वर्षा हो गई थी।

बाग—बून्दी राज्य में बाग ज्यादा नहीं हैं। बून्दी हीडोली डुगारी में अनार, आम केले नारंगी और सीताफल के बाग हैं। लाखेरी और नैणवा में पान बहुत पैदा होता है। लाखेरी का पान बड़ा प्रसिद्ध है। जो दूर-दूर तक जाता है।

उपज—बून्दी राज्य के उत्तरी पश्चिमी भाग की भूमि साधारण कंकरीली है फिर भी सिंचाई से गहूं चना असली और तिलहन दूसरे भागों से अधिक पैदा होते हैं। दक्षिणी-पूर्वी भाग में काली चिकनी मिट्टी है जिसमें कई आदि फसलें होती हैं। राज्य के दक्षिणी भाग में हल्की भूरी मिट्टी है। यहां सावणू (खरीफ) फसल में ज्वार मक्का (मक्की) चावल उड़द मूंग बाजरा तिल कपास ईख (गन्ने) उत्पन्न होते हैं। उन्हालू (रबी) फसल में गहूं चना जौ मैथी जीरा राई सरसों अलसी बटला मसूर आदि पैदा होते हैं।

काश्तकारी अधिकार—यहां के काश्तकार खातेदारी अधिकार पड़त जमीन में काश्त करने या कारतगुदा जमीन के लिये नजराना देकर प्राप्त कर सकते

हैं। खातेदारी अधिकार पुश्तैनी होते है। उनको बेचने, रहन रखने आदि के अधिकार होते है। यदि कोई काश्तकार बराबर १२ वर्ष तक काश्त करता है तथा राज्य को बराबर लगान देता है तो वह मुस्तकिल शिकमी काश्तकार कहलाता है। यदि वह नजराना राज्य मे भर देता है तो वह खातेदार बन जाता है। नजराना मे २) रु० बीघा से २० रु० बीघा तक लिया जाता है। तीसरे प्रकार के काश्तकार शिकमी कहलाते है। काश्तकारो से लगान नकदी व जिन्स दोनो प्रकार से लिया जाता है। जागीरदार, भोमिये आदि रितराज देते है। अब वि० स० २०१२ (ई० सन् १९५५) से ये अधिकार राजस्थान टिनेन्सी एक्ट से शासित होते है। इस एक्ट से काश्तकारो को काफी अधिकार प्राप्त हुए हैं।

व्यापार—रूई, मसाले, सरसो, अलसी, तिल, जीरा, घी, कत्था, चमडा, गोद, शहद आदि चीजें यहा से बाहर भेजी जाती हैं। अनाज की भी निकासी होती है। पहिले अफीम बहुत होती थी और उसका निकास भी था पर अब उसकी पैदावार बन्द कर दी गई है। इसके सिवाय पत्थर, लकडी, सीमेन्ट और कोयला भी बाहर भेजा जाता है। बाहर से आनेवाली चीजो मे कपडा, गुड, खाड, नमक, चावल, ममाले (कटलरी) सामान, लोहा, ताम्बा, पीतल आदि हैं। १९५१ मे व्यापार पर १०,९०३ व्यक्ति निर्भर थे।

उद्योग-धन्धे—यहा के उद्योग-धन्धो मे कोई विशेषता नही है। मुख्य उद्योग-धन्धा रेजा (खादी-मोटा कपडा) बुनना है। बून्दी मे डोरिया, शैला, जोडा और अगोछे बनते हैं। दबलाना के सेले प्रसिद्ध है। रोटेरा मे रेजा और गाढे अच्छे बनते हैं। बून्दी मे कुसुमे की रँगाई बहुत बढिया रगी जाती है। बून्दी के कटार, उस्तरे, चाकू, केंचियें और तलवारें अपनी तेज धार के लिये प्रसिद्ध हैं। कुछ कल-कारखानें भी यहा हैं। सब से बडा कारखाना लाखेरी मे "बूदी पोर्ट-लेण्ड सीमेन्ट का है। बून्दी, नैणवा और बावडी (तहसील हिडोली) मे रूई मे से बिनोले निकालने की मशीने लगी हुई हैं। अलफानगर (तहसील वरूघण) मे शक्कर बनाने का कारखाना है।

खानें—इस राज्य मे पत्थर अधिक मिलता है। यह सफेद, लाल और काला तीनो प्रकार का होता है। पट्टिया, कातले और टुकडे तीनो ही यहा निकाले जाते हैं। पट्टियो की खानें खडी-जागमडू और ऊपर (तहसील हीडोली) मे हैं। कातले और पत्थर के टुकडे दलेलपुरा, काटी, उमरथूणा (तहसील बून्दी) और लाखेरी मे अच्छे निकलते है। गेंडोली मे काले पत्थर की बहुत-सी खानें है।

किशनपुरा तथा सथरूपुरा में खड़ी निकलती है। चुनाई के काम का पत्थर अनेक स्थानों से निकलता है। लाखेरी में पत्थर से बहुत अच्छा चूना अर्थात् पोर्टलेण्ड सीमेंट तयार करने का बड़ा कारखाना है। यहां का सीमेन्ट बढ़िया होता है जो भारत के सभी बड़े-बड़े नगरों को जाता है। कई अन्य स्थानों में पहाड़ के पत्थर से चूना बनाया जाता है। चूने के पत्थर की खानें कई जगह है। दुगड़ी में सिल्ली के पत्थर की खान है जिससे उस्तरे और चाकू आदि तेज किये जाते हैं। हिण्डोली की नदियों में काँच की रेत मिलती है। बडोदिया गांव में कांच की मिट्टी बढ़िया निकलती है जो बलजियम (यूरोप) की बढ़िया मिट्टी का मुकाबला करती है। इस मिट्टी से बून्दी नगर में कांच के बर्तन बनाये जाते थे जो बहुत ही बढ़िया और सुन्दर होते थे लेकिन अब वह कारखाना बंद कर दिया गया है। बतूका में ताम्बा भैरूपुरा बून्दी शहर और लोहचा भैरूपुरा में कुछ लोहा निकाला जाता है जिसके तब कड़ाइयां आदि बनती हैं। यह लोहा उत्तम प्रकार का होता है।

इस राज्य में खनिज पदार्थ बहुत है पर उनकी खोज अब तक नहीं हुई है। चांदी ताम्बा रांगा जस्ता आदि धातुओं के मिलने की भी यहां संभावना है।

जंगल—बून्दी राज्य में १०८ वर्ग मील में जंगल है। खेर खेजड़ा बबूल टीक गूलर, सालर नीम पीपल बड़ आंवला छोंटा और टई आदि के पेड़ यहां अधिकता से पाये जाते हैं। साल खजूर और महुआ के पेड़ बहुत है। महुए से देशी शराब तैयार की जाती है। पहाड़ों में धोक अधिक होता है जिसका कोयला बनाया जाता है तथा लकड़ी जलाने के काम में भी आती है।

जंगली जानवर—बाघ तेन्दुआ बघेरा हिरण सांभर, (नीलगाय) रीछ, चीता चीतल सूअर, खरगोश गीदड़ लोमड़ी भेड़िया और बन्दर यहां बहुत हैं। बाघ यहां के जंगलों में बहुतायत से पाया जाता है जो अपने आकार और शक्ति के लिये सर्वत्र प्रसिद्ध है। तालाबों व झीलों में मगर, मछली सारस बतख बगुले मुर्गाबी और जलकुक्कड़ तथा आकाशचारी पक्षियों में ज्यादातर मोर, तोता बुलबुल तीतर कायल मुर्गी गिद्ध आदि पाये जाते हैं। मोर कबूतर, बंदर, गाय और बकरी मारने की राज्य में सख्त मनाई है।

आबादी—बून्दी राज्य में १६५१ तक आठ बार मनुष्य-गणना हो चुकी है। १६५१ में बून्दी जिले में ४७ ६२५ आबाद घर थे जिनमें ५६ १३४ परिवार रहते हैं तथा जनसंख्या २८०२१८ थी। वि० सं० १६३७ (ई० सन् १८८१) में यहां की जनसंख्या २५४७ १ थी जो वि० सं० १६६७ (ई० सन् १६४१)

मे २,४८,३७४ तथा वि० स० २००७ (ई० सन् १९५७) मे २,८०,५१८ हो गई। अतिम गणना के अनुसार बून्दी जिले मे १,४६,६५२ पुरुष और १,३३,८६६ स्त्रिया हैं। नगरो मे ४७,७५८ तथा गावो मे २३२,७६० आबादी वसी है। बून्दी नगर की जनसख्या २२,६९७ है। बून्दी जिले मे १९५१ मे अनुसूचित जातियो की आबादी ५७,००० तथा जन-जातियो की आबादी ५३,००० थी। १९४१ की जनगणना के अनुसार यहा ९३ ३ प्रतिशत हिन्दू, ४ ७ प्रतिशत मुसलमान और १ ८ प्रतिशत जैन थे।

आवागमन के साधन—खास बून्दी नगर मे रेलवे लाइन नही है। परन्तु राज्य की सीमा मे वी० बी० एण्ड० सी० आई रेलवे (वर्तमान पश्चिमी रेलवे) की वडी लाइन मथुरा नागदा लाइन केवल ४३ मील के लगभग हैं। इस पर बून्दी राज्य के पाच स्टेशन, बून्दी रोड (केशोराय पाटण), अरनेठा, कापरेण, लबान और लाखेरी है। दूसरी दो लाइने कोटा से बून्दी तक बडी लाईन और बून्दी से नसीराबाद (अजमेर) तक छोटी लाईन निकालने के लिये सन् १८९९ स० १९५६ वि० पैंमायश करके मिट्टी डाल दी गई थी, परन्तु वह आज तक नही वनी। अभी कुछ वर्षों पहिले इसके बनाने का सवाल चला था, परन्तु फिर मामला शात हो गया।

सड़कें—राज्य मे पक्की ककर की सडके १४३ मील लम्बी है। कोलतार की पक्की सडक ४३ मील लम्बी है, जिसमें से ३८ मील बाहर जिलो में है और लगभग ५ मील राजधानी में हैं। इनमे से मुख्य सडकें निम्न हैं।

१. **बून्दी-देवली रोड़**—यह बून्दी राजधानी से सथूर दर्रे में निकल कर नया गाव, हीडोली, और बासणी होती हुई देवली अजमेर तक गई है। इसकी लम्बाई राज्य में २६ मील है।

२ **कोटा-बून्दी रोड**—यह कोटा शहर से बलोप, तालेडा और देवपुरा होती हुई बून्दी जाती है। इसकी लम्बाई बून्दी राज्य में १८ मील के लगभग है।

३ **तालेड़ा पाटनरोड**—यह कोटा-बून्दीरोड की एक शाखा है जो तालेडा के करीब जमीपुर, वाजड होती हुई पाटण (केशोराय पाटण) जाती है और लगभग १२ मील लम्बी है।

निजामतो और गावो में गाडियो के आने-जाने के कच्चे मार्ग १७४ मील के करीब है। बून्दी राज्य के ये मार्ग वहुत ही खतरनाक हैं। ये मार्ग केवल गर्मी और सर्दी के ही काम के हैं। बरसात में कीचड के कारण ये रास्ते बिलकुल

बद हो जाते हैं। सड़क द्वारा बूंदी जयपुर से १२८ मील कोटा से २४ मील और अजमेर से ८९ मील है।

सामाजिक, धार्मिक व सांस्कृतिक विवरण

निवासी—बूंदी राज्य में अधिकतर हिन्दू लोग बसते हैं। जन-संख्या के लगभग ९१ प्रतिशत हिन्दू ५ प्रतिशत मुसलमान चार प्रतिशत जैन हैं और बाकी एक प्रतिशत अन्य जातियें हैं। हिन्दुओं में अधिकतर मीणा जाति के लोग हैं। १९५१ की जनगणना के आधार पर लगभग ४४ ००० मीणे हैं जो जनसंख्या के १३ प्रतिशत हैं। पहले इस राज्य पर मीणों का गणराज्य था जिसे देवासिंह हाड़ा ने विजय कर एकतन्त्र राज्य स्थापित किया था। इन मीणों को मेवाड़ व मारवाड़ के मीणे कहते हैं। मीणा एक वीर व मेहनती जाति है। देवली की छावनी के पास जंगली हिस्से को मीणा खराड़ा कहते हैं। यहां पर मीणे बसते हैं। उनका सामाजिक जीवन आदि-वासियों की तरह था परन्तु धीरे-धीरे वे खेती करने लगे हैं और हिन्दू धर्म अपना लेने के कारण उनके रीति-रिवाज तथा ओढ़ने-पहनने का ढंग हिन्दुओं की तरह हो गया। उनके सामाजिक विभाजन में दो जातिएं हैं—उज्जवल और मैने। दोनों में विभिन्नता इस बात पर है कि उज्जवल गाय बैल का मांस नहीं खाते हैं तथा मैने इसका प्रयोग करते हैं। बूंदी के अन्य कई गांवों में परिहार मीणे भी बसते हैं। ये मीणे अपने आपको परिहार राजपूतों का वंशज बतलाते हैं। मीणों के बाद बूंदी के सामाजिक जीवन में गूजरों का स्थान आता है। यह अधिकतर कृषिप्रधान जाति है जो ढोर पशु भी पालते हैं। ये कुल जनसंख्या के १० प्रतिशत हैं। इसके बाद में ब्राह्मण ९ प्रतिशत मामी ७ प्रतिशत महाजन ६ प्रतिशत तथा माली ६ प्रतिशत हैं। इसके अलावा ५ प्रतिशत मुसलमानों की

वस्ती है। इनके सामाजिक जीवन मे राजस्थान के सामाजिक सगठन व रीति-रिवाजो का पूरा प्रभाव रहा है। इन लोगो की मुख्य उपज मक्का, ज्वार होने के कारण इनका खाद्य-पदार्थ भी यही रहा है। ये मोटा कपडा पहनते हैं। स्त्रियो को भी मोटा कपडा अधिक पसन्द है। त्योहारो मे बूदी मे गणगोर का त्योहार सामाजिक जीवन मे अपना स्थान रखता है।

शिक्षा की दृष्टि से यहा के लोग वहुत कम पढे-लिखे हैं। कुल पढे-लिखे लोगो की १६५१ मे दस प्रतिशत सख्या रही। इस दृष्टिकोण से राजस्थान की सव रियासतो मे बूदी का पन्द्रहवा स्थान है। सारे राज्य मे सरकारी स्कूलो की सख्या २८ थी जिनमे बूदी नगर मे एक हाईस्कूल, मिडिल स्कूल तथा एक कन्या पाठशाला थी। निजामत वरूधन मे २, हिन्डोली मे ५, नेणवा मे २, देई मे २, पाटन में ४, कापरेण मे ३, लाखेरी मे ४ और गैंडली मे ५ स्कूले थी। १६५१ की जनगणना के अनुसार यहा कुल १७,१३७ पढे-लिखे व्यक्ति थे जिनमे ६,५६३ नगरो के पढे लिखे व्यक्ति भी शामिल थ। नगरो मे पढे लिखे मर्द ७,८०६ तथा स्त्रिया १,७८७ थी। बूदी की मुख्य भाषा राजस्थानी है। यहा उसकी शाखा हाडोती व खेराडी का अधिक प्रचार है। हाडोती जयपुरी भाषा का एक रूप है और जयपुर, बूदी, कोटा की सोमाक्षेत्रो के पास अधिक बोली जाती है। खेराडी मेवाडी से मिलती जुलती है जो कि मेवाड की सीमा पर प्रयोग मे लाई जाती है। इसको केवल ३० प्रतिशत जनता बोलती है।

धर्म—यहा के लोग अधिकतर हिन्दू होने के कारण हिन्दू देवी देवताओ की पूजा करते हैं। यहा का शासक वर्ग वैष्णवमत मे अधिक विश्वास करता है और प्राय कट्टर हिन्दू वैष्णव-धर्मी रहे हैं। नाथद्वारा के श्रीनाथजी उनके आदि देवता रहे हैं जिनकी केशरोयपाटन मे 'रगनाथजी के रूप मे मूर्ति स्थापित की गई है। राव उम्मेदसिंह इन्ही रगनाथजी का परमभक्त था। शासकवर्ग यद्यपि वैष्णव-धर्मावलम्वी था परन्तु धार्मिक अत्याचार की नीति नही अपनाई गई। कभी-कभी धर्मगुरु राजनीति में प्रवेश कर राजनैतिक उथल-पुथल किया करते थे जैसे कि बुद्धसिंह की वेगू वाली राणी और कछवाही राणी के धर्म-गुरु ने किया। वेगू वाली राणी का गुरु नित्यनाथ कनफटा जोगी था। कछवाही राणी वैष्णव धर्मानुरागिनी थी। बुद्धसिंह की जयपुर के जयसिंह से अनवन का एक यह कारण भी था। हिन्दू-धर्म के प्रभाव मे रहकर शासक और जनता दोनो ही दानशील वनी रही। हिन्दू-धर्म के अलावा यहा चार प्रतिशत जैन भी हैं जो अधिकतर श्वेताम्बरी है। ५ प्रतिशत मुसलमान हैं जिनका सामाजिक जीवन बिल्कुल हिन्दुओ की तरह रहा है परन्तु मुगलो के शासनकाल में हिन्दू से मुसलमान हो

मान के कारण वे अधिकतर सुन्नी मत के हैं। सब धर्मों के प्रति राज्य का समदृष्टिकोण रहा परन्तु वैष्णव मतावलम्बी होने के कारण राज्य के कार्य का आधार वही था। समाज में धार्मिक जीवन में ब्राह्मणों का एक विशेष स्थान पाया जाता है। जन्म मृत्यु विवाह यज्ञ यात्रा नवीन कार्य प्रारम्भ करने में या अन्य कोई कार्य हो ब्राह्मण को वैदिक स्वरूप प्राप्त था। मन्दिर पूजा व देवमाओं तथा धार्मिक विश्वासों के वे ज्ञाता बने रहे।

सांस्कृतिक कला—बून्दी का सांस्कृतिक जीवन कला साहित्य के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण रहा है। बून्दी का निर्माण एवं कलापूर्ण दृष्टि से किया गया प्रतीत होता है। पहाड़ी की तलेटी में बसा हुआ बून्दी प्राकृतिक सौन्दर्य का केन्द्र है। स्थापत्य कला की दृष्टि से बून्दी के महल अपनी तरह का एक ही है। ये महल शहर से ऊपर की घाटी में बने हुए हैं। इन महलों के कई भाग है जो भिन्न-भिन्न शासकों ने बनाए थे। ये बहुत ही सुन्दरता से अलंकृत है। इन महलों से ऊपर तारागढ़ का किला है। उसके पास ही एक सुन्दर छतरी ह जिसे चुग्ग छत्री कहा जाता है जो १६ खम्भों पर आधारित है और जिसका व्यास २ फीट है। यह सूर्य छत्री कलाविदों का आकर्षण बन गई है। महलों के पास बून्दी का तालाब आया हुआ है जिसके चारों ओर चक्कर खाती हुई सड़क है जो बून्दी नगर का भी चक्कर लगाती है। इसके अलावा बून्दी के अन्य स्थानों पर भी स्थापत्य-कला के अवशेष पाए जाते है। हिंडोली में १७ वीं शताब्दी के मकबरे व छतरिये हैं जिनमें मुगल प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। केशोराय पाटण का रगनाथजी का मन्दिर सादी कला एक अद्वितीय नमूना है। इस मन्दिर को रावराजा छत्रसाल ने विष्णु के केशोराय रूप पर बनवाया था। यह मन्दिर पहले महादेव का जम्बू मार्गेश्वर या केश्वर का मन्दिर था जो कि परशुराम ने बनवाया था। चम्बल नदी के किनारे सतियों के मन्दिर हैं जिन पर अभिलेख अंकित है।

चित्रकला—राजस्थानी चित्रशैलियों में बून्दी चित्रशैली का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी अपनी भिन्न ही शैली है जिस पर मुगल और राजपूत शैली का प्रभाव पड़ा। इसका विकास सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ। इस शैली के चित्रों में रागाओं रागिनियों व बारहमासों का बड़ा सुन्दरता से चित्रण किया गया है। धार्मिक चित्रों का भी बाहुल्य है। रागाओं के स्वभाव वस्त्र चारित्रिक एवं स्वभावगत विशेषताओं को बड़ी सुन्दरता से प्रदर्शित किया गया है। आंखों की आकृति आम के पत्ते के समान बनाई गई है। चित्रों की पृष्ठ भूमि में बतख हिरण ऊंचे लम्बे वृक्ष (नारियल खजूर आदि) हाथी शेर मोर आदि दिखाये

गये है। सुनहरी रग का अधिक प्रयोग किया गया है। इनके बोर्डर भभकदार लाल और सुन्हरी रग के होते है।

साहित्य—बून्दी के शासको मे महाराजा रामसिह के काल मे साहित्य की अत्यन्त उन्नति हुई थी। इनके दरबार मे कई विद्वान रहा करते थे, इनमे पडित गगादास मुख्य थे जो सस्कृत के धुरन्धर विद्वान थे। ये पत्रकार ज्योतिषाचार्य व खगोल शास्त्री थे। इन्होने एक खगोलिक यत्र बनवाया जिससे तारो का अध्ययन किया जा सके। श्री भागवत पर इन्होने टीका भी लिखी। इनके अलावा बाबा आत्माराम सन्यासी, वैद्यराज प्रमुख रहे है। आसानन्द, जीवनलाल, पठाण हमीदखा आदि प्रसिद्ध विद्वान इन्ही के दरबार मे रहते थे। 'वशभास्कर' के रचयिता सूर्यमल मिश्र ने इनका आश्रय प्राप्त कर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक २००० के करीब पद्यो मे रचकर बूदी इतिहास मे स्थान प्राप्त कर लिया है। दादूपथी साधु निश्चलदास ने 'विचार सागर' नामक वेदान्त ग्रन्थ इन्ही के समय मे लिखा।

बून्दी राज्य का शासन प्रबन्ध

मीणो की गणतन्त्रीय शासन प्रणाली का अन्त करके जब राव देवा हाडा ने अपनी सत्ता बून्दी पर स्थापित की तो वह सत्ता निरकुश थी। देवा सर्वे-सर्वा निरकुश शासक था जो शक्ति के बल पर राज्य करता था। बून्दी के हाडा शासको का न तो कोई राजत्व का आदर्श था और न इसके लिए कोई खोज करने की आवश्यकता थी। राजकीय ढाँचा मध्यकालीन-युग की सामन्ती व्यवस्था के आधार पर खडा था, जहा युद्ध आवश्यक होता था और रक्तपात मे लथपथ रहना सभ्यता का प्रतीक समझा जाता था। बून्दी के शासको ने युद्ध और शक्ति के बल पर अपने वश की परम्परा तथा शासन को बनाए रखा। परन्तु चूकि वे हिन्दू-मत के थे अत: उनकी स्थिति को धार्मिकता व मौलिकता प्रदान की गई।

जाने के कारण वे अधिकतर सुन्नी मत के हैं। सब धर्मों के प्रति राज्य का समदृष्टिकोण रहा परन्तु वैष्णव मतावलम्बी होने के कारण राज्य के कार्य का आधार वही था। समाज में धार्मिक जीवन में ब्राह्मणों का एक विशेष स्थान पाया जाता है। जन्म मृत्यु विवाह यज्ञ यात्रा नवीन कार्य प्रारम्भ करने में या अन्य कोई कार्य हो ब्राह्मण को वैदिक स्वरूप प्राप्त था। मन्दिर पूजा व देवताओं तथा धार्मिक विश्वासों के ये ज्ञाता बने रहे।

सांस्कृतिक कला—बूंदी का सांस्कृतिक जीवन कला साहित्य के दृष्टिकोण से प्रभूतपूर्व रहा है। बून्दी का निर्माण एक कलापूर्ण दृष्टि से किया गया प्रतीत होता है। पहाड़ी की तलहटी में बसा हुआ बून्दी प्राकृतिक सौन्दर्य का केन्द्र है। स्थापत्य कला की दृष्टि से बून्दी के महल अपनी तरह का एक ही है। ये महल शहर से ऊपर की घाटी में बने हुए हैं। इन महलों के कई भाग हैं जो भिन्न-भिन्न शासकों ने बनाए थे। ये बहुत ही सुन्दरता से अलंकृत हैं। इन महलों से ऊपर तारागढ़ का किला है। उसके पास ही एक सुन्दर छतरी है जिसे सूरज छत्री कहा जाता है जो १६ खम्भों पर आधारित है और जिसका व्यास २ फीट है। यह सूर्य छत्री कलाविदों का आकर्षण बन गई है। महलों के पास बून्दी का तालाब आया हुआ है जिसके चारों ओर चक्कर खाती हुई सड़क है जो बून्दी नगर का भी चक्कर लगाती है। इसके अलावा बून्दी के अन्य स्थानों पर भी स्थापत्य-कला के अवशेष पाए जाते हैं। हिंडोली में १७ वीं शताब्दी के मकबरे व छतरियें हैं जिनमें मुगल प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। केशोराय पाटण का रगनाथजी का मन्दिर सादी कला एक अद्वितीय नमूना है। इस मन्दिर को रावराजा शत्रुशाल ने विष्णु के केशोराय रूप पर बनवाया था। यह मन्दिर पहले महादेव का जम्बूमार्गेश्वर या केश्वर का मन्दिर था जो कि परशुराम ने बनवाया था। चम्बल नदी के किनारे सतियों के मन्दिर हैं जिन पर अभिलेख अंकित हैं।

चित्रकला—राजस्थानी चित्रशैलियों में बून्दी चित्रशैली का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी अपनी भिन्न की शैली है जिस पर मुगल और राजपूत शैली का प्रभाव पड़ा। इसका विकास सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ। इस शैली के चित्रों में रागों रागिनियों व बारहमासों का बड़ा सुन्दरता से चित्रण किया गया है। धार्मिक चित्रों का भी बाहुल्य है। राजाओं के स्वभाव वस्त्र पारिवारिक एवं स्वभावगत विशेषताओं को बड़ी सुन्दरता से प्रदर्शित किया गया है। आँखों की आकृति आम के पत्ते के समान बनाई गई है। चित्रों की पृष्ठ भूमि में बतख हिरण ऊंचे लम्बे वृक्ष (नारियल खजूर आदि) हाथी शेर मोर आदि दिखाये

मूल पुरुप चहुवान का अग्निकुण्ड से प्रकट होना दिखाया गया है जिनके दोनो हाथो मे तीर कमान व धनुप दिखाई देते है। इन सबके उपर बून्दी की प्रसिद्ध कटारी का चित्र है। श्री चहुवान के दोनो ओर दो गायो का चित्र है जिसका यह आशय है कि गायो की रक्षा के लिए श्री चहुवान ने अवतार लिया। ढाल के नीचे राज्य का मूल मत्र "श्री रगेश भक्त बून्दीशो जयति" अकित है। इसका तात्पर्य यह है कि श्री रगनाथजी (विष्णु) के भक्त बून्दी नरेश की जय हो।

रावराजा की आज्ञासे म त्री नियुक्त किए जाते थे। मुगल कालमे बून्दी का शासन भी मुगलो की तरह का रहा। राज्य मे दीवान व मुसाहिब, फौजदार व किलेदार, बख्शी, रिसाला खजान्ची आदि उच्च पदाधिकारी होते थे। दीवान राज्य का मुख्य मत्री होता था जिसके पास वित्तीय तथा प्रादेशिक शासन के अधिकार थे। फौजदार व किलेदार सेना तथा किले का अध्यक्ष होता था। यह पद किसी राजपूत को नही दिया जाता था। यह धाभाई के लिए पद सुरक्षित रहता था। बख्शी हिसाब किताब की देखरेख करता था और रिसाला शासक के कुटुम्ब के खर्च का उत्तरदायी था। यह व्यवस्था अग्रेजो के साथ सपर्क होने तक चलती रही। १८५७ के बाद अग्रेजी सरकार ने जब देशी राज्यो मे हस्तक्षेप कर उनके आन्तरिक शासन को कुछ उदारवादी तथा उनके स्वार्थहित बनाने का प्रयत्न किया तो बून्दी की शासन व्यवस्था मे भी थोडा परिवर्तन हुआ।

महाराव-राजा की सहायता के लिए राज्य कौन्सिल होती थी जिसमे पाच सदस्य होते थे जो पाच विभागो के अध्यक्ष होते थे। राज्य-प्रबन्ध के लिए कुल राज्य १० तहसीलो मे विभक्त था जिनका प्रधान अधिकारी तहसीलदार होता था जिसका मुख्य कार्य लगान वसूल करने का होता था। बाद मे उसे फौजदारी अधिकार भी दे दिए गए थे। इनकी देखभाल और अपीलो को सुनने के लिए नाजिम होते थे। बून्दी मे चार निजामते थी बधरूण, हीडोली पाटण और नेणवा।* इन तहसीलदारो के नीचे पटवारी और शेहणे होते थे।

राज्य मे न्याय प्रबन्ध के लिए एक पृथक् बून्दी फौजदारी और दीवानी कानून ग्रन्थ था जो कि हिन्दू कानून पर आधारित था। राजधानी मे कोतवाल

---

* राजस्थान के निर्माण के बाद बून्दी कोटा डिविजन के अन्तगत एक जिला बना दिया गया है। इस जिले में ५ तहसीलें हैं, बून्दी, हिन्डोली, नेणवा, पटवा व तालेरा। बून्दी राज्य की तहसीलो को जोड-तोड कर बनाई गई। इन तहसीलों में क्रमश १३५, १३१, १६५, १६५ व १४३ कुल गाव ७३६ हैं। इस जिले का कुल क्षेत्रफल २१७३ वर्ग मील है।

धर्मशास्त्रों के आधार पर शासन करने का विश्वास प्रत्येक राजतिलक के अवसर पर नया शासक दिला दिया जाता था परन्तु उसके अनुसार शासन करने की फुरसत नहीं मिलती थी। प्रारम्भ में वे बून्दी की इकाई को बनाए रखने में मुगलकाल में मुगल-शक्ति को बनाए रखने में बाद में मराठों के लिए धन एकत्रित करने में और अंग्रेजी युग में उनकी कठपुतली होकर अपने राग-रंग में मस्त रहने के सिद्धान्तों के अलावा कोई शासन का सिद्धान्त उन्होंने नहीं अपनाया। फिर भी जनता उन्हें देवता का प्रतिनिधि स्वीकार करके उन्हें पूजनीय स्थान देती थी। ब्राह्मण उन्हें राम और 'कृष्ण' के अवतार मानकर उन्हें धार्मिक पुरुष बतलाते रहते थे और उन्हें धर्मशास्त्रों के आधार पर राज्य करने का आदेश करते थे। कभी-कभी उदारवादी धर्मभीरु शासक ऐसा करता भी था परन्तु परिस्थितियें उन्हें निरंकुशता की ओर विवश करदेती थीं।

बून्दी का राज्य चिह्न

बूंदी राज्य का अध्यक्ष वहाँ का महाराव होता था। यह पद हाड़ा जाति के वंश के उत्तराधिकारियों में निहित था। हिन्दू सिद्धान्त के अनुसार शासक का बड़ा लड़का ही राज्य-गद्दी का हकदार होता था। यदि राजा के कोई पुत्र न होता तो वह सब से नजदीक के सम्बन्धी के किसी भी पुत्र को गोद ले सकता था। बून्दी के हाड़ों को गद्दी प्राप्त करते समय १५६९ ई० के बाद मुगलों का फरमान लेना पड़ता था बाद में पूना के पेशवाओं व मराठा सरदारों (सिन्धिया व होल्कर) को नजराना देना पड़ता था तथा अंग्रेजीकाल में रेजीडेन्ट की उपस्थिति के बिना राजतिलक कानूनी नहीं समझा जाता था। यों तो बून्दी का शासक बून्दी राज्य का सर्वे-सर्वा होता था। सिद्धान्तिक रूप में वह राज राजेश्वर महाराजाधिराज के रूप में रहता पर व्यवहारिक दृष्टिकोण में वह किसी न किसी बाह्य शक्तियों के प्रभाव में बना रहता था। बून्दी के शासकों को 'महारावराज' की पदवी से सुशोभित किया जाता था। राव रतन के काल में बून्दी का झण्डा मुगलाई शक्ति द्वारा प्रदत्त था। इस झण्डे का रंग पीला था। इस झण्डे व बादमें जो अंग्रेजों द्वारा झण्डे प्राप्त हुए थे उनमें मध्य में उनके

मूल पुरुष चहुवान का अग्निकुण्ड से प्रकट होना दिखाया गया है जिनके दोनो हाथो मे तीर कमान व धनुप दिखाई देते है। इन सबके उपर बून्दी की प्रसिद्ध कटारी का चित्र है। श्री चहुवान के दोनो ओर दो गायो का चित्र है जिसका यह आशय है कि गायो की रक्षा के लिए श्री चहुवान ने अवतार लिया। ढाल के नीचे राज्य का मूल मत्र "श्री रगेश भक्त बून्दीशो जयति" अकित है। इसका तात्पर्य यह है कि श्री रगनाथजी (विष्णु) के भक्त बून्दी नरेश की जय हो।

रावराजा की आज्ञासे म त्री नियुक्त किए जाते थे। मुगल कालमे बून्दो का शासन भी मुगलो की तरह का रहा। राज्य मे दीवान व मुसाहिव, फौजदार व किलेदार, वख्शी, रिसाला खजान्ची आदि उच्च पदाधिकारी होते थे। दीवान राज्य का मुख्य मत्री होता था जिसके पास वित्तीय तथा प्रादेशिक शासन के अधिकार थे। फौजदार व किलेदार सेना तथा किले का अध्यक्ष होता था। यह पद किसी राजपूत को नही दिया जाता था। यह धाभाई के लिए पद सुरक्षित रहता था। बख्शी हिसाव किताव की देखरेख करता था और रिसाला शासक के कुटुम्व के खर्च का उत्तरदायी था। यह व्यवस्था अग्रेजो के साथ सपर्क होने तक चलती रही। १८५७ के वाद अग्रेजी सरकार ने जव देशी राज्यो मे हस्तक्षेप कर उनके आन्तरिक शासन को कुछ उदारवादी तथा उनके स्वार्थहित वनाने का प्रयत्न किया तो वून्दी की शासन व्यवस्था मे भी थोडा परिवर्तन हुआ।

महाराव-राजा की सहायता के लिए राज्य कौन्सिल होती थी जिसमे पाच सदस्य होते थे जो पाच विभागो के अध्यक्ष होते थे। राज्य-प्रवन्ध के लिए कुल राज्य १० तहसीलो मे विभक्त था जिनका प्रधान अधिकारी तहसीलदार होता था जिसका मुख्य कार्य लगान वसूल करने का होता था। वाद मे उसे फौजदारी अधिकार भी दे दिए गए थे। इनकी देखभाल और अपीलो को सुनने के लिए नाजिम होते थे। बून्दी में चार निजामते थी बधरूण, हीडोली पाटण और नेणवा।* इन तहसीलदारो के नीचे पटवारी और शेहणे होते थे।

राज्य मे न्याय प्रवन्ध के लिए एक पृथक् बून्दी फौजदारी और दीवानी कानून ग्रन्थ था जो कि हिन्दू कानून पर आधारित था। राजधानी मे कोतवाल

---

* राजस्थान के निर्माण के वाद बून्दी कोटा डिविजन के अन्तगत एक जिला बना दिया गया है। इस जिले में ५ तहसीलें हैं, बून्दी, हिन्डोली, नेणवा, पटवा व तालेरा। बून्दी राज्य की तहसीलो को जोड-तोड कर बनाई गई। इन तहसीलो में क्रमश १३५, १३१, १६५, १६५ व १४३ कुल गाव ७३९ हैं। इस जिले का कुल क्षेत्रफल २१७३ वर्ग मील है।

का न्यायालय होता था। यह २५) रु० के नीचे के मुकद्दमे का निर्णय देता था और फौजदारी कानून में ११) रु० दंड व एक महीने की सजा व सकता था। उसके ऊपर तहसीलदार की कचहरी होती थी। उसके समानाधिकारी तारागढ़ व मेणवा के किलेदारों की कचहरी होती थी। फौजदारी अधिकार तो इन्हें शहर कोतवाल की तरह ही दिए जाते थे पर दिवानी अधिकारों में २०) रुपये तक के मुकद्दमों का निर्णय वे सकते थे। इन सबके ऊपर राजधानी में हाकिम दीवानी व हाकिम फौजदारी की कचहरिए होती थी। दिवानी अदालत दो हजार से अधिक मुकद्दम नहीं ले सकती थी और फौजदारी अदालत को १) रुपये का दंड व एक वर्ष की सजा देने का अधिकार दिया गया था। सर्वोच्च न्यायालय महारावराजा की कौन्सिल होती थी जहां अन्तिम अपीलें की जा सकतीं थी। जब महाराज इस कौन्सिल का समापतित्व करते तो इसका अधिकार अपराधी को मृत्यु-दंड देने का हो जाता था।

वित्त—राज्य की आय १६४४ ४५ में ३१ १४ २२७ लाख रुपये थी। आय के मुख्य साधन भूमिकर (सामन्तों की खिराज सहित) होता था जो कि पूर्ण आमदनी का आधा होता था और चुंगी कर जो कि चौथाई होता था। शासन का कुल खर्च २१ ५४ ४११ रुपयों का था जिसमें विशेष खर्चे के मग शासन कर्मचारियों को वेतन लगभग २ प्रतिशत सेना व पुलिस २० प्रतिशत अंग्रेजी सरकार को खिराज एक लाख बीस हजार रुपये। राजा के कुटुम्ब का खर्च बीस प्रतिशत होता था।

भूमिकर—१८८१ के पहले भूमिकर कुछ नकद और कुछ अनाज के रूप में लिया जाता था परन्तु उसके बाद नकदी में ही कर लिया जाने लगा। यह कर दरबार द्वारा निश्चित किया जाता था। भिन्न-भिन्न स्थानों के लिए भिन्न-भिन्न कर थे। सिंचित भूमि के लिए १४२ तरह के कर थे और बारानी जमीन के लिए ६६ तरह के यह भिन्नता जमीन की प्रकृत तथा गांव से दूरी पर निर्भर थी। अधिक से अधिक सिंचित भूमि पर १४ रु १४ आना और कम से कम २ रु १ आना प्रति एकड़ थी। बारानी भूमि के लिए प्रति एकड़ अधिक से अधिक ८ रु व कम से कम ≈)॥ आना थे। ये सब दरें गुम्बी के सिक्के में थी। राज्य में खालसा भूमि दो तिहाई और जागीरी इलाका एक तिहाई था। खालसे में कृषक को जब तक वह बराबर लगान देता जाता था भूमि से हटाया नहीं जाता था। भोमिये-राजपूत राजा को सेवा देने के बदले में भूमि प्राप्त करते थे। ये राजकोष में प्रति तीसरे वर्ष अपना एक वर्ष का लगान जमा करा देते थे। दूसरे प्रकार के जागीरदार चौथ-बटाई थे जो प्रतिवर्ष उपज का चौथाई भाग

शासन के जमा करात थे। कुछ जागीरदारो को कर-मुक्त भूमि मिलती थी परन्तु अधिकतर जागीरदार खिराज देते थे। विद्रोही होने या अत्याचारी होने पर जागीरदार द्वारा जागीर छीन ली जाती थी। ब्राह्मणो व मन्दिरो को दान-दक्षिणा के रूप मे माफी भूमि दी जाती थी जो कर-मुक्त होती थी पर दान लेने वाला उसे बेच नही सकता था। यदि दानभोगी का कोई पुरुष उत्तराधिकारी नही होता तो वह भूमि शासन द्वारा जप्त कर ली जाती थी।

सेना—बूदी शासन मे छोटी-सी सेना रहती थी जो आन्तरिक शान्ति बनाए रखने के लिए या अंग्रेजो को आवश्यकता पडने पर दी जाती थी। ई सन् १९२९ में इस सेना मे ६३९ अस्थाई सैनिक १०० घुड सवार, ४०० पैदल, २० यातायात विभाग के व ५० तोपखाने के सैनिक थे। ४८ उपयोगी तोपे और १९ अनुपयोगी तोपें थी। महाराव उस सेना के सेनापति होते थे परन्तु एक सेनापति उनकी जगह काम करने के लिए नियुक्त किया जाता था।

पुलिस, जेल आदि—पुलिस विभाग दो भागो मे बटा हुआ था। एक पैदल शस्त्रहीन दूसरा शस्त्रो से सुसज्जित। पैदल पुलिस मे ७२२ जवान थे जिनमे ७९ बूदी शहर मे रहते थे बाकी राज्य मे विभाजित थे। राज्य मे कुल थाने १३ थे। प्रत्येक थाने मे कम से कम २० पुलिसमैन और एक थानेदार रहता था। सशस्त्र पुलिस की सख्या १५१ थी। राज्य की प्रत्येक तहसील में एक छोटी-सी जेल होती थी। राजधानी मे एक बडी जेल थी जिसमे कैदियो को रखा जा सकता था।

मुद्रा—बूदी के निजी सिक्के चादी के थे जिनका चलन बादशाह शाहआलम द्वितीय के समय से शुरू हुआ था और समय समय पर जुदा जुदा नामो से ढले थे। १९०१ ई० तक चार तरह के रुपये इस राज्य में प्रचलित थे। पुराना रुपया सन् १७५९ से सन् १८५९ के बीच मे ढाला गया था। दूसरा ग्यारह-सना नामक रुपया बादशाह अकबर दूसरे के ११ वें वर्ष (सन् १८१६) में ढाला गया, तीसरा रामशाही रुपया १८५९ ई० से १८८६ ई० के बीच मे प्रचलित किया गया और महाराव रामसिह के नाम से प्रसिद्ध हुआ। चौथा कटारशाही सिक्का जो ई० सन् १८८६ में ढाला गया। इन सिक्को मे ग्यारह-सना में अन्य धातु की बहुत मिलावट रहती थी इसलिए वह दान-पुण्य तथा शादी विवाह के मौके पर देने-लेने के काम मे आता था। बाकी सब रुपयो की कीमत अंग्रेजी रुपयो की तरह ही थी। सन् १८९९-१९०० मे बूदी के सिक्को की कीमत घटने लगी। १६२ बून्दी के सिक्के, १०० अंग्रेजी सिक्को के बराबर होने
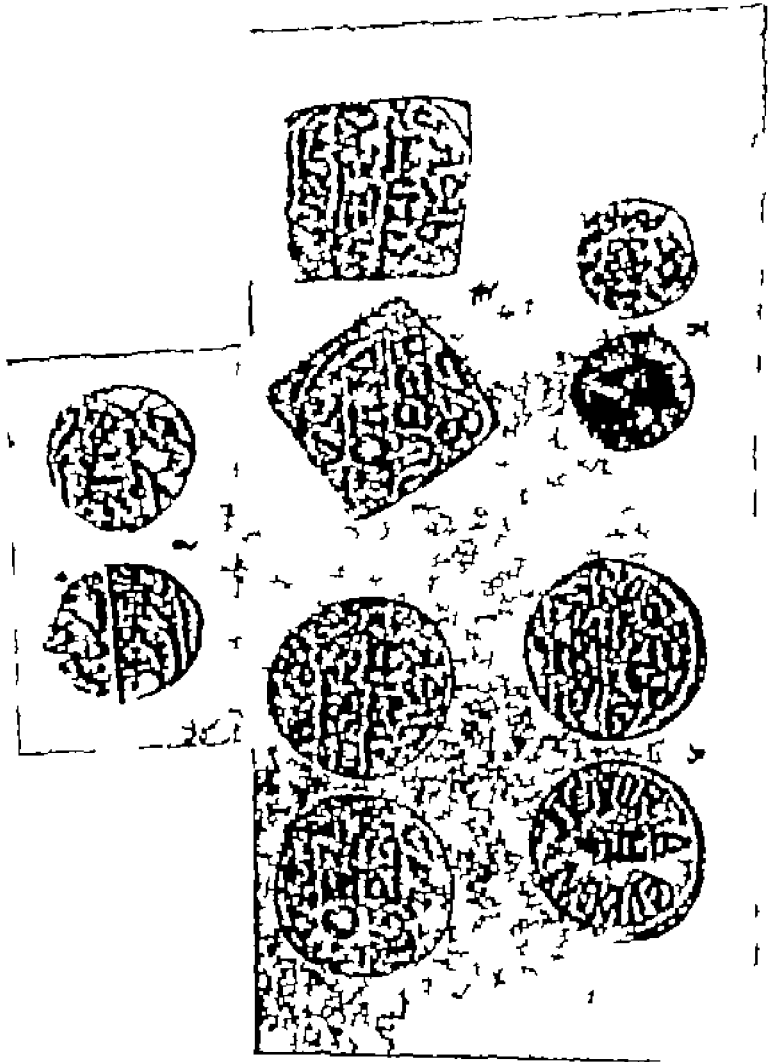
बूंदी के सिक्के

लगे। १६०१ मे दरबार ने यह घोपणा की कि भविष्य मे अंग्रेजी कलदार के सिवाय चेहरेशाही सिक्का चालू रहेगा और वही राज्य की तरफ से ढाला जायेगा। यह चेहरेशाही रुपया पूर्ण चादी का था और उस समय सवा तेरह आने अंग्रेजी सिक्के के वरावर था। हाली (चेहरेशाही सिक्का) अन्तिम वार वि० सन् १९८२ (ई० सन् १९२५) मे ढाला गया फिर अंग्रेजी सिक्के का प्रचलन ही रह गया।

ऐतिहासिक स्थान

वून्दी राज्य में अनेक प्राचीन स्थान हैं। उनमे से मुख्य का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—
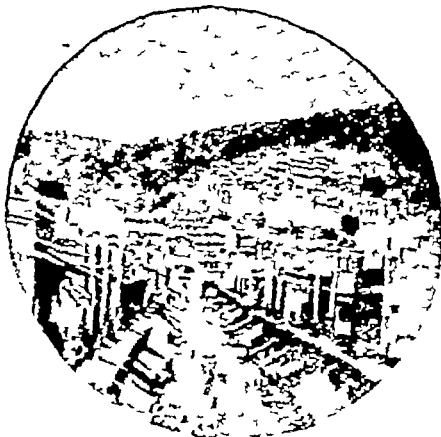
वून्दी नगर—राजधानी का (वून्दी का) प्रधान नगर है, जो २५ अंश २७ कला उत्तर अक्षांश और ७५ अंश ३९, कला पूर्व देशान्तर पर वसा है। यह अजमेर नगर से १०० मील दक्षिण-पूर्व की ओर है। यह बी. बी. एन्ड सी आई रेल्वे (अव पश्चिमी रेल्वे) की वड़ी लाईन के कोटा जकशन स्टेशन मे २४ मील और वून्दी रोड (केशोराय पाटण) स्टेशन से २५ मील दूर है। देवली छावनी (अजमेर) मे जो पक्की सडक कोटा को गई है वह वून्दी शहर में होकर जाती है।

वून्दी नगर

बून्दी शहर के तीन ओर पहाड़ियां हैं और दक्षिण पूर्वी कोने में मैदान आ गया है। शहर के उत्तर में १४२६ फुट ऊंचे पहाड़ पर तारागढ़ नामक मजबूत किला बना हुआ है जिसे राव नरसिंह ने वि० सं० १४११ (ई० सन् १३५४) में बनवाया था। इस किले के नीचे ही बून्दी बसी है। किले की बाहरी दिवार जयपुर के तत्कालीन फौजदार दलेल ने बनवाई थी जबकि यहां १८ वीं शती के प्रारम्भ में जयपुर का शासन था।

राजमहल के नीचे की ओर सड़क पर एक घोड़े तथा हाथी की मूर्तियां हैं। इस हाथी का नाम शिवप्रसाद था जो शाहजहां ने राव छत्रसाल को राज्य-सेवा के उपलक्ष में दिया था। महल के शस्त्रागार में वह दो-धारी तलवार देखी जा सकती है जो कि युद्ध में यह हाथी काम में लाता था। यहां उसकी वह ढाल भी है जो कि उसके सिर पर पहनाई जाती थी। सड़क के दूसरे सिरे पर हुंजा घोड़े की मूर्ति है जिस पर सवार होकर उम्मेदसिंह ने दासलाना का युद्ध लड़ा था और जो युद्ध के बाद ही मर गया था।

शहर के पश्चिमी किनारे पर एक छोटासा सुन्दर तालाब नवलसागर है जो महाराव राजा उम्मेदसिंह ने बनवाया था। तालाब के उस ओर मोतीमहल व

बून्दी का मोती महल

सुन्दर घाट है। सुन्दर घाट महाराव राजा विष्णुसिंह की उप-पत्नी सुन्दर शोभा ने पिछली शती के मध्य में बनवाया था। नवलसागर के ऊपर ही राजमहल बने हुए हैं जिनकी परछाई पानी में बहुत ही अच्छी लगती है।

राजमहल शहर के एक ओर ऊंचाई पर बने हैं। महलों की विशालता अवर्णनीय है। टाड ने

तारागढ़, बून्दी

बून्दी शहर के तीन ओर पहाड़ियां हैं और दक्षिण पूर्वी कोने में मैदान आ गया है। शहर के उत्तर में १४२६ फुट ऊँचे पहाड़ पर तारागढ़ नामक मजबूत किला बना हुआ है जिसे राव बरसिंह ने वि० सं० १४११ (ई० सन् १३५४) में बनवाया था। इस किले के नीचे ही बून्दी बसी है। किले की बाहरी दिवार जयपुर के तत्कालीन फौजदार दलेल ने बनवाई थी जबकि यहां १८ वीं सदी के आरम्भ में जयपुर का शासन था।

राजमहल के बीच की ओर सड़क पर एक घोड़े तथा हाथी की मूर्तियां हैं। इस हाथी का नाम शिवप्रसाद था जो शाहजहां ने राव छत्रसाल को राज्य-सेवा के उपलक्ष में दिया था। महल के शस्त्रागार में वह दो-धारी तलवार देखी जा सकती है जो कि युद्ध में यह हाथी काम में लाता था। यहां उसकी वह ढाल भी है जो कि उसके सिर पर पहनाई जाती थी। सड़क के दूसरे सिरे पर हवा घोड़े की मूर्ति है जिस पर सवार होकर उम्मेदसिंह ने डाबलाना का युद्ध लड़ा था और जो युद्ध के बाद ही मर गया था।

शहर के पश्चिमी किनारे पर एक छोटासा सुन्दर तालाब नवलसागर है जो महाराव राजा उम्मेदसिंह ने बनवाया था। तालाब के उस ओर मोतीमहल व

बून्दी का मोती महल

सुन्दर घाट है। सुन्दर घाट महाराव राजा विष्णुसिंह की उप-पत्नी सुन्दर शोभा ने पिछली सदी के मध्य में बनवाया था। नवलसागर के ऊपर ही राजमहल बने हुए हैं जिनकी परछाई पानी में बहुत ही अच्छी लगती है।

राजमहल शहर के एक ओर ऊँचाई पर बने हैं। महलों की विशालता अवर्णनीय है। टाड के अनुसार बून्दी के महलों का रजवाड़ों में प्रथम स्थान है।

बून्दी नगर प्राकृतिक दृष्टि से उदयपुर से दूसरे नम्बर का मनोहर नगर है। पहाडो के बीच मे बसा होने से वर्षा ऋतु मे यहा का दृश्य बडा ही सुन्दर और सुहावना लगता है। चारो ओर पहाड हरियाली से ढक जाते है तथा झरने और नाले बहने लगते है। इसी से बून्दी मे अधिकाश मेले श्रावण और भाद्रपद मास मे होते हैं। बून्दी का तीज का मेला सब से प्रसिद्ध मेला है, जो भाद्रपद कृष्णा तीज को भरता है। नगर चारो ओर परकोटा (शहर-पनाह) से और मैदान की ओर खाई तथा कोट से घिरा हुआ है। परकोटे मे चार दरवाजे हैं। पूर्व की तरफ पाटण पोल, पश्चिम मे भैरो दरवाजा है। दक्षिण में चौगान दरवाजा और उत्तर मे सुकल बावडी दरवाजा है। पूर्व की पहाडी पर छैल मीरा साहब की दरगाह है। दक्षिण की पहाडी पर चौमुखा नामक बुर्ज और उत्तर की पहाडी के पश्चिमी छोर पर सूर्य छत्री दर्शनीय है।

वि० स० १९३७ की फाल्गुन कृष्णा ३ गुरुवार (ई० सन् १८८१, ता० १७ फरवरी) की मनुष्य गणना के अनुसार उस समय बून्दी शहर की बस्ती २०,७२० मनुष्यो की थी। वि० स० २००७ (ई० सन् १९५१) मे २२,६९७ की बस्ती थी जिनमे ११,४५० पुरुष और ११,२४७ स्त्रिया थी।

बून्दी शहर से डेढ मील उत्तर की ओर छार बाग (सार बाग) नामक राजकीय श्मशान है जहा भूतपूर्व बून्दी नरेशो की छत्रिया तथा चौतरे बने हुए है। यहा राव सुखन का पुत्र इदा जो १५८१ मे मुगलो के पक्ष मे लडता मारा गया था, से लगा कर अब तक के राजाओ की छत्रिया है। इन छत्रियो की पच्चीकारी बडी सुन्दर है। घोडो तथा हाथियो की मूर्तिया बडी कारीगरी से बनाई गई हैं। जिस राजा के साथ जितनी रानिया सती हुई उनकी भी मूर्तिया उन राजाओ की मूर्तियो के साथ हैं। यहा छत्रशाल की भी बडी छत्री है जिसके दाह में ६४ रानिया सतिया हुई थी।

छारबाग से आधा मील आगे उत्तार की ओर बाणगगा के तट पर महादेव का प्रसिद्ध छोटासा मन्दिर है। इस मन्दिर के बाहरी मडप मे बायो ओर दीवार मे एक शिलालेख वि० स० १३५४ (ई० सन् १२९७) का बून्दी के राजा विजिपाल देव (विजयपाल देव) का लगा हुआ है। बून्दी के चौहाण राजा विजयपाल देव का समय बताने वाला यह पहला ही शिलालेख है।

केदारनाथ (केदारेश्वर) के पास ही महाराव राजा उम्मेदसिंह हाडा की शिकार बुर्ज नामक दर्शनीय तपोभूमि है। महाराव राजा उम्मेदसिंह ने १७७० मे राज-गद्दी छोडने के बाद राजपूत रिवाज के अनुसार यही अपना निवास-स्थान

राजमहल को पहुँचने के लिये दो दरवाजे हैं। हाथीपोल के दोनों ओर दो पत्थर की हाथियों की मूर्तियाँ हैं जो कि रावराजा रतनसिंह के राज्यकाल में १७ वीं शती के आरम्भ में बनवाये गये थे। इस दरवाजे में एक प्राचीन जलघड़ी भी है। इस दरवाजे से दूसरी ओर मस्तबस के ऊपर दिवानेआम है जो रतनसिंह ने बनवाया था। दिवानेआम के आगे की ओर छत्रसाल का वि० सं० १७०१ (ई० सन् १६४४) का बनवाया छत्र महल है। यहाँ महल में कई सुन्दर चित्र बने हुए हैं। इसके चौक में महाराव रामसिंह की मनशाला है जो कि हथियारशाला कहलाती है। यहाँ पर बूंदी राज्य के कई प्राचीन हथियार भी रखे हुए हैं। यहाँ से शहर का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है।

दिवाने आम के ऊपर की ओर रंगविलास बाग है जहाँ एक चित्रशाला है। इसमें कई धार्मिक ऐतिहासिक व शिकार के १८ वीं शताब्दी के चित्र हैं। इसका एक कोना दिवार से घिरा है। यहीं १८०४ में उम्मेदसिंह का स्वर्गवास हुआ था। राजघराने के लिये यह एक पवित्र कोना है।

शहर के बाहर दक्षिण की ओर अनिरुद्धसिंह की विधवा रानी की बनवाई हुई बावड़ी है। इसके पास ही रावराजा भावसिंह की धा-भाई का वि० सं० १७११ (ई० सन् १६५४) का बनवाया हुआ कुण्ड है।

चौरासी खम्भों की छत्री
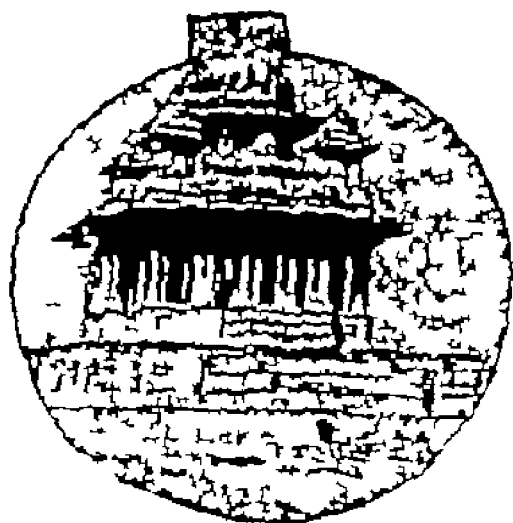
नगर से लगभग १ मील दूर कोटा की सड़क पर रावराजा अनिरुद्धसिंह के धा भाई देवा की याद में बनी चौरासी खम्भों की भव्य छत्री है। यह १६८३ में बनी थी।

कोटा की ही सड़क पर पहाड़ियों से घिरी जैतसागर झील है जिसे मीणा सरदार जैता ने आरम्भ में बंधवाया था। इसी मीणा सरदार जैता से राव देवा ने बूंदी ले लिया था। इस झील को राव सुर्जन की माता गहलोतनी जयवती ने वि० सं० १६२५ (ई० सन् १५६८) में वापस बंधवाया तथा इसको बढ़वाया। इस झील के किनारे पर महाराव राजा विष्णुसिंह ने सुखमहल नामक महल बनवाया।

जिसका सामना यहा के हाडो ने किया। शाही सेना ने मदिर के शिखर का कुछ हिस्सा व कलश को गिरा दिया था। वाद मे मदिर की मरम्मत रावराजा
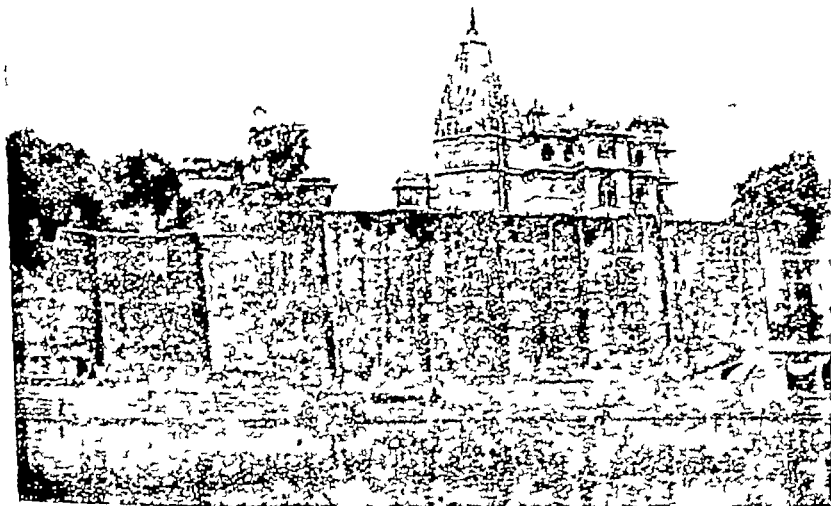
केशोराय पाटण मन्दिर, बून्दी

बुद्धसिह के समय मे हुई। इसी राजा की कछवाह रानी ने सोने का कलश चढवाया था।

मदिर मे अब गणेश की मूर्ति की पूजा होती है। इस मदिर के पास ही जम्बू-द्वीप महादेव का बडा मन्दिर है। इस क्षेत्र को जम्बू-द्वीप या जम्बूकारण्य कहते हैं। इस मन्दिर मे महा शिवरात्रि के दिन एक मेला भरता है। इस मन्दिर की ज्यादातर मूर्तिया सफेदी किये जाने के कारण पहचानी नही जाती है। मदिर के दरवाजे पर ब्रह्मा, विष्णु व शिव की मूर्तिया हैं। गर्भगृह में लिंग है। इस मन्दिर की लगभग सब मूर्तिया सफेदी व प्लास्टर किये जाने के कारण खराब हो गई हैं। अत उनकी कला पर गौर नही किया जा सकता है।

इस स्थान पर भूमि देवरा नामक प्राचीन जैन मन्दिर भी देखने योग्य है। यह मन्दिर भूमि के नीचे बना हुआ है। इसमे तीन नालें हैं। प्रत्येक नाल पर द्वार है जिनके दोनो ओर काले पत्थर की मूर्तिया हैं। सव से नीचे १४ स्तम्भो का मडप है जिसमे काले पत्थर की आदमकद कलात्मक जिन मूर्तिया हैं। कहा जाता है कि चन्द्रवशी राजा हस्ती (जिसने हस्तिनापुर वसाया था) के चचेरे

बनाया था। बाद में यह शिकार गृह बना दिया गया। यहां की महावीर की मूर्ति और रामसहल देखने योग्य है। शिकार बुर्ज से कुछ दूर १२ पहाड़ों का
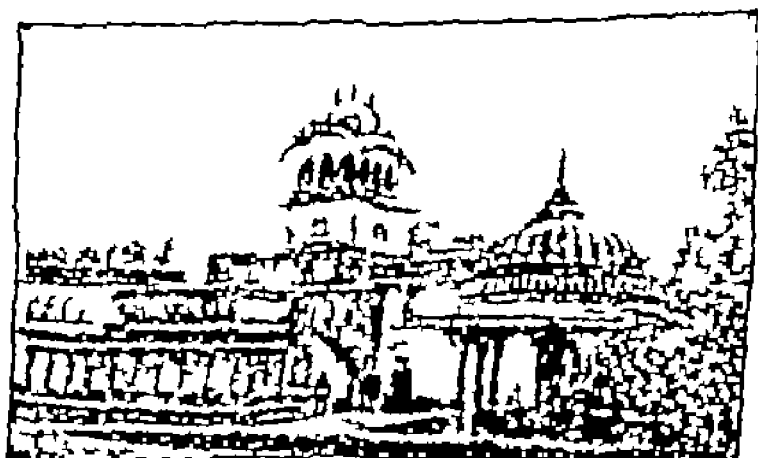
शिकार बुर्ज बून्दी

नाका बांध कर एक बड़ा बांध बनवाया गया है जो पानी से सदा भरा रहता है। यहां शिकार बुर्ज बनी हुई है जहां से शिकार खेला जाता है।

बून्दी से ५ मील उत्तर पश्चिम की ओर पक्की सड़क पर फूलसागर है जहां तालाब महल और बाग देखने योग्य हैं। फूलसागर ई० सन् १६०२ (वि० सं १६५९) में रावराजा भोजसिंह की उप-पत्नी फूललता ने बनवाया था लेकिन बाग आदि बाद में बनवाये गये। यहां का कुंड व छोटे महल छत्री आदि महाराव राजा रामसिंह ने बनवाई थी।

पाटण—यह कस्बा बून्दी से २२ मील पूर्व की ओर तथा कोटा से ९ मील उत्तर-पूर्व में चम्बल नदी के बांये किनारे पर बसा है। यहां केशोराय (विष्णु) का प्रसिद्ध मन्दिर होने से यह केशोराय पाटण भी कहलाता है। यहां ३४५१ मनुष्यों (१९३१ की गणना से) की बस्ती है। यहां के रेल्वे स्टेशन (केशोराय पाटण) का नाम बदल कर अब बून्दी रोड रख दिया गया है। पाटण एक बहुत पुराना कस्बा है और यहां चम्बल के पूर्व वाहिनी होने से इसकी पुराने समय से हिन्दू तीर्थों में गणना की जाती रही है। चम्बल नदी के ऊंचे पक्के घाट पर केशोराय का मन्दिर जिसे रावराजा शत्रुशाल हाड़ा ने सं० १७१५ (ई० सन् १६५८) में बनवाया था। औरंगजेब ने शत्रुशाल को अपने भाई दारा शिकोह का कृपापात्र होने के कारण अपना विरोधी मान लिया था। इस कारण और द्वेष से उसने केशोराय के मन्दिर को गिराने के लिये अपनी सेना भेजी थी

(ई सन् १६४१) के लेख से रन्तिदेव की कथा का भाम होता है। यहा और भी कई प्राचीन स्थान और मन्दिर दर्शनीय है। पाटन नगर प्राचीन तीर्थ होने के कारण बून्दी राज्य मे विशेष महत्व रखता है।

हीन्डोली—यह बून्दी राज्य की पश्चिमी निजामत का मुख्य नगर है, जो बून्दी शहर से १४ मील उत्तर मे अजमेर की सडक पर २५ अश ३५ कला उत्तर अक्षाश और ७५ अश ३० कला पूर्व देशान्तर पर पहाड की तलहटी मे वसा हुआ है। इस नगर को हीन्डा नामक गूजर ने वि० स० १४२५ मे वसाया था। यहा पहले अच्छी आवादी थी। यद्यपि यहा की आवादी अब कम हो गई है फिर भी यह एक प्राचीन कस्बा होने से इसका विशेष महत्व है। यहां पर हीन्डोली के जागीरदार हाडा प्रतापसिंह के बनाये हुए प्राचीन महल तथा वि० स० १६८६ (ई० सन् १६२९) का बना हुआ लक्ष्मीनारायण का मन्दिर दर्शनीय है। हाडा हमीर के पुत्र प्रतापसिंह द्वारा मन्दिर वनाये जाने का एक शिलालेख वि० स० १६८६ (ई० सन् १६२९) का यहा दीवार मे लगा हुआ है। यहा पर १० वी शताब्दी के लगभग की वाराह अवतार की मूर्ति है। पहाडी पर सेवडा छत्री मे वि० स० १०११ भाद्र-पद सुदि ११ (ई० सन् ९५४ की अगस्त १३) का लेख है।

हीन्डोली मे रामसागर नामक बडा तालाब है। जिसे अनुमानत ३०९ वर्ष पूर्व महाजन रामशाह ने बनवाया था। बून्दी के स्वर्गीय महाराव सर रघुवीरसिंह ने तालाव की पक्की पाल तथा एक सुन्दर कोठी तथा बारहदरी आदि बनवा कर हीन्डोली की शोभा बढा दी है। पाल पर से तालाब की शोभा बहुत सुहावनी मालूम होती है। पाल के नीचे एक सुन्दर बाग बना हुआ है। गाव मे हुन्डेश्वर महादेव का प्राचीन मदिर है, जहा शिवरात्रि को अच्छा मेला भरता है। यह मन्दिर जोशी गणेश के पुत्र परशुराम ने वि० स० १६८९ बैशाख शुक्ला ३ (ई० सन् १६६२ ता० १२ अप्रेल गुरूवार) को वनवाया था जैसा कि मन्दिर की दीवार के शिलालेख से प्रकट होता है।

लाखेरी—यह प्राचीन कस्वा बून्दी शहर के उत्तर-पूर्व मे कोटा राज्य से मिला हुआ आडावला पहाड के नीचे वसा हुआ है। इस नगर को लाखा चौहान ने वसाया था। ई० सन् १९१३ मे यहा पर अग्रेज व्यापारी किल्क निकसन एन्ड कम्पनी ने पोर्टलेन्ड सिमेन्ट का कारखाना खोला जिसके कारण से लाखेरी की जन सख्या में अच्छी वृद्धि हो गई है। १९५१ मे लाखेरी सीमेन्ट वर्कस की वस्तो ८,११८ (पु ४१९४, स्त्री ३९२४) और लाखेरी

माई माहेश्वर के राजा रिलदेव* ने इसे बसाया था और पहिले इसका नाम रेन्तदेव पतन था। उस समय यह नगर बहुत दूर तक फैला हुआ था लेकिन किसी कारण से नष्ट हो गया। अब भी प्राचीन स्मारक स्थान २ पर दीख पड़ते हैं। नदी के किनारे की भूमि के खोदने पर पुराने सिक्के व अन्य वस्तुएँ कभी कभी मिल जाती हैं। यहाँ कई पुराने शिव और जैन मन्दिर भी हैं। प्राचीन समय में यहाँ एक विशाल जैन मन्दिर था जिसका अब केवल दरवाजा ही खड़ा है जिसमें अनेक जैन मूर्तियाँ लगी हुई हैं। जैनियों की ला-परवाही से इस स्थान पर आजकल मुसलमानों का अधिकार है जिसे वे मक्का कहते हैं। यहाँ एक मेला कार्तिक पूर्णिमा से ८ दिन तक लगातार भरता है जिसमें दूर-दूर से लगभग ३० ३५ हजार यात्री आते हैं। व्यापार भी खूब होता है। चम्बल नदी के घाट पर सतियों के चबूतरों में पाये जाने वाले शिलालेखों में सब से पुराने लेख वि सं० ५१ (ई० सन् १५) और वि० सं १४६ (ई सन् ८९) के हैं। यह भी कहा जाता है कि इसके बहुत पहले परशुराम नामक किसी व्यक्ति ने जम्बुकेश्वर नामक महादेव का मन्दिर बनवाया था। यह प्राचीन मन्दिर गिर जाने पर वि० स० १६६८ (ई सन् १६४१) में बून्दी नरेश रावराजा शत्रुशाल द्वारा से एक बड़ा मन्दिर फिर से बनवा दिया। इस मन्दिर में केशवराय यानि विष्णु की चतुर्भुजी सफेद पाषाण की मूर्ति है। यह मूर्ति शत्रुशाल मथुरा से लाया था। इस मूर्ति की एक आंख में हीरा है लेकिन दूसरी आंख का हीरा गायब हो गया है। कहते हैं कि जसवन्त राव होल्कर का मूर्ति के दोनों हीरे नहीं भाये। अपनी तरह इस देवता को भी काणा करने के विचार से वह मूर्ति के एक हीरे को निकाल ले गया। वि० स० १७७६ फाल्गुन शुक्ला ७ बुधवार (ई सन् १७२० ता० ५ मार्च) के दिन महाराव राजा बुद्धसिंह द्वारा की पटरानी गढ़वाही ने मन्दिर पर सोने का कलश चढ़ाया। यह वि सं १७७६ फागण शुक्ल ७ बुधवार (ई० सन् १७२० की ५ मार्च) के लेख जो मन्दिर में लगा हुआ है से ज्ञात होता है। यहाँ एक चबूतरे पर प्राचीन पंचमेल निर्मित पाँच लिंग और नंदी है जो पांडवों के स्थापित किये हुए बताये जाते हैं। अन्य दर्शनीय स्थान परशुराम घाट सरस्वती नीलकंठ महादेव आदि हैं। छत्री में गोपालजार बल्लभ की मूर्ति है जिसकी चरणपादुका पर वि० सं० १६ ६ माघ [illegible] २ (ई सन् १५५ का ६ जनवरी शनिवार) का लेख है। इसी तरह इसी में भगवान् चतुर्भुज की श्यामवर्ण की मूर्ति है। उसी वि० सं० १६६८

*रन्तिदेव का जिसे बसाने और बसाने वाले राजा को यहां राजा रन्तदेव कहा जाता है।

(ई सन् १६४१) के लेख से रन्तिदेव की कथा का भास होता है। यहा और भी कई प्राचीन स्थान और मन्दिर दर्शनीय हैं। पाटन नगर प्राचीन तीर्थ होने के कारण बून्दी राज्य मे विशेष महत्व रखता है।

हीन्डोली—यह बून्दी राज्य की पश्चिमी निजामत का मुख्य नगर है, जो बून्दी शहर से १४ मील उत्तर मे अजमेर की सडक पर २५ अश ३५ कला उत्तर अक्षाश और ७५ अश ३० कला पूर्व देशान्तर पर पहाड की तलहटी मे बसा हुआ है। इस नगर को हीन्डा नामक गूजर ने वि० स० १४२५ मे बसाया था। यहा पहले अच्छी आबादी थी। यद्यपि यहा की आबादी अब कम हो गई है फिर भी यह एक प्राचीन कस्बा होने से इसका विशेष महत्व है। यहा पर हीन्डोली के जागीरदार हाडा प्रतापसिह के बनाये हुए प्राचीन महल तथा वि० स० १६८६ (ई० सन् १६२९) का बना हुआ लक्ष्मीनारायण का मन्दिर दर्शनीय है। हाडा हमीर के पुत्र प्रतापसिह द्वारा मन्दिर बनाये जाने का एक शिलालेख वि० स० १६८६ (ई० सन् १६२९) का यहा दीवार मे लगा हुआ है। यहा पर १० वी शताब्दी के लगभग की वाराह अवतार की मूर्ति है। पहाडी पर सेवडा छत्री मे वि० स० १०११ भाद्र-पद सुदि ११ (ई० सन् ९५४ की अगस्त १३) का लेख है।

हीन्डोली मे रामसागर नामक बडा तालाब है। जिसे अनुमानत ३०९ वर्ष पूर्व महाजन रामशाह ने बनवाया था। बून्दी के स्वर्गीय महाराव सर रघुवीरसिह ने तालाब की पक्की पाल तथा एक सुन्दर कोठी तथा बारहदरी आदि बनवा कर हीन्डोली की शोभा बढा दी है। पाल पर से तालाब की शोभा बहुत सुहावनी मालूम होती है। पाल के नीचे एक सुन्दर बाग बना हुआ है। गाव मे हुन्डेश्वर महादेव का प्राचीन मदिर है, जहा शिवरात्रि को अच्छा मेला भरता है। यह मन्दिर जोशी गणेश के पुत्र परशुराम ने वि० स० १६८९ बैशाख शुक्ला ३ (ई० सन् १६६२ ता० १२ अप्रेल गुरूवार) को बनवाया था जैसा कि मन्दिर की दीवार के शिलालेख से प्रकट होता है।

लाखेरी—यह प्राचीन कस्बा बून्दी शहर के उत्तर-पूर्व मे कोटा राज्य से मिला हुआ आडावला पहाड के नीचे बसा हुआ है। इस नगर को लाखा चौहान ने बसाया था। ई० सन् १९१३ मे यहा पर अग्रेज व्यापारी किल्क निकसन एन्ड कम्पनी ने पोर्टलेन्ड सिमेन्ट का कारखाना खोला जिसके कारण से लाखेरी की जन सख्या में अच्छी वृद्धि हो गई है। १९५१ में लाखेरी सीमेन्ट वर्कस की वस्ती ८,११८ (पु ४१९४, स्त्री ३९२४) और लाखेरी

म्यूनीसिपलीटी की बस्ती ४८६४ (पु २५८४ स्त्री २३०६) की। इस कारखाने से २४०० टन सीमेन्ट का उत्पादन प्रतिमास होता है। लाखेरी पश्चिमी रेल की बड़ी लाइन (नागदा मथुरा मार्डन) का स्टेशन है। लाखेरी के पास बहुत मच्छे होते हैं। यहां तारण धाम की बावड़ी अत्यन्त सुन्दर है। यहां से एक दर्रा इन्द्रगढ़ को जाता है।

लाखेरी से ४ मील दूर उत्तरी सरहद के पहाड़ पर एक मजबूत किला बना हुआ है जिसे गुगेर का किला कहते हैं।

बड़माला—बून्दी से ११ मील उत्तर की ओर मेज नदी के किनारे २५ अंश ३५ कला उत्तर अक्षांश और ७५ अंश ४ कला पूर्व देशान्तर पर बसा हुआ यह एक बड़ा गांव है। यहीं पर वि स १८०१ में बून्दी नरेश महाराव राजा उम्मेदसिंह और महाराजा ईश्वरसिंह का एक भारी युद्ध हुआ था। इसी युद्ध में बून्दी की सेना हारी थी। यहां पर संवत् १५१६ वि० (१४५९ ए डी) का एक दिगम्बर सम्प्रदायका जैन मन्दिर तथा सोलंकिया की छत्रियां हैं जिनमें से एक पर संवत् १६२३ का लेख है। दो छतियों के चबूतरे पर स १५४१ (१४८९) और सं (१५६६) १६६१ (१६०२) के लेख हैं। यहां के रावजी का गढ़ बड़ा अच्छा बना हुआ है।

दुगारी—यह बून्दी राज्य का एक जागीरी कस्बा है जिसे महाराव राजा उम्मेदसिंह ने वि संवत् १८२१ में अपने छोटे पुत्र सरदारसिंह को जागीर में दिया था। यह बून्दी राज्य में सबसे बड़ा ठिकाना है। यहां पर कनकसागर नामक तालाब ६ वर्ग मील के विस्तार में है जो रावराजा भोजू की रानी कनकावती का बनवाया हुआ है। पहाड़ी के टीले पर जनेश्वरनाथ महादेव का शिखरबंद मन्दिर है जिसके स्तम्भ पर संवत् ११९२ का लेख है। चतुर्भुज का शिखर बंद मन्दिर रावराजा भोजू (१०५५) की रानी कनकावती का बनवाया हुआ है।

नटकड़—यह बून्दी से १६ मील पूर्व को है। इस ओर चौर पुरा ज्यादा होने से इसका नाम नैणगढ़ पड़ गया। नैगढ़ से नटकड़ नाम पड़ा। यहां की पहाड़ी पर राव समुन्दर ने धूधला जोगी का एक मन्दिर बनवाया था। धूधला जोगमनाथ का अवतार कहा जाता है। मन्दिर में धूधला की मूर्ति है और उसपर वि स १२७१ मगहण शुक्ला १ का लेख खुदा है।

यहां के खण्डहरों से ज्ञात होता है कि यह कभी घनी बस्ती रही होगी। यहां एक महादेव का शिखर बन्द मन्दिर है।

वि स १२०१ (ई सन् ११४४) मे पीलपिजर खीची ने खटकड को जीता था। इसी का वंशज राव मल्ला मांडू के बादशाह होशंग शा से लड़ता हुआ मारा गया था। तब खटकड पर मांडू वालो का राज्य हो गया। बादमें राणा सांगा के समय यह हाडो के अधिकार मे आया।

नैणवा—यह भी एक पुराना कस्बा है और बून्दी से लगभग २८ मील पूर्वोत्तर में २५ अंश ४६ कला उत्तर अक्षांश तथा ७५ अंश ५१ कला पूर्व देशान्तर पर बसा हुआ है। यह नैणवा व हिन्डोली तहसीलो से बने सब डिवीजन का मुख्य कार्यालय है। इस सुन्दर नगर की जनसंख्या वि स २००७ (ई सन् १९५१) मे ५७४६ थी। यह नगर चारो ओर शहर पनाह और कोट से घिरा हुआ है तथा यहा एक सुदृढ किला भी है। नगर के पूर्वोत्तर और दक्षिण पश्चिम में तीन तालाब है, जिनमे सबसे बडा नवल सागर है, जिसे नवलसिह सोलंकी नामक सरदार ने बनवाया था। यहा पर एक छोटा सा परन्तु सुन्दर महल बना हुआ है।

बून्दी का राजनैतिक इतिहास

चौहानो की उत्पत्ति—भारतीय राजनैतिक क्षेत्र पर चौहानो का उत्थान काल आठवी सदी से लेकर सम्राट् पृथ्वीराज चौहान (वि स १२३६ ई सन् ११९२) मौहम्मद गोरी (वि स १२४९ ई सन् ११९२) द्वारा हार तक का समय स्वीकार किया जाता है। कालान्तर मे मुसलमान काल मे चोहानो ने अपने छोटे-छोटे राज्यो के सामन्ती आधार सिद्धान्त के अनुसार राज्य करना प्रारम्भ किया। वे पुनः कभी अखिल भारतीय राजनीति के मुखिया नही बन सके। मुगलो के समय हाडो शाखा के चौहानो ने मुगल साम्राज्य को शक्ति

शाली बनाने में पूर्ण सहयोग देकर एक प्रभावशाली राजपूत शक्ति बनाने का प्रयास किया परन्तु उसी समय हाड़ा चौहानों में विभाजन हो गया। चौहान राजपूतों की २४ शाखाओं[¤] में से सब से महत्वपूर्ण हाड़ा चौहान शाखा रही है।[*] इन हाड़ों का मुख्य केन्द्र बून्दी था परन्तु संवत् १६८१ में माधोसिंह हाड़ा ने कोटा में स्वतंत्र हाड़ा राज्य स्थापित कर लिया।[†] इस प्रकार हाड़ा चौहानों की शक्ति के विभाजन से उनकी गृह कलह की घटनाएँ बढ़ गई। मराठी युग (सन् १७१४–१८१८) में बून्दी व कोटा के हाड़ा राजपूताना के राजनैतिक रंगमंच पर प्रविष्ट होने लगे। राजस्थान में मराठों का प्रवेश बून्दी व कोटा के गृह-कलह के परिणाम स्वरूप हुआ। राजपूताने के इतिहास में चौहानों का इतिहास बहुत ही महत्वपूर्ण है।

उत्पत्ति—चौहान राजपूतों की उत्पत्ति के बारे में इतिहासज्ञों में कई मत प्रचलित है। इन मतों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

(१) चौहान अन्य राजपूतों की तरह सूर्य्य-वंशी या चन्द्र-वंशी क्षत्रिय है।

(२) अग्नि कुल के वंशज है।

(३) विदेशी हूण सिथियन ससेनियन आदि की भारतीय मिश्रित जाति की सन्तान है।

(४) ब्राह्मण से क्षत्रिय परिवर्तित है।

इतिहासज्ञों ने इस विषय के बारे में निश्चित तौर पर तथ्यों के आधारभूत विश्वासों के साथ कोई निर्णय नहीं दिया है यद्यपि डा. दशरथ शर्मा ने इस ओर निर्णयात्मक रूप में अपने विचारों को रखा है।

सूर्य्यवंशी चन्द्रवंशी—विक्रम सं. १०३ से १६ तक (९७१ ई. से १५८१ ई.) कोई शिलालेख या तथ्यपूर्ण साहित्यिक सामग्री प्राप्त नहीं हुई है जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि चौहानों की उत्पत्ति अग्निकुंड से हुई है।[§] उस समय तक सभी चौहान राजपूत अपने को सूर्य्यवंशी कहते थे। अजमेर

¤ सोमपरा शिवी देवड़ा हाड़ा मोहिल मालण चीवा चाहिल बोड़ा निर्वाण

* टाड एनाल्स एण्ड एन्टीक्यूटीज आफ राजस्थान जिल्द १ पृ. २४४१

† डा. मथुरालाल शर्मा कोटा राज्य का इतिहास जिल्द १ पृ. ९७

‡ टाड एनाल्स एण्ड एन्टीक्यूटीज आफ राजस्थान जिल्द

§ रेऊ भारत के प्राचीन राजवंश जिल्द १ पृ. २५

मे ढाई दिन के झोपडे से प्राप्त एक नाट्य-काव्य लेख* के अनुसार चौहान सूर्य्य-वशी कुल के हैं। ऐसे ही 'पृथ्वीराज विजय काव्य' मे चौहानो को सूर्य्यवशी लिखा है। यह काव्य अन्तिम भारतीय-सम्राट् पृथ्वीराज के समय का बना हुआ कहा जाता है। इसके प्रथम सर्ग में लिखा है कि 'ब्रह्माजी ने पुष्कर की रक्षा के लिए विष्णु से प्रार्थना की। इस पर विष्णु ने सूर्य्य की ओर देखा। तब सूर्य्य मडल से एक धनुर्धारी पुरुष का आविर्भाव हुआ और उसने राक्षसो को मार भगाया। वही पुरुष अन्त मे चाहमान नाम से प्रसिद्ध हुआ।" चुनार किले मे बून्दी के महाराव सुर्जनसी का बनवाया हुआ 'सुर्जन चरित्र' नामक ग्रन्थ मिला है उसमे भी चौहानो को सूर्य्यवशी लिखा है। 'हमीर महाकाव्य' के रचयिता नयचन्द्र सूरि ने चौहानो की उत्पत्ति के बारे मे इस बात पर ध्यान आकर्षित किया है कि ब्रह्मा से साम्राज्य प्राप्त करके चाहमान ने अन्य शासको पर उसी प्रकार राज्य किया जैसे उसका प्रधान पूर्वज सूर्य्य, पर्वतो पर राज्य करता है।†

कुछ अभिलेखो से यह ज्ञात होता है कि चौहान चन्द्रवशी थे। देवडा चौहान शासक राव लूम्बा के समय के एक शिलालेख‡ मे लिखा हुआ है कि सूर्य्य और चन्द्रवश के अस्त हो जाने पर, जब संसार मे उत्पात आरम्भ हुआ, तब वत्स ऋषि ने ध्यान किया। उस समय वत्स ऋषि के ध्यान और चन्द्रमा के योग से एक पुरुष उत्पन्न हुआ जो चन्द्रवशी कहलाया।" जेम्स टाड को हासी किले से एक शिलालेख मिला था। यह चौहान राजा पृथ्वीराज द्वितीय का है§ इस लेख मे इनको चन्द्रवशी लिखा है। इसी तरह मेवाड मे बिजोलिया ग्राम के वि० स० १२२६ के एक शिलालेख¶ के अनुसार तथा जोधपुर राज्य के जसवन्तपुरा मे सू धा माता के मन्दिर के चौहान चाचिरादेव के वि० स० १३१९ (ई० सन् १२६३) के लेख मे चौहानो को वत्सगोत्री लिखा है।

अग्निवंशी—चौहानो का अग्निवशी होने का सर्व प्रथम उल्लेख 'पृथ्वीराज रासो' नामक महाकाव्य मे प्राप्त होता है। चन्दवरदाई ने चौहानो की उत्पति के बारे में लिखता है कि आबू पर्वत पर वशिष्ठ मुनि ने यज्ञ किया। यज्ञ मे

---

* डाक्टर मथुरालाल शर्मा का विश्वास है कि ढाईदिन का झोपडा पहले सरस्वती मन्दिर था जिसे वीसलदेव चतुर्थ ने १२१० वि० स० ने निर्मित किया। इस का शिलालेख का एक अश अजमेर अजायबघर में रखा है।

† (१३९३-१४०३ सन् के बीच)

‡ आबूपर्वत पर अचलेश्वर महादेव के मन्दिर का वि० स० १३७७ (१३२० ई०) शिलालेख

§ सन् ११६७ ¶ चौहान सोमेश्वर देव का

दैत्यों ने बाधा डाली तब वशिष्ठ ने यज्ञ रक्षा के लिए प्रतिहार चालुक्य, परमार और चहुमाण नामक क्षत्रिय योद्धाओं को यज्ञवेदी से उत्पन्न किया। इन्हीं योद्धाओं के वंशज पड़िहार सोलंकी परमार और चौहान कहलाए*। बून्दी राज्य के राज-कवि श्री सूर्य्यमल्ल मिश्र ने अपने वंश भास्कर में पृथ्वीराज रासो की चौहानों की उत्पत्ति की कहानी को स्वीकार कर लिखा कि वशिष्ठ के प्रार्थना पर ब्रह्मा ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर अग्निकुण्ड आहुति डाल कर चौहानों को उत्पन्न किया था †। 'वंश प्रकाश' का मत वंश भास्कर पर आधारित है। उसमें उल्लेख है कि कलियुग के १ वर्ष के अनुमान बीतने पर बौद्धों का मत बहुत फैल गया और वेद के मानने वाले कम रह गए और दैत्य भी बढ़ गए इस वास्ते वशिष्ठ ऋषि ने बौद्धों के मत के खंडन और दैत्यों को मारने और वेद का मत चलाने के लिए आबू पहाड़ पर यज्ञ किया। उस यज्ञ के अग्निकुण्ड में से चार क्षत्रिय पैदा हुये पहले प्रतिहारजी जिनको पड़िहारजी दूसरे चालुक्यजी जिनको सोलंखीजी तीसरे प्रामारजी जिनको पवारजी और चौथे चाहुवाणजी जिनको चौहाणजी भी कहा करते है ‡।

पृथ्वीराज रासो तथा वंश भास्कर के विश्वासों को राजपूत शासकों ने मान्यता दी है। 'सूर्य्यवंशी' के बदले राजपूतों ने अपने आपको 'अग्नि वंशी' कहना प्रारम्भ किया। अग्निवंशी स्वीकार करते हुए भी उपरोक्त ग्रंथों में इन राजपूतों का सूर्य्यवंशी होना स्पष्ट मालूम होता है। 'रासो' में क्षत्रियों का तीन भागों में विभक्त किया है 'रघुवंशी चन्द्रवंशी और यादववंशी। इस अग्नि कुल में उत्पन्न होने वाले कुलों को सूर्य्यवंश में होना बतलाया है§। इसी प्रकार सूर्य्यमल मिश्र ने अपनी कृति में इस बात को स्वीकार किया है कि कुछ लोग अग्नि वंशी क्षत्रियों को सूर्य्यवंशी भी मानते है। दोनों एक ही वंश है¶ इस दृष्टि से अग्नि कुल के क्षत्रिय सूर्य्यवंशी या चन्द्रवंशी है।

चौहान विदेशी मिश्रित सन्तान—कर्नल टाड ने भाटों और चारणों की कथाओं को कल्पना मात्र मानकर उनके कथनों को सत्य रूप देने के लिए इस

---

* पृथ्वीराजरासो आदिपर्व पृ ४१२१   † वंश भास्कर पृ ६१–६४

‡ वंश प्रकाश पृष्ठ संख्या २ यह कथा 'कालिन्दि का प्रकाश' से उद्धृत की गई प्रतीत होती है जिसमें लिखा है कि कलियुग १ वर्ष बीत जाने पर यवन लोग प्रजा को सतावेंगे तब यज्ञ कुण्ड से उत्पन्न क्षत्रिय उनकी रक्षा करेंगे। श्यामलदासकृत 'वीर विनोद' में इस बात का उल्लेख भी है कि उसी यज्ञ मंडप में केले का पेड़ खड़ा किया था उसके फूल के डोडे से एक राजपूत पैदा किया जिसका नाम डोडिया हुआ।

§ पृथ्वीराज रासो आदिपर्व पृ ५४   ¶ वंश भास्कर प्रथम भाग पृ ८७

बात को तथ्यपूर्ण बतलाया है कि अपनी रक्षा के लिए ब्राह्मणो ने युद्ध-प्रिय विदेशी जातियो को शुद्ध करके आर्य्य धर्म मे सम्मिलित किया हो या आदिवासी शूद्र जातिया हो जिन्हे मत्र और आहुति द्वारा शुद्ध किया गया हो। आगे चलकर टाड ने इन्हे सिथियन आक्रमणकारियो की सन्तान के रूप मे स्वीकार किया है।* विन्सेन्ट स्मिथ अपनी पुस्तक अर्ली हिस्ट्री ऑफ इन्डिया मे इन अग्निकुल क्षत्रियो को हूण गुर्जरो के वशज बताता है।† गुर्जर प्रतिहारो के लिए जेम्सकेम्वेल और डाक्टर देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर का यह विश्वास है कि ये लोग बाहर से आई हुई खजर जाति के है जो भारत मे प्रवेश करने के वाद गूजर कहलाने लगे।‡

भाटो की ख्यातो मे हूणो की गणना राजपूत वशो मे की गई है।§ हूणो ने जब भारत पर आक्रमण किया तो वे यही बस गए। उन्होनें हिन्दू-धर्म स्वीकार किया तथा स्थानीय शासको से वैवाहिक सम्वन्ध स्थापित करने लगे। हूण लोगो ने शैवधर्म स्वीकार कर लिया।¶ इन्ही की सन्तानें राजपूतो के रूप मे प्रगट हूई। जो इतिहासकार इन्हे विदेशी मिश्रित स्वीकार करते है उनके निम्नलिखित आधार हैं—(१) अग्नि द्वारा शुद्ध किए हुए वे विदेशी है जिनकी आवश्यकता ब्राह्मणो को उस काल मे मालूम हुई जब कि उनके प्रभाव से हिन्दू वर्ग मुक्त होता जा रहा था। (२) कन्नोज के प्रतिहारो को गुर्जर माना जाता है और गुर्जरो को कनिघम यू-ची मानता है। अत गुर्जर प्रतिहार राजपूतो के पूर्वज विदेशी थे। (३) राजपूतो का उत्थान काल—हूण भारत में ७ व ८ वी शताब्दी मे आए। उनके आने के बाद एक सदी बाद राजपूतो का उदयकाल प्रारम्भ होता है। उस समय के पहले ही प्राचीन क्षत्रियो की परम्पराएँ नष्ट हो गई थी अत नई राजपूत जातियो के उदय का प्रारम्भ किसी नई परिस्थितियो को अकित करता है। वे परिस्थितिया विदेशी प्रभाव से उठ खडी हुईं।

चौहान प्राचीन रघुवशी क्षत्रिय है—वास्तव मे इन राजपूतो की उत्पत्ति की मूल कथा ही एक किवदती मात्र है। 'अग्निकुल' का सिद्धान्त 'पृथ्वीराज रासो', 'वश भास्कर' आदि ने प्रचलित किया। दोनो पुस्तको मे 'कालिन्दिका प्रकाश'

---

* टॉड एनल्स एन्ड एन्टीक्वीटिंग जिल्द ३, पृ० १४४५

† पृष्ठ सख्या ४२६

‡ भण्डारकार-गुर्जर (J Bo Br R A S Vol xx)

§ ओझा राजपूताने का इतिहास प्रथम जिल्द पृष्ठ ८५

¶ मन्दसौर अभिलेख जिसमें हुण शासक मिहिर कुल को शिवभक्त लिखा है।

से प्रेरित होकर उसके अनुसार लिख दिया गया है। ये तीनों ग्रंथ बिना किसी महत्वपूर्ण तथ्य के इस कथा को गढ़ देते हैं। रासो तथा कालिन्दिका प्रकाश दोनों ही प्राचीन ग्रन्थ नहीं है।* रासो का मूल भाग चन्द बरदाई का लिखा हुआ होगा लेकिन उसका ज्यादातर भाग १७ वीं शताब्दी के बाद लिखा गया माना जाता है।† यह ग्रन्थ ऐतिहासिक दृष्टि से प्रमाणिक नहीं माना जा सकता है क्योंकि इसमें ज्यादातर काव्य कल्पनाएँ तथा ऐतिहासिक भूलें हैं। इसके अलावा रासोकार स्वयं स्वीकार करता है कि अग्निकुल से उत्पन्न हुए कुल सूर्यवंशी थे। कन्नौज के प्रतिहार गुर्जरों को विदेशी स्वीकार कर लेने से यह सिद्ध नहीं हो सकता कि चौहान भी विदेशी थ। कुछ इतिहासकारों ने राजपूत जन्यकाल के आधार पर राजपूतों व हूणों को एक ही वंश का स्वीकार किया है। तीसरी व चौथी शताब्दी के पश्चात् क्षत्रियों की परम्परा का नष्ट हो जाना स्वीकार किया जा सकता है परन्तु यह मान लेना कि क्षत्रिय वंश के शासक सदा के लिए नष्ट हो गए ठीक प्रतीत नहीं होता है। चौथी शताब्दी से आठवीं शताब्दी तक प्राचीन क्षत्रिय शासक अखिल भारतीय राजनीति में प्रभावशाली तो नहीं रह सके परन्तु यदा कदा प्रान्तीय व क्षेत्रीय-स्तर पर बने अवश्य रहे। चित्तौड़ में बापा रावल के पहले मोरि क्षत्रिय थे।‡ गुप्तकाल में§ और हर्ष के समय क्षत्रिय राज्य तंत्र थे। हूणों व सिथियनों से शादी सम्बन्ध के कारण इन कुलों को विदेशी कहना पर्याप्त नहीं स्वीकार किया जा सकता है। चौहान वंश के शासक इसी प्रकार एक क्षेत्रिय क्षत्रिय हों जो अखिल भारतीय राजनीति में प्रभावशाली न रहे हों। बाद में चौहानों का कोई नव प्राचीन चमहान शासक रहा हो जिसकी परम्परा को लेकर उस वंश का नाम चौहान पड़ा ऐसा विश्वास स्वीकार कर लिया गया है।¶

---

* डा. मथुरालाल शर्मा कोटा राज्य का इतिहास भाग १ पृष्ठ ५४

† सी. वी. वैद्य हिस्ट्री ऑफ मेडिवियल हिन्दू इण्डिया जिल्द २ पृष्ठ १९

‡ कुमारपाल प्रबन्ध

§ समुद्रगुप्त ने जिन शासकों को हराया वे सब क्षत्रिय थे।

¶ चौहानों की उत्पत्ति के बारे में गुणनीदेव के पचनेरवार अभिलेख के आधार पर कि चौहान सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी थे यह सिद्धान्त लुप्त हो जाता है। सूर्यवंशी व चन्द्रवंशी व्याख्या सिर्फ दो बातों को स्पष्ट करती है कि (१) चौहान वंशीय (जातीय) (triballv) रूप में पौराणिक चन्द्र और सूर्यवंशीय क्षत्रियों से सम्बन्धित नहीं है। (२) चौहानों को क्षत्रिय-पद बहुत काल बाद प्राप्त हुआ सम्भवतः यह पद गैर हिन्दुओं के विरुद्ध लड़कर हिन्दूधर्म की रक्षार्थ प्राप्त हुआ।

डाक्टर भण्डारकर का मत कि चौहान खजर जाति के वंशज थे सत्य प्रतीत नहीं

होता है। डाक्टर भण्डारकार ने वसुदेव वहमन के सिक्को के आधार पर यह निर्णय दिया कि इन सिक्को के मुख्य भाग में जो उक्ति अकित है वह सेसेनियन पहलवी भाषा में है। 'सफ वरसु तेफ श्री वसुदेव' आन्तरिक वृत मार्जिन (हाशिए में) मे 'सफ वरसु तेफ वहमान मुल्तान मल्का' और दूसरी ओर में श्री वासदेव (नागरी लिपि में अकित है और पहलवी उक्ति) तुकान जालीस्तान स्पर्दक्षरण है। डाक्टर भण्डारकार ने 'व'(V) और 'च' (CH) को प्राचीन भारत की, (सातवी–आठवी सदी) नागरी लिपी के अनुसार समान शब्द स्वीकार किया है और 'वासुदेव वहमान' के स्थान पर 'वासुदेव चहमान' सही शब्द स्वीकार करके "चहवाण" के वशज 'चौहानो' की उत्पति इस प्रकार खजर जाति (विदेशी) स्वीकार किया है। वासुदेव के बारे में उनका कहना है कि इस सिक्के में जो वासुदेव उल्लेखित है वह वासुदेव 'पृथ्वीराज विजय' व 'प्रबन्धकोष' मे उल्लेखित वासुदेव ही है। प्रबन्ध कोष में जो उसकी तिथि वि० स० ६०८ दी गई वह गल्त थी वास्तव में सिक्के के आधार पर तिथि वासुदेव की तिथि वि० स० ६२७ होनी चाहिए। डा० दशरथ शर्मा अपनी पुस्तक चौहान डायनेस्टी पृष्ठ ८ मे डाक्टर भण्डारकर के मत का खण्डन करते हुए इस पर सन्देह करते हैं कि 'वासुदेव' का नाम ही सिर्फ नागरीलिपि में है बाकी उक्ति ससेनियन पहलवी लिपि में है जिममें 'व' (V) और 'च' (CH) एक नही भिन्न-भिन्न है। इस प्रकार वहमान के स्थान पर 'चहवाण' पढा नही जा सकता है।

डाक्टर भण्डारकार चौहानो को विदेशी जाति के ब्राह्मण वर्ग को इस आधार पर स्वीकार करते हैं। (१) वासुदेव के बाद प्रथम शासक जो मूल आधार स्त्रोत में मिलता है उसका नाम समन्त है। उसे बिजोलिया अभिलेख मे वत्सगौत्र का ब्राह्मण कहा गया है। (२) कविराज शेखर की चौहान स्त्री से शादी इस आधार पर सत्य मानी जा सकती है कि चौहाण ब्राह्मण थे।

यह मत अर्द्ध रूप से स्वीकार किया जा सकता है कि चौहान ब्राह्मण थे पर विदेशी ब्राह्मण नही थे। यह मत डा० भण्डारकार के तथ्यो के आधार पर नही बल्कि बिजोलिया अभिलेख की उक्ति विप्र श्री वत्सगोत्रभूत से स्वीकार किया जा सकता है (कविराज श्यामलदास ने इसे 'विप्र श्री वत्सगोत्रभूत पढा है) यह कि चहमान वत्स गौत्रीय ब्राह्मण था इसकी सत्यता 'क्यामखान रासो' जानकृत से मालूम होती है। जान एक चौहानवशीय कँमखानी था जो १८ वी शताब्दी के मध्यकाल में हुआ। वह पृष्ठ ४ पर लिखता है चाहुवान है जगत में ते सव वछरूगोत।४६। चाउ भयो सुत वध को ।

अत जान चहवाण को जामदाग्न गोत्र के वत्स का वशज लिखता है (ऋषि वत्स की आँख से उत्पन्न। चौहाण गोत्रच्छारा उन्हें वत्सगोभिन वतलाता है। जालोर के चौहाणो के सु धा अभिलेख और चन्द्रावती के चौहाणो का अच्लेश्वर अभिलेख इस मत का समर्थन करता है अत शाकम्भरी का सामन्त व उसके पूर्वज, पह्लवों, कादम्वो और गुहिलोतो की तरह ब्राह्मण थे जिन्हे परिस्थितिवश ब्राह्मणत्व को त्याग कर क्षत्रिय वश में प्रवेश करना पडा। डा० दशरथ शर्मा अर्ली चौहान डाइनेस्टी पृष्ठ ९–१०

राजनैतिक इतिहास

(अ) चौहानों का प्रारम्भिक इतिहास—चौहान वंश का मूल पुरुष चाहमान माना जाता है* इसी शासक के नाम से चौहान इसके वंशज कहलाने लगे क्योंकि चौहान चवहाण का अपभ्रंश है। यह चवहाण शासक कब हुआ किस स्थान पर यह राज्य करता था यह निश्चित तौर पर अभी ज्ञात नहीं हो पाया है। *वंश भास्कर में सूर्य्यमल्ल ने चवहाण व उसके पीछे ३६ राजाओं का शासन करने का* उल्लेख किया है।† पृथ्वीराज विजय के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चहुमान अति शक्तिशाली शासक था और उसके छोटे भाई धनंजय के नेतृत्व में चहवाण ने समस्त भारत पर अधिकार किया और अन्तिम समय में चहवाण धार्मिक केन्द्रों की यात्रा करता हुआ पुष्कर में मृत्यु को प्राप्त हुआ।‡ शिलालेखों के आधार§ पर चहमाण वंशजों के प्रारम्भिक शासक [illegible]

---

* एपिग्राफिया इण्डिया जिल्द २६ पृष्ठ संख्या ६। पृथ्वीराज विजय सर्ग २ श्लोक ८२, कयाम खाँ रासो

† 'वंशभास्कर' भाग २ पृष्ठ ५१८ २२
चौहानों का प्रारम्भिक वंश क्रम में वि. सं. ८१३ की हांसोट प्लेट से प्राप्त होता है। यह अभिलेख भर्तृवड्ढ द्वितीय जो कि भृगुकच्छ का चौहान शासक था का है। उसके पहले ४ पूर्वज हो चुके थे। प्रथम शासक का नाम राजन महेश्वरदाम था—भर्तृवड्ढ द्वितीय की तिथि ७१६-७१८ है यह नागभट परिहार (ई. सन् ७२४-७४५) का सामन्त शासक था और अनिरुद्ध विक्रम का समकालीन था। डा. दशरथ शर्मा का अर्ली चौहान डायनेस्टी पृ. १४

‡ पृथ्वीराज *विजय सर्ग* २

§ हर्षनाथ (शेखावटी) का शिलालेख वि. सं. १ १ की आषाढ़ सुदि १५ (ई. सन् ९७३)

मे राज्य* करते थे। हर्षनाथ के मन्दिर के शिलालेख मे राजा गुवक से विग्रहराज तक की वशावली दी गई है। बिजोलिया शिलालेख† के आधार पर सामन्तदेव से सोमेश्वर देव तक की वशावली प्राप्त की जा सकती है। दोनो शिलालेखो मे गुवक से दुर्लभराज तक आठ राजाओ की वशावली समान है। दुर्लभराज के पिता विग्रहराज की मृत्यु वि० स० १०३० (ई० सन् ९७३) मे हुई। इस तिथि के आधार पर तथा प्रत्येक शासक का काल पन्द्रह वर्ष का स्वीकार किया जाय‡ तो गुवक का राज्यकाल वि० स० ९२५ (ई० सन् ८६८) के लगभग आता है। ९ वी शताब्दी के मध्यकाल मे चवहाणो का शासन नागोर क्षेत्र मे होना प्रतीत होता है।

पृथ्वीराज विजय मे इस बात का उल्लेख है कि वासुदेव§ ने शाकभरी (साभर) झील पर अधिकार कर लिया। इसीसे इसके वशज शाकम्भरीश्वर कहलाये। वासुदेव के बाद सायन्तदेव, जयराज, विग्रहराज और दुर्लभराज क्रमश राजा हुये। इन शासको के बारे मे कुछ विशेष महत्व पूर्ण तथ्य ज्ञात नही हो पाया है।

---

* डाक्टर मथुरालाल शर्मा ने अपने कोटा राज्य के इतिहास (जिल्द १ पृष्ठ ५०) में अहिछत्र नागौर को माना है। प० विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने अहिछत्र को उत्तरी पाचाल की राजधानी माना है। समुद्रगुप्त के अलाहाबाद प्रशस्ति में अकित अहिछत्र क्षेत्र डाक्टर राधा कुमुद मुखर्जी के अनुसार (Gupta Empire) गगा जमुना दोआब का उत्तरी भाग रहा है। अहिछत्र बरेली से २० मील पश्चिम में राम नगर के पास है।

डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा ने नागोर को ही अहिच्छत्र मानकर इस बात का उल्लेख किया है कि साभर पहुँचने के लिए वहाँ से एक दिन की यात्रा करनी पडती है।

नागोर और अहिच्छत्र एक ही है यह सत्य प्रतीत नही होता है क्योकि जैनतीर्थों में नागोर का नाम तो है पर अहिच्छत्रपुर का नाम नही। यह स्थान साभर के पास ही होना चाहिए क्योकि पृथ्वीराज विजय के अनुसार वासुदेव रात को शाकम्भरी मन्दिर में सोया। उषाकाल में उठा और सूर्य्य उदय होने के पहिले ही वह राजधानी (अहिच्छत्रपुरा) को पहुँच गया।

विजोलिया अभिलेख के अनुसार अहिच्छत्रपुरा का सामन्त का उत्तराधिकारी नरदेव पुन्ताला में राज्य करता था सम्भवत अहिच्छत्रपुरा पुन्ताला और साम्भर के बीच में हो।

डा० दशरथ शर्मा अर्ली चोहान डायनेस्टी पृ० १०-१३

† विजोलिया मेवाड का एक ठिकाना था, वहा एक शिलालेख वि० स० १२२६ की फाल्गुन वदि ३ (ई० स० ११७० को ५ फरवरी गुरुवार) का प्राप्त हुआ है।

‡ अनुमानित १५ × ७ = १०५ = १०३० − १०५ = ९२५ वि० स०

§ चहमान का वशज वश भास्कर के अनुसार

दुर्लभराज के पुत्र गुवक* (प्रथम) के समय में पहले पहल मुसलमानों का आक्रमण अजमेर में हुआ और वह अपने ७ वर्ष के पुत्र सहित मारा गया। गुवक नागाव लोक का समकालीन था। इसका समय वि स ८ (ई० सन् ७४३) के लगभग का है।

गुवक प्रथम शिव भक्त था जैसा कि उसके हर्षदेव मन्दिर के निर्माण से प्रतीत होता है। शैव मत उसके वंश का राज्य धर्म बन गया था। पृथ्वीराज विजय में इसका नाम नहीं लिखा है तथापि बिजोलिया तथा हर्षनाथ के मन्दिरों के अभिलेखों से इसका चौहान शासक के रूप में स्वीकार किया जाना तर्क संगत है। इस मत के शासक चन्दनराज के समय चौहानों और तंवरों के बीच भयंकर संघर्ष हुआ। उसने तंवरावती पर हमला कर वहां के तंवरवंशी राजा रुद्रेण को मार डाला† चन्दनराज का पुत्र और उत्तराधिकारी वाक्यपतिराज था। इसने अपने साम्राज्य की सीमा विन्ध्याचल पर्वत तक फैलाई थी जिससे इसे विन्ध्यनृपति कहते थे।‡

पृथ्वीराज विजय में दी हुई वंशावली के अनुसार वाक्य पतिराज के तीन पुत्र थे सिंहराज लक्ष्मण व वत्सराज। वाक्यपति की मृत्यु के बाद सिंहराज सांभर का शासक हुआ। यह शासक वीर व दानी था। हर्षनाथ के मन्दिर में स्वर्ण-कलश इसी ने चढ़ाया। कई गांव ब्राह्मणों को दान में दिए। तोमर शासकों के लवण नामक राजा की सहायता से सिंहराज पर आक्रमण किया पर वह विजयी न हो सका।§ हमीर महाकाव्य में लिखा है कि सिंहराज से गुजरात लाट चोलवाट आदि के शासक घबराते थे। मुसलमानों से भी इसे संघर्ष करना पड़ा। प्रबन्ध कोष से ज्ञात होता है कि उसने अजमेर के पास मुसलमान सेना पति हातीमद्दीन को हराया। सिंहराज के बाद सांभरी चौहानों को लगातार मुसलमानों के आक्रमणों का सामना करना पड़ता था। सिंहराज का पुत्र विग्रह राज व उसका भाई दुर्लभराज वि सं १ ३७ तक सांभर में निष्कण्टक राज्य

---

* बिजोलिया शिलालेख
Their cradle land was in the tract extending approximately from Pushkar in the south to Harsa in the north It had every right to be called Jangladesh on account of abounding in pilu kasik and sami trees the characteristic vegetation of such tract Dr D R Sharma Early Chohan Dynasties page 10

† हर्ष शिलालेख ‡ बिजोलिया शिलालेख § हर्ष शिलालेख (ए इ जिल्द २ पृष्ठ १९)

करते रहे। दुर्लभराज का पोता वाक्यपति द्वितीय महमूद गजनी का समकालीन था। महमूदगजनी ने जब सोमनाथ के मन्दिर पर आक्रमण करने के लिए भारत में प्रवेश किया तो उसे वाक्यपति के लडके वीर्यराव से सघर्ष करना पडा।

वाक्यपतिराव प्रथम का दूसरा पुत्र लाखण (लक्ष्मणराज) था। उसने मारवाड मे नाडोल में अपना एक अलग राज्य स्थापित किया।* नाडोल मे चौहाणो की इस शाखा ने लगभग २०० वर्षों तक राज्य किया। १२०० ई० के लगभग जब कुतुबुद्दीन ऐबक ने नाडोल पर आक्रमण किया तो वहा के चौहान शासक भीनमाल की ओर चले गये।† भीनमाल की चौहान शाखा मे माणिकराय द्वितीय प्रसिद्ध शासक हुआ। इसके समय मे मेवाड के दक्षिण-पूर्वी भाग पर चौहानो का राज्य स्थापित हो गया। माणिकराय के बारे मे टाड लिखता है कि चौहानो का इतिहास महत्वपूर्ण स्तर पर आ गया। माणिकराय ने प्रारभ में भैसरोड तक ही अपने अधिकारो को सीमित रखा परन्तु बाद मे उसने बम्बावदा पर अधिकार करके उसे अपनी राजधानी बनाया। माणिकराय के उत्तराधिकारियो मे सभारण जैतराव, अनगराव, कुतसिंह और विजयपाल हुए।‡

विजयपाल देव का पुत्र हरराय या हाडाराव बडा प्रसिद्ध नरेश हुआ। इसीके सम्बन्ध मे यह प्रसिद्ध है कि बम्बावदा के चौहान शासक हाडा चौहान कहलाये। आगे चल करके इन हाडा चौहानो ने बून्दी पर अधिकार कर लिया। ये हाडा चौहान क्यो कहलाये ? इस सम्बन्ध मे नाना प्रकार के कथन हैं। भाटो के कथन के अनुसार हाडा शब्द को सस्कृत के अस्थि का पर्यायवाची मान लिया गया है अत अस्थिपाल नामक राजा के सम्बन्ध से हाडा वश का उल्लेख किया है। अजमेर के चौहान शासको मे§ विशालदेव के पुत्र अनुराज के पुत्र ईस्तपाल हाडा चौहानो का सस्थापक था।¶ ईस्तपाल ने सम्वत् १०८१ मे असीर पर अधिकार किया और उसने महमूद गजनवी से सघर्ष किया। उसका पुत्र हम्मीर महमदगोरी के विरुद्ध घाघर के युद्ध में मारा गया। अलाऊदीन खिलजी के समय सम्वत् १३५१ मे राव इड असीर मे मारा गया और उसके पुत्र रैणसी ने मेवाड की ओर जाकर भैसरोड पर अधिकार कर लिया। रैणसी के पुत्र वगा ने बम्वोदा

---

* सी वा वैद्य हिस्ट्री आफ मिडिवियल हिन्दू इन्डिया † नाडोल का शिलालेख।

‡ विजयपाल चौहान का वि० स० १३५४ (ई स १२९७) का एक शिलालेख जो बून्दी से तीन मील दूर महादेव के मन्दिर के पास प्राप्त हुआ।

§ अजमेर के चौहानो का इतिहास अलग से दिया गया है।

¶ टाड ऐनल्स एन्ड एन्टीक्वीटीज ओफ राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ सख्या १४६१

मीर मिनाल पर अधिकार कर लिया तथा वि० सं० १३९८ (ई० सन् १३४१) में राव देवा ने मीणों से बम्बू घाटी छीन कर बून्दी नगर की स्थापना की और उस क्षेत्र को हाड़ावती नाम दिया जिसे आजकल हाड़ोती कहते हैं।*

बून्दी के इतिहास वंशभास्कर में अजमेर के महाराजा सोमेश्वर के एक पुत्र उदय को बून्दी के खानदान का और उसके भाई भरत को रणथम्भौर के मूल घराने का लिखा है। ऐसा प्रतीत होता है कि भरत और उदय चौहानों की भिन्न भिन्न वंशावलियों में उल्लिखित न होने के कारण कल्पित हैं। मूथा नैणसी ने बून्दी के राजवंश को नाडोल के चौहान राजा केतु (कीर्तिपाल) के वंश का होना बतलाया है।†

इन उपरोक्त कथनों के अनुसार बून्दी के हाड़ा चौहानों का मूल पुरुष नाडोल के चौहान राव लक्ष्मण था या अजमेर के शासक अनुराज माणिक्य रहा। टॉड ने हाड़ा शाखा का उल्लेख ईस्तपाल (अस्थिपाल) के रूप में लिया है। भाटों की कथा में लिखा है कि उसे एक राक्षस ने मार डाला था। परन्तु आशापूर्णा देवी ने उसकी हड्डियाँ जोड़ करके फिर से जिलाया। इसलिये इसके वंशज हाड़ा कहलाये क्योंकि अस्थि हाड़ को कहते हैं। भाटों ने अस्थिपाल का नाम हाड़ा राव रख लिया है। परन्तु अस्थिपाल के होने का और आखिर तमे का कोई तथ्यपूर्ण सबूत प्राप्त नहीं हुआ है। संभव है कि राव देवराज के पुत्र हरराज के नाम से उसके वंशज हराऊत प्रसिद्ध हुए जो प्राकृत में हाड़ा कहलाने लगे।

असीरगढ़ या आसरगढ़ में भी चौहानों का राज्य होना साबित नहीं होता है। यह गढ़ मध्य-प्रदेश के निमार जिले के कस्बे से सात उन्नीस मील दक्षिण-पश्चिम की ओर सतपुड़ा पहाड़ की एक घाटी पर बहुत मजबूत बना हुआ है। फरिश्ता लिखता है कि ई० सं० १३७० के करीब आशा नाम के एक अहीर ने यह गढ़ बनवाया था। वहाँ उसके पूर्वज ७ वर्ष पहले हुक्मरानी करते थे।

बून्दी में हाड़ा चौहानों के राज्य की स्थापना—बून्दी में आने के पहले हाड़ा चौहान पथार के इलाके में रहते थे। पथार पर कब्जा करने वाला पहला चौहान राव रतनसिंह था जिसे राव रैणसी भी कहते हैं। रतनसिंह के दो पुत्र केलण और केकस थे। राव केलण को कोढ़ का रोग हो गया और केदारनाथ की उसने पैदल यात्रा की थी। वहाँ वह उस रोग से मुक्त होकर लौटा। बाद

* वही पृष्ठ संख्या १४९ † मुहणोत नैणसी की ख्यात भाग १ पृष्ठ १०४

मे वह पथार पर राज्य करने लगा। केलण के पोते राव वगदेव ने मेनाल का नगर ले लिया। धीरे-धीरे उसने माडलगढ, विजौलिया, रतनगढ आदि परगने अपने अधिकार मे कर लिये। वगदेव के बारह पुत्र थे परन्तु उसका बड़ा लडका राव देवा गद्दी पर बैठा। देवा की शक्ति इतनी बढ गई कि पूर्व मे भैसरोड, पश्चिम मे वम्बावदा और मीनाल तक उसका राज्य फैल गया था।* उस समय दिल्ली मे सिकन्दर लोदी (ई० सन् १४८९-१५१७) राज्य कर रहा था। वह देवा की शक्ति से शकित हो गया और उसने मुलाकात करने के लिये बुलाया था। देवा ने मिणो से स० १३९८ मे वन्धु घाटी लेकर वहा बून्दी राज्य की स्थापना की। वम्बावदा मे वह अपने लडके हरराज को गद्दी पर बैठा कर स्वय बून्दी मे रहने लगा। हरराज के बारह लडके थे जिसमें बडा लडका आलू वम्बावदा की गद्दी पर बैठा। उसका नाम पथार क्षेत्र मे हमेशा के लिये प्रसिद्ध हो गया।

१. राव देवसिह हाड़ा–
(वि सं. १३९८-१४००)

देवसिह पहले चित्तौड (मेवाड) के महाराणाओ के आधीन था और उसी राज्य के भैसरोड ग्राम मे रहता था। देवसिह (देवा) और उसके ११ वंशज भी (राव सुर्जन हाडा तक) चित्तौड के राणाओ के आश्रित रहे।† यो इनमे

* टाड ऐनाल्स एन्ड एन्टीक्वीटीज ओफ राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४६४

† वीर वीनोद जिल्द २ पृष्ठ सख्या १०६। वीर विनोद मे लिखा है कि देवीसिह हाडा बूदी मे राज जमा कर और दुवारा कुअर अरिसिंह से मदद लेकर बूदी के तमाम जिलों को अपने कब्जे में लाया और प्रति वर्ष चित्तौड के महाराणाओ की सेवा में रहने लगा और मेवाड के अव्वल दर्जे का सरदार कहलाया।

ऐसे भी कई नरेश हुए जिन्होंने महाराणा से कुछ सम्बन्ध नहीं रक्खा परन्तु प्रायः इन सबने ही मेवाड़ के नरेशों को अपना मुखिया माना ।

राव देवसिंह ने बूंदी का राज्य मीणों से छीन कर किस प्रकार अपने अधिकार में किया इस विषय में कई प्रकार के विवरण मिलते हैं । कहते हैं कि पहिले बूंदी नगर तथा उसके आसपास के गांवों पर बूंदा मीणा राज्य करता था । इसका पोता जैता राव देवा के समय इस प्रदेश का स्वामी था । एक ब्राह्मण की कन्या से इस मीणा सरदार ने विवाह करना चाहा । ब्राह्मण ने देवसिंह हाड़ा की शरण ली । देवसिंह ने एक चाल चली । उसने एक मण्डप बनवाया उसके नीचे बारूद भरवी गई और जब मीणा सरदार मय अपने बरातियों के आया तो उन्हें खूब शराब पिलाकर उस स्थान को बारूद से उड़ा दिया और बाकी मीणों को मार कर बूंदी पर कब्जा कर लिया ।

महाकवि सूर्यमल चारण ने वंशभास्कर में लिखा है कि उन दिनों बूंदी और उसके आस-पास के इलाकों में मीणों का राज्य था । इनका मुख्य सरदार जैता था जो बहुत शक्तिशाली था । उसकी इच्छा थी कि उसके पुत्र राजपूत कन्याओं को ब्याहें । इस विचार से उसने अपने कामदार जसराज चौहान से उसकी पुत्रियों का अपने पुत्रों से विवाह करने का प्रस्ताव रक्खा । उस समय ऐसे विवाह कभी-कभी होते भी थे क्योंकि जो कोई भूमि का स्वामी होता था वही क्षत्रिय कहलाने लगता था । इसी कारण से उनके सम्बन्ध कभी-कभी राजपूतों में हो जाया करते थे । लेकिन इन मीणों के रीति-रिवाज जसराज को पसन्द नहीं थे अतः उसने इस प्रस्ताव को टालना चाहा । जसराज स्पष्ट मना नहीं कर सकता था अतः उसने इस विषय में देवसिंह से सहायता मांगी । देवसिंह को अच्छा अवसर मिला । उसने सांप को ऐसे मारना चाहा कि लाठी भी नहीं टूटे । उसने चाहा कि यह विवाह भी न होवे और उसके राज्य का विस्तार हो । अतः उसने जैता को जसराज द्वारा कहला दिया कि यदि मीणे अपनी कुप्रथाओं को छोड़कर राजपूतों की सभ्यता व रीति रिवाजों का पालन करें तो उसके पुत्रों के साथ जसराज की कन्याएँ ब्याही जा सकती हैं । मीणा सरदार जैता ने यह मन्जूर कर लिया । विवाह की तैयारियां होने लगी । बरात के स्वागत स्थान के नीचे बारूद बिछा दी गई । उनके पहुँचने पर बारूद में आग लगा दी गई जिससे मीणे जल मरे और जो बचे वे मार डाले गये ।*

* वंश भास्कर द्वितीय भाग पृष्ठ १६२४ । वंश भास्कर में बारूद के प्रयोग द्वारा जैता मीणा का नष्ट किया जाना सत्य प्रतीत नहीं होता है । डाक्टर मथुरा लाल शर्मा ने कोटा राज्य

यह भी बतलाया जाता है कि देवसिंह हाडा ने अपनी कन्या मगली का विवाह मेवाड के राणा लक्ष्मणसिह के कुवर अरिसिह के साथ करके उसकी सहायता से मीणो को बून्दी से निकाल कर वहा का कब्जा किया । मूणोत नैणसी ने अपनी ख्यात मे लिखा है कि देवा की पुत्री का विवाह राणा अडसी के साथ हुआ था । इसलिये राणा की सहायता से देवा ने मीणो को मार कर बूदी ली ।* वाद मे देवा (देवसिंह) ने अपनी सेना भी तैयार करली और मेवाड के राणा की मातहती स्वीकार की । इससे यह ज्ञात होता है कि देवा हाडा ने मेवाड की सहायता से बूदी का राज्य स्थापित किया । यह वात अवश्य असत्य है कि देवा हाडा की पुत्री का विवाह राणा अरिसिंह से हुआ, क्योकि देवा का समकालीन राणा हमीर (स० १३८३-१४२१) था और राणा अडसी तो वहुत ही छोटी आयु मे राजगद्दी पर वैठने के पहले ही युद्ध मे स० १३६० (ई० सन् १३०३) मे वीरगति को प्राप्त हुआ था ।

सूर्य्यमल (वि० स० १८७२-१९२५) ने देवा का मीणो को मार कर स० १२९८ आषाढ वदि ९ मगलवार को बून्दी पर अधिकार करना लिखा है ।† परन्तु यह ठीक नही ज्ञात होता है, क्योकि देवा के पडदादा विजयपाल का वि० स० १३५४ का शिलालेख बून्दी शहर के पास केदारनाथ महादेव के मन्दिर मे मिल चुका है । यदि हम प्रत्येक राजा का राज्यकाल लगभग २० वर्ष माने तो देवा का समय वि० स० १३९४ (ई० १३३७) के लगभग निकलता है । ख्यातो से यह भी मालूम होता है कि देवा ने अपने पिता के जीवित काल मे बून्दी पर कब्जा कर लिया था । कर्नल टाड ने भी देवा का स० १३९८ (ई० सन् १३४०) मे बून्दी पर अधिकार होना लिखा है ।‡ अत यही समय ठीक जान पडता है ।

के इतिहास प्रथम भाग पृष्ठ सख्या ५८ में वशभास्कर के रचियता की कल्पना मानकर इसे अस्वीकार किया है । वास्तव में १३ वी व १४ वी शताब्दी में भारत मे बारूद का प्रयोग सभव नही था । विश्व में भी पहली वार वारूद का प्रयोग १५ वी शताब्दी के अन्तिम चरण में हुआ और भारत में इसका प्रयोग वावर ने पानीपत के प्रथम युद्ध १५२६ में किया था ।

* मुहणोत नेणसी की ख्यात पत्र २६ पृष्ठ सख्या १ । वीर वीनोद के लेखक श्यामलदास ने नेणसी की घटना को अधिक सत्य माना है क्योकि वशभास्कर की रचना से करीव २०० वर्ष पहले नेणसी ने अपनी प्रसिद्ध ख्यात लिखी । बूदी पर हाडाओ के राज स्थापन के ३०० वर्ष वाद नेणसी हुए अत नेणसी का आधार अधिक सत्य प्रतीत होता है ।

† वश भास्कर द्वितीय भाग, पृष्ठ १६२५-१६२७

‡ टाड एनाल्स एण्ड एण्टीक्वीटीज जिल्द पृष्ठ सख्या १४६७

ऐसे भी कई नरेश हुए जिन्होंने महाराणा से कुछ सम्बन्ध नहीं रक्खा परन्तु प्राय इन सबने ही मेवाड़ के नरेशों को अपना मुखिया माना।

राव देवसिंह ने बूंदी का राज्य मीणों से छीन कर किस प्रकार अपने अधिकार में किया इस विषय में कई प्रकार के विवरण मिलते हैं। कहते हैं कि पहिले बूंदी नगर तथा उसके आसपास के गांवों पर बूंदा मीणा राज्य करता था। इसका पोता जैता राव देवा के समय इस प्रदेश का स्वामी था। एक ब्राह्मण की कन्या से इस मीणा सरदार ने विवाह करना चाहा। ब्राह्मण ने देवसिंह हाड़ा की शरण ली। देवसिंह ने एक चाल चली। उसने एक मण्डप बनवाया उसके नीचे बारूद भरदी गई और जब मीणा सरदार मय अपने बरातियों के आया तो उन्हें खूब शराब पिलाकर उस स्थान को बारूद से उड़ा दिया और बाकी मीणों को मार कर बूंदी पर कब्जा कर लिया।

महाकवि सूर्यमल्ल चारण ने वंशभास्कर में लिखा है कि उन दिनों बूंदी और उसके आस-पास के इलाकों में मीणों का राज्य था। इनका मुख्य सरदार जैता था जो बहुत शक्तिशाली था। उसकी इच्छा थी कि उसके पुत्र राजपूत कन्याओं को ब्याहें। इस विचार से उसने अपने कामदार जसराज चौहान से उसकी पुत्रियों का अपने पुत्रों से विवाह करने का प्रस्ताव रक्खा। उस समय ऐसे विवाह कभी-कभी होते भी थे क्योंकि जो कोई भूमि का स्वामी होता था वही क्षत्रिय कहलाने लगता था। इसी कारण से उनके सम्बन्ध कभी-कभी राजपूतों में हो जाया करते थे। लेकिन इन मीणों के रीति रिवाज जसराज को पसन्द नहीं थे अत उसने इस प्रस्ताव को टालना चाहा। जसराज स्पष्ट मना नहीं कर सकता था अत उसने इस विषय में देवसिंह से सहायता मांगी। देवसिंह को अच्छा अवसर मिला। उसने सांप को ऐसे मारना चाहा कि लाठी भी नहीं टूटे। उसने चाहा कि यह विवाह भी न होवे और उसके राज्य का विस्तार हो। अत उसने जैता को जसराज द्वारा कहला दिया कि यदि मीणें अपनी कुप्रथाओं को छोड़कर राजपूतों की सभ्यता व रीति-रिवाजों का पालन करें तो उसके पुत्रों के साथ जसराज की कन्याएँ ब्याही जा सकती हैं। मीणा सरदार जैता ने यह मन्जूर कर लिया। विवाह की तैयारियां होने लगी। बरात के स्वागत स्थान के नीचे बारूद बिछा दी गई। उनके पहुँचने पर बारूद में आग लगा दी गई जिससे मीणें जल मरे और जो बचे वे मार डाले गये।*

---

* वंश भास्कर द्वितीय भाग पृष्ठ १६२४। वंश भास्कर में बारूद के प्रयोग द्वारा जैसा बताया का नष्ट किया जाना सत्य प्रतीत नहीं होता है। [illegible]

२. समरसिंह—
(सं० १४००-१४०३)

यह स० १४०० (ई० सन् १३४३) के लगभग गद्दीनशीन हुआ। इसने कैथून, सीसवली, बडौद, रैलावन, रामगढ, मऊ और सांगोर आदि स्थानो के गौड, पवार तथा मेढ राजपूतो को हटा कर उनको अपना सामन्त बनाया* तथा अपने पैतृक राज्य को सुदृढ किया। भील, मीणो आदि का दमन कर अपने राज्य को भी बढाया। इसने केवल ३ वर्ष राज्य किया। इसके समय मे राज्य का विस्तार चम्बल नदी के बाये किनारे तक हो गया। वश भास्कर मे लिखा है कि समरसी बादशाह अलाउद्दीनखिलजी (वि० स० १३५३-७२) के मुकाबले मे बम्बावदा मे मारा गया, परन्तु यह ठीक नही है क्योकि अलाउद्दीनखिलजी तथा समरसिंह समकालीन नही थे। समरसिंह का राज्यकाल वि० स० १४०० से १४०३ तक था। इस काल मे दिल्ली पर मुहम्मदबिन तुगलक राज्य कर रहा था। इस समय में बादशाह स्वय आपत्ति में था अत उसके द्वारा यह सभव नही था कि वह राजपूताने की ओर स्वय आता या सेना भेजता। इसके चार पुत्र नरपाल, हरपाल, जेतसिंह और डूगरसिंह थे। ज्येष्ठ पुत्र नरपाल बून्दी का स्वामी हुआ। हरपाल को जजावर की जागीर मिली। जेतसिंह ने चम्बल नदी के दाहिने किनारे पर भीलो के राज्य पर चढाई कर भीलो को हराया। उस वक्त भीलो की राजधानी अकेलगढ (वर्तमान कोटा से ५ मील दक्षिण-पश्चिम) थी। भीलो के कई छोटे-छोटे राज्य अकेलगढ से दक्षिण पूर्व मुकन्दरा पर्वतमाला के साथ-साथ मनोहर थाने तक फैले हुए थे। भीलो का प्रसिद्ध सरदार कोटया था जिसके नाम पर कोटा नगर बसा था। कोटया भील के नेतृत्व मे भील बून्दी राज्य का विस्तार

---

* कोटा राज्य का इतिहास जिल्द १ मथुरालाल कृत पृष्ठ सख्या ६१।

कर्नल टॉड ने लिखा है कि राव देवा सिकन्दर लोदी के दरबार में दिल्ली गया था परन्तु यह मानने योग्य नहीं है क्योंकि बादशाह सिकन्दर लोदी का समय वि० सं० १४८६ (ई० सन् १४३२) से सं १५१७ (ई० सन् १४६) का है और राव देवा का समय वि० सं १३९८ (ई० सन् १३४१) के लगभग का है। इतने समय तक उसका जीवित रहना सम्भव नहीं है*। टॉड ने यह भी लिखा है कि राव देवा अपने जीतेजी राजपाट छोड़ अपने पुत्र समरसिंह (समरसी) को उत्तराधिकारी बना कर बून्दी से पाँच कोस दूर अमर थुणा गांव में मृत्यु पर्यन्त रहा।†

देवसिंह तक बम्बावदा के हाड़ों की स्थिति साधारण ही थी।‡ मीणों से बूंदी लेने के बाद उसने अपने राज्य को बढ़ाया। मौका देखकर बाद में इसने गौड़ गजमल से खटकड़ गोहिल मनहरदास से पाटन गोड़ो से गेणोली और सालेरी और दहिया जसकरण से करवर के परगने छीन कर अपने बून्दी राज्य को बढ़ाया। अपने पिता के प्रति भक्ति प्रकट करने के लिए देवसिंह ने अमरथूण में पूर्व की ओर गंगेश्वरी देवी का मन्दिर बनवाया। वहां पर एक बावड़ी का निर्माण करवाया।§

---

* टॉड के अनुसार वि सं १३९८ (१३४१ १३४२ ई) में भारत में मोहम्मद बिन तुगलक सुल्तान था (१३ २ ई १३५१ ई) वंश भास्कर के आधार पर डाक्टर मथुरालाल शर्मा ने देवा की तिथि १२९८ वि सं स्वीकार की है। तिथि से देवा का समकालीन मुसलमान शासक सिकन्दर लोदी नहीं था क्योंकि १२९८ वि सं (१२४१ ४२ ई) में नसीरुद्दीन इल्तुतमिश का लड़का दिल्ली में राज्य कर रहा था।

† टाड एनाल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ संख्या १४६ । देवा ने अपने लड़के समरसी को बूंदी का राज्य देकर सन्यास लेलिया और फिर बूंदी या बम्बावदा में पुन प्रवेश नहीं किया।

‡ वंश भास्कर द्वितीय भाग पृष्ठ १६१७ के अनुसार देवा ने बूंदी पर अधिकार अपने पिता के काल में ही किया था और उसकी मृत्यु के बाद बम्बावदा का राज्य बूंदी में मिला लिया। परन्तु टाड का कथन है कि देवा ने बम्बावदा का राज्य अपने लड़के हरराज को सौंप दिया था। दोनों शाखाएं एक दूसरे से स्वतंत्र रहीं। टाड जिल्द ३ पृष्ठ संख्या १४५७

§ वंश भास्कर द्वितीय भाग पृष्ठ १६२६ १६२७

२. समरसिंह–
(सं० १४००-१४०३)

यह स० १४०० (ई० सन् १३४३) के लगभग गद्दीनशीन हुआ। इसने कैथून, सीसवली, बडौद, रैलावन, रामगढ, मऊ और सांगोर आदि स्थानो के गौड, पवार तथा मेढ राजपूतो को हटा कर उनको अपना सामन्त बनाया* तथा अपने पैतृक राज्य को सुदृढ किया। भील, मीणो आदि का दमन कर अपने राज्य को भी बढाया। इसने केवल ३ वर्ष राज्य किया। इसके समय मे राज्य का विस्तार चम्बल नदी के बाये किनारे तक हो गया। वश भास्कर मे लिखा है कि समरसी बादशाह अलाउद्दीनखिलजी (वि० स० १३५३-७२) के मुकाबले मे बम्बावदा मे मारा गया, परन्तु यह ठीक नही है क्योंकि अलाउद्दीनखिलजी तथा समरसिंह समकालीन नही थे। समरसिंह का राज्यकाल वि० स० १४०० से १४०३ तक था। इस काल मे दिल्ली पर मुहम्मदबिन तुगलक राज्य कर रहा था। इस समय मे बादशाह स्वय आपत्ति मे था अत उसके द्वारा यह सभव नही था कि वह राजपूताने की ओर स्वय आता या सेना भेजता। इसके चार पुत्र नरपाल, हरपाल, जेतसिंह और डूगरसिंह थे। ज्येष्ठ पुत्र नरपाल बून्दी का स्वामी हुआ। हरपाल को जजावर की जागीर मिली। जेतसिंह ने चम्बल नदी के दाहिने किनारे पर भीलो के राज्य पर चढाई कर भीलो को हराया। उस वक्त भीलो की राजधानी अकेलगढ (वर्तमान कोटा से ५ मील दक्षिण-पश्चिम) थी। भीलो के कई छोटे-छोटे राज्य अकेलगढ से दक्षिण पूर्व मुकन्दरा पर्वतमाला के साथ-साथ मनोहर थाने तक फैले हुए थे। भीलो का प्रसिद्ध सरदार कोटया था जिसके नाम पर कोटा नगर बसा था। कोटया भील के नेतृत्व मे भील बून्दी राज्य का विस्तार

---

* कोटा राज्य का इतिहास जिल्द १ मथुरालाल कृत पृष्ठ सख्या ६१।

होना पसन्द नहीं करते थे। इससे उसने अपने पिता के आदेश से ही उसने मीणों पर चढ़ाई कर कोटा के आसपास की भूमि पर कब्जा कर लिया। इस युद्ध में १० भील तथा ३ ० हाड़ा सिपाही मारे गए।* तब से कोटा का परगना बून्दी के राजकुमार की जागीर में रहने लगा। जैतसिंह अपने को कोटा राज्य का अधिपति मानते भी बून्दी राज्य के अधीन रहा। जैतसिंह बाद में अपने बड़े भाई नरपाल की सहायता करते टोडा के युद्ध में लड़ता हुआ मारा गया।†

---

२ राव नरपाल—
(सं० १४०६ १४२७)

अपने पिता की मृत्यु के पश्चात यह राजगद्दी पर बैठा। इसने करीब २४ वर्ष राज किया। नरपाल ने पलायथा के महेशदास खिंची को हराकर पलायथा को अपने कब्जे में किया।‡ इसका विवाह टोडा के सोलंकी सरदार रैपाल की पुत्री से हुआ था। कर्नल टाड ने लिखा है कि राव नरपाल को टोडा की एक सममरमर पत्थर की शिला बहुत पसंद आई परन्तु टोडे के सरदार ने उसे देने से इन्कार कर दिया। नरपाल ने इससे अपना अपमान समझा और सोलंकी रानी से प्रेम नहीं रक्खा। रानी ने इस पर अपने पिता को शिकायत लिखी। इस पर टोडा का सरदार काजली तीज (सावण) को बून्दी पर चढ़ आया और अचानक आने से राव का काम तमाम कर दिया। नरपाल के पीछे सोलंकी रानी सती

---

* वंशभास्कर तृतीय भाग पृष्ठ संख्या १६७८-७९

† उपरोक्त पृष्ठ १७१२

‡ वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ १७२७ इन तवारीखों के अनुसार पलायथे के युद्ध में हाडूजी के १ और महासिंह (पलायथा के शासक महेशदास का भाई) के ७ व्यक्ति मारे गए। हाडूजी ने दुर्ग रक्षा के लिए ८ सैनिकों को दूसरी जिमे में रखी।

हुई।* नरपाल के राज्य का बहुत-सा हिस्सा उनके हाथों से चला गया।† वि० सं० १४८५ के शृंगी स्थान से मिले शिलालेख से ज्ञात होता है कि मेवाड के महाराणा क्षेत्रसिंह ने उनको हराया था और तब से बून्दी राज्य मेवाड के मातहत हो गया।‡

राव नरपाल के तीन पुत्र हम्मीर, नोरग और नीरराज थे। नरपाल का देहान्त सं० १४४५ के आस-पास हुआ था,

४ राव हम्मीर–
(सं० १४४५-१४६०)

अपने पिता के पीछे यह गद्दी पर बैठा। इसे हाडा भी कहते थे। इसकी मृत्यु वि० सं० १४६० मे हुई। उसके दो लडके वीरसिंह और लालसिंह थे। हम्मीर वीर पुरुष था। इसने बून्दी के पास शेरगढ के पवारो से लोहा लिया, क्योंकि पवारो ने इसके पिता नरपाल की गणगोर को लूटा था। अंत समय मे यह अपने पुत्र वीरसिंह को राजगद्दी देकर वह काशी सन्यास लेकर चला गया और वहा उसी वर्ष परलोक सिधारा।§

---

* टाड एनाल्स एन्ड एण्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान, जिल्द ३ पृष्ठ सख्या १४६८-१४७०
† तवारीख राज बूदी में लिखा है कि नापूजी दिल के बोदे थे इसलिए अपने पिता के हासिल किए हुए कई परगने खो दिए। शेरगढ़ का पवार हरराज उनकी गणगोर लूट कर ले गया।
‡ भावनगर इन्सक्रिपशन्स पृष्ठ ११
§ बून्

होना पसन्द नहीं करते थे। इससे उसने अपने पिता के आदेश से ही उसने भीलों पर चढ़ाई कर कोटा के आसपास की भूमि पर कब्जा कर लिया। इस युद्ध में ६०० भील तथा ३०० हाड़ा सिपाही मारे गए।* तब से कोटा का प्रान्त बून्दी के राजकुमार की जागीर में रहने लगा। जैतसिंह अपने को कोटा राज्य का अधिपति मानते भी बून्दी राज्य के अधीन रहा। जैतसिंह बाद में अपने बड़े भाई नरपाल की सहायता करते टोडा के युद्ध में लड़ता हुआ मारा गया।†

---

२ राव नरपाल—
(स० १४०६ १४२७)

अपने पिता की मृत्यु के पश्चात यह राजगद्दी पर बैठा। इसने करीब २८ वर्ष राज किया। नरपाल ने पलायथा के महेशदान खिची को हराकर पलायथा को अपने कब्जे में किया।‡ इसका विवाह टोडा क सोलंकी सरदार रैपाल की पुत्री से हुआ था। कर्नल टाड ने लिखा है कि राव नरपाल को टोडा की एक संगमरमर पत्थर की शिला बहुत पसंद आई परन्तु टोडे के सरदार ने उसे देने से इन्कार कर दिया। नरपाल न इससे अपना अपमान समझा और सोलंकनी रानी से प्रेम नहीं रक्खा। रानी ने इस पर अपने पिता को शिकायत लिखी। इस पर टोडा का सरदार कजली तीज (सावण) को बून्दी पर चढ़ आया और अचानक आने से राव का काम तमाम कर दिया। नरपाल के पीछे सोलंकनी रानी सती

---

* वंशभास्कर तृतीय भाग पृष्ठ संख्या १६७८-७६

† उपरोक्त पृष्ठ १७१५

‡ वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ १७२७ इस तवारीख के अनुसार पलायथे के युद्ध में नापूजी के १ और महासिंह (पलायथा के शासक महेशदास का भाई) के ७ व्यक्ति मारे गए। नापूजी ने दुर्ग रक्षा के लिए ८ सैनिकों की टुकड़ी किले में रखी।

मेवाड के इतिहास मे इस बात का कही उल्लेख नही है। यह कथा भाटो की कल्पना पर ही आधारित है।

वीरसिंह के तीन पुत्र वैरीसाल, जावदजी और निरमराज थे। वीरसिंह की मृत्यु स० १४७० के करीब हुई।

६. राव बैरीसाल—
(सं० १४७०-१५१६)

३२ वर्ष की आयु मे स० १४७० के लगभग वैरीसाल बून्दी की राज-गद्दी पर बैठा। यह एक निर्बल तथा अयोग्य शासक था कर्नल टॉड के कथनानुसार इसने वि० स० १५२६ तक ५० वर्ष राज्य किया, परन्तु तवारीख फरिश्ता से पता चलता है कि यह मालवे के महमूदखिलजी के आखिरी हमले मे स० १५१६ वि० (ई० सन् १४५९ ई० ८६३) मे काम आया। इसके राज्यकाल की उल्लेखनीय घटना बून्दी पर माडू (मालवा) के बादशाह महमूदखिलजी की चढाई है। तवारीख फरिश्ता मे लिखा है कि माडू के सुलतान महमूदखिलजी ने तीन बार कोटा, बून्दी पर चढाई की। पहली वि० स० १५०६ (ई० सन् १४४९) मे* दूसरी स० १५१० (ई० सन् १४५३)† और तीसरी वि० स० १५१६ (ई० सन् १४५९) मे आखिरी चढाई में सुलतान ने अपने छोटे

---

* फरिश्ता लिखता है कि महमूद खिलजी ने कोटे के राजा से सवालाख टके का नजराना लिया।

† दूसरी बार कोटा बून्दी पर आक्रमण करने का कारण यह था कि हाडोती के राजपूत शासको ने माडू के अधीन क्षेत्र में लूट मार मचादी थी अत महमूद खिलजी उन्हें दण्ड देने को आया। यह लडाई महूनी गाव में हुई जिसमें राजपूतो की करारी हार हुई। उनकी स्त्रिएँ कैद करली गईं और माडू भेजदी गईं।

५ राव वीरसिंह–
(सं० १४६० १४७०)

यह राव हम्मीर का ज्येष्ठ पुत्र था और वि सं० १४६० में बून्दी की राजगद्दी पर बैठा। वंश भास्कर में लिखा है कि इसने चित्तौड़ के राणा की अधीनता में रहने से मना कर दिया। इस पर महाराणा लाखा (लक्षसिंह) ने हाड़ों को दबाने के लिये एक बड़ी सेना के साथ बून्दी पर चढ़ाई करदी। तब मेवाड़ की सेना बून्दी पर चढ़ाई करदी। जब मेवाड़ की सेना बून्दी से कुछ मील दूर निम्बेड़ गांव तक पहुँची तब हाड़ों ने भी केसरिया करके लड़ने की ठानी। विजय की कोई आशा नहीं देख कर हाड़ों ने आधी रात को सिसोदिया के पड़ाव पर हमला कर दिया। इससे मेवाड़ की सेना में भगदड़ मच गई। राव खुद राणा के डेरे में पहुँच गया परन्तु राणा किसी तरह चित्तौड़ की ओर भाग गया। इस तरह हाड़ों द्वारा हार कर महाराणा लज्जित हुआ और उसने बून्दी को जीतने का प्रण किया तथा कहा कि जब तक बून्दी नष्ट नहीं कर दूंगा तब तक अन्न-जल नहीं लूंगा। कहते है कि इस प्रतिज्ञा को जैसे तैसे पूरी कराने के लिए चित्तौड़ के नीचे एक गार (मिट्टी) की बून्दी बना कर उसे नष्ट करने का विचार किया गया परन्तु इस बनावटी किले की रक्षा के लिये चितौड़ के सरदारों में कुम्भा वैरसी नामक हाड़ा को इस मिट्टी की बून्दी का रक्षक बनाया और उसे समझाया कि जब राणा सेना लेकर आवे तब आत्मसमर्पण कर देना किन्तु उसने उत्तर दिया कि हाड़ा वंश में जन्म लेने से बून्दी नामकी रक्षा करना मेरा धर्म है। इसलिये जीते-जी शस्त्र नहीं छोड़ूंगा। लोगों ने उसकी बातों को हंसी समझा परन्तु उसने अपने जीते-जी मिट्टी की बून्दी पर भी कब्जा नहीं होने दिया।* इस घटना में कोई सत्यता नहीं प्रतीत होती है क्योंकि

* टाड इस घटना का उल्लेख राव हमीर के काल में करता है। टाड जिल्द १ पृष्ठ १५७१

मेवाड के इतिहास मे इस वात का कही उल्लेख नही है। यह कथा भाटो की कल्पना पर ही आधारित है।

वीरसिंह के तीन पुत्र वैरीसाल, जावदजी और निरमराज थे। वीरसिंह की मृत्यु स० १४७० के करीब हुई।

६. राव वैरीसाल–
(सं० १४७०-१५१६)

३२ वर्ष की आयु मे स० १४७० के लगभग वैरीसाल वून्दी की राज-गद्दी पर वैठा। यह एक निर्वल तथा अयोग्य शासक था कर्नल टॉड के कथनानुसार इसने वि० स० १५२६ तक ५० वर्ष राज्य किया, परन्तु तवारीख फरिश्ता से पता चलता है कि यह मालवे के महमूदखिलजी के आखिरी हमले मे स० १५१६ वि० (ई० सन् १४५६ ई० ८६३) मे काम आया। इसके राज्यकाल की उल्लेखनीय घटना वून्दी पर माडू (मालवा) के वादशाह महमूदखिलजी की चढाई है। तवारीख फरिश्ता मे लिखा है कि माडू के सुलतान महमूदखिलजी ने तीन वार कोटा, वून्दी पर चढाई की। पहली वि० स० १५०६ (ई० सन् १४४६) मे* दूसरी स० १५१० (ई० सन् १४५३)† और तीसरी वि० स० १५१६ (ई० सन् १४५६) में आखिरी चढाई में सुलतान ने अपने छोटे

* फरिश्ता लिखता है कि महमूद खिलजी ने कोटे के राजा से सवालाख टके का नजराना लिया।

† दूसरी वार कोटा वून्दी पर आक्रमण करने का कारण यह था कि हाडोती के राजपूत शासकों ने माडू के अधीन क्षेत्र में लूट मार मचादी थी अत महमूद खिलजी उन्हें दण्ड देने को आया। यह लडाई महूनी गाव में हुई जिसमें राजपूतो की करारी हार हुई। उनकी स्त्रिएं कैद करली गई और माँडू भेजदी गई।

शाहजादा फिदाईखां को वहां का मालिक बनाया। बून्दी जीत कर किले में अपना अफसर छोड़कर वह मांडू चला गया। इसी संघर्ष में बैरीसाल भी मारा गया।

बैरीसाल के ८ पुत्र भर्मराज पूंजा उदयसिंह भांडा (बन्दा) भाणदेव सोहट कर्मचन्द और श्यामजी (केशवदेव) थे। प्रथम तीन राजकुमारों ने लड़ाई में अपने पिता का साथ नहीं दिया इसलिये पिता ने भांडा (भाणदेव) को अपना उत्तराधिकारी बनाया। बैरीसाल के दो पुत्र लड़ाई में मुसलमानों द्वारा पकड़ गये जिन्हें मुसलमान बना दिया गया। उनका नाम मुसलमानों ने समर कन्दी व उमरकन्दी रखा।*

(वि० सं० १४९६ (ई० सन् १४३९) के राणकपुर (मारवाड़) के शिलालेख से ज्ञात होता है कि महाराणा कुम्भा ने कुल हाड़ौती प्रदेश (बून्दी राज्य) को विजय कर वहां के नरेश को अपना सामन्त बनाया था।)

७ राव भाणदेव—
सं० (१५१६ १५६०)

इसका नाम भारमल भांडा बन्दो और सुभाण देव भी मिलता है। यह बून्दी के इतिहास में एक प्रसिद्ध पुरुष हुआ है। इसने भाई सांड देव (सांडा) की सहायता से बून्दी के खोये प्रदेश को वापिस लिया† तथा बाद में इसने मांडू

---

* टाड समरकन्दी व उमरकन्दी को राव बीरसिंह (बैरीसाल) के पुत्र मानता है तथा देखो टाड जिल्द ३ पृष्ठ १४७१। बैरीसाल के ७ पुत्रों में ५ पुत्रों को (बन्धु, भांडा, लक्का, अक्का, कचा व चम्पा को अकावत, उपावत व चम्पावत सत्वाओं के पूर्वज बतलाया है।

† जब भाण्ड देव गद्दी पर बैठा सिर्फ ६ साल का था। पिता की वसीयत के अनुसार इसके तीन बड़े भाई गद्दी से वंचित किए जाने पर इसको राज्य दिया गया। इसके गद्दी पर बैठते ही इन भाइयों ने बून्दी राज्य के कई हिस्सों पर अधिकार कर लिया। जब यह जवान हुआ तब अपने छोटे भाई सांडा की सहायता से खोये प्रदेश पुनः ले लिए।

(मालवा) तक लूट खसोट करना आरम्भ करदिया इस पर माडू के सुल्तान ने हाडो को दवाने के लिये समरकदी व उमरकन्दी को मय फौज के बून्दी पर भेजा। इन्होंने राव भाणदेव को वहा से निकाल दिया। इनका बून्दी पर लगभग ११ वर्ष तक अधिकार रहा और भाणदेव पर्वतो में मातूण्डा नामक गाँव मे जा रहा, जहा इसकी मृत्यु स १५६० के लगभग हुई। मातूण्डा में इसकी छत्री भी अब तक है। वश भास्कर से यह पाया जाता है कि समरकदी ने बूदी लेकर भाणदेव और माँडदेव को कुछ गाव जागीर मे दे दिये थे*।

राव भाणदव हाडा वडा उदार व धार्मिक नरेश था। इसने तीन वर्ष तक का सचय किया हुआ कुल अनाज वि० स० १५४८ के घोर दुर्भिक्ष मे सवका वॉट दिया।† कहा जाता है कि राणा कुम्भा ने हाडोती प्रदेश को विजय कर वहाँ के शासक को अपना सामंत वनाया था‡

इनके तीन पुत्र नारायणदास नर्वद और नरसिंहदास§ थे। वाद मे एक दिन साडाराव व भाडाराव को हिंडोली में दावत के वहाने वुला कर समरकन्दी ने उन्हें मरवा डाला।¶

८ राव नारायणदास—
(१५६०-१५८४)

पिता की मृत्यु के समय नारायण राव इतना शक्तिशाली समरकन्दी का विरोध कर सके पर वाद मे धीरे धीरे पठार देश के ... इकट्ठा कर बूदी को अपने धर्म भ्रष्ट चाचाओ से वापिस लेने का निश्चय ...

---

* वश भास्कर जिल्द तृतीय, पृष्ठ १७०८

† टाड राजस्थान जिल्द ३, पृष्ठ १४७३

‡ राणकपुर (मारवाड) का शिलालेख वि० स० १४९६

§ टाड इनके २ पुत्रो का ही उल्लेख करता है नरायणदास व निवुद्ध—टाड राजस्थान तृतीय पृष्ठ १७०८ ¶ वश प्रकाश पृष्ठ स० ५०-५१

प्रारम्भ में इसने उनसे मेलजोल बढ़ाया जिससे उनसे कुछ जागीर भी मिल गई।* एक दिन उसने मौका पाकर उनको मार डाला। समरकन्दी का पुत्र दाउद भी मारा गया। हाड़ों ने नारायणदास का साथ दिया और इस तरह बूंदी पर फिर हाड़ों का राज्य स्थापित हो गया।†

नारायणदास बड़ा वीर और साहसी नरेश था। यह चित्तौड़ के महाराणा रायमल का समकालीन था। जब मालवे के सुल्तान गयासुद्दीन ने चित्तौड़ पर चढ़ाई कर‡ उसे घेर लिया तब राव नारायणदास अपनी सेना लेकर उसकी सहायता के लिये चित्तौड़ पहुँचा और यवनों को मार भगाया। इस युद्ध में नारायणदास के कई घाव लगे और उसके कई हाड़ा सैनिक काम आये। इस सेवा के उपलक्ष में महाराणा रायमल से प्रसन्न होकर अपनी पुत्री का विवाह इससे कर दिया।§ राणा सांगा की भी यह बराबर सहायता करता था। यह कन्वाह के युद्ध वि सं १५८४ में महाराणा सांगा की अधीनता में बाबर के विरुद्ध भी लड़ा था।¶ वि सं० १५८४ के लगभग यह अपने भाई नरबद हाड़ा के साथ जागीरदार खटकड़ो के हाथ से शिकार में धोखे से मारा गया।$

इसके तीन पुत्र सूरजमल रायमल और कल्याणदास थे। राव नारायणदास की एक रानी जोधपुर के राव सूजा की पुत्री लेरूबाई राठौड़ थी। यह बहादुर

---

* बूंदी राज्य की ख्यात के अनुसार वंश प्रकाश पृष्ठ सं ९१

† टाड राजस्थान जिल्द १ पृष्ठ सं १७७४। इस विजय के उपलक्ष में एक स्तम्भ का निर्माण नारायणदास ने कराया था जिसे टाड ने अपनी बूंदी यात्रा के समय सुरक्षित पाया था।

‡ कहा जाता है कि मालवा के सुल्तान गियासुद्दीन (१४६९-९९ ई) ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था परन्तु इसमें कुछ सन्देह है क्योंकि फारसी तवारीखों में गियासुद्दीन को एक विलासी शासक के रूप में उल्लेख किया गया है जो कभी भी अपनी राजधानी मांडू से बाहर नहीं गया।

वंश भास्कर तथा वंश प्रकाश में महमदाबाद और मांडू के बादशाह महमूद और मुजफ्फर ने अपनी फौज से चित्तौड़ घेर लिया महमूद और मुजफ्फर शाह राणा संग्राम सिंह के समकालीन थे। उन्हीं के काल में उन्होंने मिलकर मेवाड़ पर आक्रमण किया पर विजयी न हो सके।

§ टाड—राजस्थान जिल्द १ पृष्ठ सं १७७५

¶ वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २ ११

$ वंश भास्कर में लिखा है कि खटकड़ का जागीरदार नरबद ने अपने पिता संग्रामसिंह की मृत्यु का बदला लेने के लिए इन दोनों भाइयों को सम्वत १५८४ में मारा था। टाड के अनुसार नारायणदास की मृत्यु १५९ ई में हुई।

तो था परन्तु अफीम का नशा ज्यादा करता था। इसके अफीम की तारीफ मे राजस्थान में कई दन्तकथाऐ प्रसिद्ध है।* इसके छोटे भाई नर्बदे की पुत्री कर्मवती महाराणा साँगा को ब्याही थी। इसी कर्मवती (पद्मावती) ने चित्तौड के घेरे मे वीरता-पूर्वक भाग लिया था। कर्नल टाड ने राव नारायणदास की मृत्यु स० १५६० (ई० सन् १५३३) मे होना लिखा है जो ठीक नही है।

६. राव सूरजमल हाडा—
(स० १५८४-१५८८)

यह अपने पिता नारायणदास के समान ही वीर तथा उदार नरेश था। इसकी भुजाऐ घुटनो तक लम्बी थी और यह था भी बडा कद्दावर नौजवान परन्तु अफीम का बहुत सेवन करता था†। इसके समय मे मेवाड तथा बूदी मे वैवाहिक सम्वन्ध के द्वारा प्रेम बढ गया था। सूरजमल की बहिन सूजाबाई की शादी महाराणा रतनसिंह के साथ हुई थी और महाराणा रतनसिंह ने भी अपनी वहिन का विवाह राव सूरजमल से किया था।‡

महाराणा साँगा के मरने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र रतनसिंह मेवाड की गद्दी पर बैठा और छोटा पुत्र विक्रमादित्य तथा उदयसिंह अपनी माता महाराणी हाडी (करमेती-कर्मवती के साथ अपनी जागीर के रणथम्भोर के किले मे रहता था। उस समय बूदी का राव सूर्य्यमल हाडा उनका अभिभावक (गार्जियन) था। महाराणा रतनसिंह और राव सूर्यमल मे अधिक समय तक मेल नही रहा। इन दोनो की मृत्यु एक दूसरे के हाथ से वि० स० १५८८ (ई० सन् १५३१) मे

---

* ऐसा विश्वास किया जाता है कि वह एक वार में सात पैसो के भार का अफीम खा जाता था। आमतौर पर राजपूतो का अमल लेना एक पैसे के भार तक ही था।

† टाड जिल्द ३ पृष्ठ ७४६७ ‡ उपरोक्त पृष्ठ १४७७

वही निकल गये ।* इसी प्रकार पूर्णमल्ल पूरबिया भी मारा गया। पाटण ग्राम मे महाराणा का दाह संस्कार हुआ और महाराणी पवारजी उनके साथ सती हुई ।† नाणता मे इन दोनो वीरो की छत्रिया अब तक मौजूद है और इसी घाटी के ऊपर सूजा बाई की छत्री भी बनी हुई है। इस घटना से मेवाड के सिसोदिया व बूंदी के हाडो के बीच शत्रुता हो गई। यह शत्रुता काफी समय तक रही।

राव सूरजमल ने केवल ४ वर्ष राज्य किया। इनका उत्तराधिकारी इनका पुत्र सुरताण हुआ।

१० राव सुरताण—
(सं० १५८८-१६११)

यह स० १५८८ मे आठ वर्ष की आयु मे राज्य का मालिक हुआ। इसका विवाह महाराणा उदयसिह के पुत्र शक्तसिह की पुत्री से हुआ था। इससे महाराणा उदयसिह ने पठानो से अजमेर छीन कर राव सुरताण हाडा को दे दिया ।‡ यह बडा अत्याचारी और मूर्ख नरेश था। इसने प्रजा व सरदारो को अपने कार्यों से नाराज कर दिया। इसको काल भैरव का इष्ट था, जिसको यह नरबलि चढाया करता था ।§ इस प्रकार के अनैतिक और मूर्खतापूर्ण कार्यों से प्रजा इससे दुःखी रहती थी। एक बार हाडा सरदार सातल की राव सुरताण ने आँखे फोड दी ।¶

इसके समय मे वि० स० १६०३ (ई० सन् १५४६) मे कोटा केसरखा व डोकरखा नामक दो पठान सैनिको के हाथ मे चला गया। इसी समय बडौद और सीसवाली के परगने भी रायमलखीची ने अपने कब्जे मे कर लिये।

---

* नणसी भाग १ पृष्ठ ११० (काशी सस्करण)
† वीर विनोद भाग २ पृष्ठ ८
‡ अमर काव्य पृष्ठ ६३, वीर विनोद भाग २ पृष्ठ ८७
§ टाड भाग ३ पृष्ठ १४७९
¶ नैणसी भाग १ पृष्ठ ११०

सुरताणसिंह चुपचाप यह देखता रहा। उसमें यह शक्ति नहीं थी कि उनको वापिस कब्जे कर लेवे। बून्दी की यह दशा देख कर मालवा के सुलतान ने भी बून्दी पर आक्रमण किया।* सुरतानसिंह को न अपने पर भरोसा था और न सरदारों का। सरदार भी इसके अपमानजनक व्यवहार से प्रसन्न नहीं थे। अतः महाराणा उदयपुर की सलाह से हाड़ा सरदारों ने इसे सं० १५११ में राजगद्दी से उतार दिया। इसके कोई राजकुमार नहीं था। इसमे सरदारों ने मिलकर भाणदेव के परपौत्र अर्जुन को ही सं० १५११ में गद्दी पर बठाया और मुसलमानों का सामना कर बून्दी को बचाया। राव सुरताण वहां से भाग कर महाराणा के सरदार रायमल खीची के पास गया।† बाद में उसे एक गांव चम्बल नदी पर जीवन निर्वाह के लिये दे दिया गया जिसका नाम पीछे से सुरताणपुर पड़ा। राज्यच्युत राव सुरताण के वंशधर सुरतानोत हाड़े कहलाते हैं। राव अर्जुण महाराणा विक्रमादित्य की सेवा में चित्तौड़ में भी रहने लगा। जब गुजरात के सुलतान बहादुरशाह ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की तब बून्दी की २ हजार सेना का अधिपती होकर हाड़ा अर्जुन चित्तौड़ आया। महाराणा ने उसे चित्तौड़ी बुर्ज का संरक्षक बनाया। मुसलमानों न सुरंग बना कर तथा बारूद से भरकर चित्तौड़ी बुर्ज को उड़ा दिया जिसमें अर्जुन हाड़ा व उसके साथी सं० १५९२ (ई० सन् १५३५) में काम आये। इसके अर्जुन का पुत्र सुर्जण बून्दी की राजगद्दी पर बैठा।

सुरताण फिर भी शान्ति से नहीं बैठा। वह बादशाह अकबर की सेवा में पहुंचा और वहां तोपखाने का अफसर बन गया। जब अकबर ने चित्तौड़ पर (वि सं १६२४) में चढ़ाई की उस समय सुरताण ने मार्ग में से थोड़ी सी शाही सेना लेकर बून्दी पर भी चढ़ाई की परन्तु उसे सफलता नहीं मिली।

---

* कोटा राज्य का इतिहास डा मथुरालाल शर्मा भाग १ पृष्ठ ६९

† वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २२ १

११. राव सुर्जन हाडा—
(वि० सं० १६११-१६४२)

यह हाडा अर्जुन का बडा पुत्र था और राव सुरताण के राज्यच्युत होने पर वि० स० १६११ (ई० सन् १५५४) मे बून्दी की गद्दी पर वैठा। आरम्भ मे यह अपनी माता जयन्ती के आदेशानुसार राज्य करता रहा। इसके समय से पूर्व बून्दी के राव किसी न किसी प्रकार मेवाड के मातहत रहते थे,* परन्तु राव सुरजण के राज्यकाल में बून्दी का सम्बन्ध मेवाड से टूट गया और तव से मुगल बादशाहो से सम्बन्ध जुडा। इसका शासन बून्दी के इतिहास मे बडा महत्व रखता है। इसने बून्दी के छीने परगनो को जीतने के लिये एक बडी सेना इकट्ठी की। इस सेना मे उसके २० जागीरदार भाई तथा कई अन्य राजपूत सरदार थे।† सेना इकट्ठी कर इसने केसरखा और डोकरेखा पठानो को हरा कर कोटा को वापस जीता‡ और अपने पुत्र भोज को

राव सुर्जन हाडा

* वीर विनोद जिल्द २ पृष्ठ १०८ नैणसी की ख्यात के अनुसार

† वश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २२३६

‡ मालवे के सुल्तानों के प्रतिनिधि के रूपमें डोकर खा ने कोटा में २६ वर्ष तक राज्य किया। (वश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २२३९) अकवर के धायभाई आदमखा ने मालवा के शासक वाज वहादूर को हटाकर (१५६० ई०) मालवा को मुगल राज्य में मिला दिया। कोटे पर जव मांडू सुल्तानो का प्रभाव कम हुआ तव राव सुर्जन ने अपने वन्धुओ की महायता से कोटे पर अधिकार कर लिया।

सुपुर्द कर दिया जहां वह स्वतन्त्र शासक की भांति राज्य करने लगा।* मऊ के खीची रायमल को सुर्जन राव ने हरा कर उससे कोटा के उत्तर के बडौद व

रणथम्भोर किला, युद्ध

बीसवाली परगने वापिस लिए। रणथम्भोर का दुर्गम व सुदृढ़ किला महाराणा सांगा ने मांडू (मालवे) के मुसलमान सुल्तान से वि० सं० १५७२ (ई० सन् १५१५) में छीना था।† बाद मे यह किला शेरशाह के हाथों में चला गया। बादशाह अकबर ने अक्टूबर १५५८ में रणथम्भोर लेने का प्रयत्न किया लेकिन वह असफल रहा। परन्तु वह बराबर जीतने का प्रयत्न करता रहा। तंग आकर

---

* केशवराय का शिलालेख सं १६११ रविवार बावाजी श्री दामोदरपुरी गोपालमानि परम साता कराई अमल कोट महाराज कंवर श्री भोजजी राऊ सु दयाई।

† तुजुके बाबरी (बेवरीज अनुवाद) पृष्ठ ५८१

किले के पठान किलेदार ने धन लेकर सुर्जन को वि० स० १६१६ (ई० सन् १५५९) के अंतिम दिनो मे सौंप दिया।* सुर्जन ने रणथम्भोर के आसपास के परगनो को भी अपने अधिकार मे कर अपनी शक्ति बढाई। अकबर की आखो मे चित्तौड व रणथम्भोर के किले खटक रहे थे। अत वि० स० १६२५ (ई० सन् १५६८ फरवरी) मे चित्तौड विजय करने के बाद अकबर ने इस वर्ष के अप्रेल मे रण-थम्भोर को सेनाये भेज दी। हाडा सहज ही अकबर की अधीनता स्वीकार करने वाले नही थे। अत स्वय बादशाह अकबर ने रणथम्भोर का घेरा फाल्गुन १६२६ (फरवरी १५६९) मे डाल दिया।† लगभग डेढ माह तक घेरा पडा रहा लेकिन राव सुर्जन ने आत्म-समर्पण नही किया। अन्त मे जो काम शस्त्र बल से न हो सका वह युक्ति और प्रेम से किया गया। आमेर (जयपुर) के राजा भारमल कछवाहा के समझाने मे राव सुर्जन ने चैत्र सुदी ४ (ई सन् १५६९ ता० २१ मार्च) को मुगल सम्राट की अधीनता स्वीकार करली। पठानो मे रणथम्भोर लेने के पश्चात् सुर्जन की ओर से वहा का किलेदार सावतसिह कायम किया गया क्योकि इसके ही प्रयत्नो से सुर्जन को यह किला मिला था। राव सुर्जन ने जब यह किला अकबर को सौंपने का निश्चय किया तब सावतसिह हाडा ने ऐसा करना स्वीकार नही किया।

मुगलो की अधीनता स्वीकार करते समय राव सुर्जन ने बादशाह अकबर से कुछ शर्ते तय कराई थी जो इस प्रकार है।‡

(१) बून्दी के राजाओ से महल मे डोला (बेगम बनाने के वास्ते) भेजने को नही कहा जायगा।

(२) बून्दी के राजाओ को अपनी स्त्रियो को मीना बाजार (नौरोज) मे भेजने का नही कहा जायगा।

(३) बून्दी के राजाओ को अटक पार जाने को नही कहा जायगा।

(४) बून्दी के राजाओ को शस्त्र पहिने दीवानेआम व दीवानेखास मे आने की आज्ञा रहेगी।

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३, पृष्ठ १४८०—टाड लिखते हैं कि बोदला के चौहान शासक ने रणथम्बोर का किला सुजान राव को इस शर्त पर दिया था कि वह मेवाड के सामन्त के रूप में राज्य करेगा।

† वि० ए० स्मिथ अकबर दी ग्रेट मुगल पृष्ठ ९८

‡ टाड राजस्थान जिल्द ३ पृ

(५) बून्दी के राजाओं को दिल्ली राजधानी में लाल दरवाजे तक नक्कारा बजाते हुए आने की आज्ञा रहेगी।

(६) बून्दी के राजाओं के घोड़ों के शाही दाग न लगाये जायेंगे।

(७) बून्दी के राजा कभी किसी हिन्दू सेनापति के नीचे नहीं रखे जायेंगे।

(८) बून्दी राज्य से जजिया कर नहीं लिया जायगा।

(९) उनके मन्दिर इत्यादि पुण्य स्थानों का आदर किया जायगा।

(१०) जैसे मुगलों की राजधानी दिल्ली है वैसे ही हाड़ों की राजधानी बून्दी रहेगी बादशाह उन्हें राजधानी बदलने के लिये लाचार नहीं करेगा।

इन शर्तों की पूर्ण सत्यता में इतिहासज्ञों में मतभेद है। वंश भास्कर में प्रथम ७ शर्तों का ही वर्णन है* लेकिन कर्नल टाड ने १० शर्तों का उल्लेख किया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ये शर्तें राजपूती अभिमान की सूचक थीं लेकिन इन शर्तों के किये जाने में कुछ सन्देह है जिन घटनाओं का उल्लेख इन शर्तों में हुआ है उनमें कई बाद में घटित हुई थी। उदाहरण रूप से जजिया वि० सं० १६२१ (ई० सन् १५६४) में ही बन्द कर दिया गया था घोड़ों के बादशाही दाग लगाने की प्रथा वि० सं० १६३१ (ई० सन् १५७४) में शुरू हुई, अटक पार जाने की आशंका उस वक्त थी ही नहीं क्योंकि बादशाह अकबर के राज्य की सीमा उस समय इतनी बड़ी हुई नहीं थी। इसलिये इन बातों का समावेश पहले से ही सुलहनामे में आना वास्तविकता से दूर ले जाती है। फिर ऐसा कोई सुलहनामा बून्दी में पाया नहीं जाता है। इस सुलहनामे का न तो फारसी तवारीखों में† और न मूणोत नैणसी के ग्रन्थ में ही इसका उल्लेख है। नैणसी ने इतना तो अवश्य लिखा है कि राव सुर्जन ने सं० १६२६ की चैत्र सुदी ६ (ता० ५ मार्च १५६९ ई०) को बादशाह अकबर की मातहती स्वीकार करते हुए इस शर्त के साथ गढ़ बादशाह को सौंपा कि मैंने महाराणा मेवाड़ का अन्न खाया है इसलिए उस पर चढ़ कर कभी नहीं जाऊँगा।‡ रणथम्भोर से लिया

---

* वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २२१५ स्वयं टाड भी इस सम्बन्ध में लिखता है कि यह वृत्तान्त बून्दी नरेश ने अपने भाटों से संकलित कर उसे दिया था और यह कहीं कहीं चारण भाटों की ख्यातों से बढ़ाया गया है। (टाड राजस्थान भाग ३ पृष्ठ १४८२)

† अबुलफजल ने अकबर नामे में इन शर्तों का कोई उल्लेख नहीं किया अकबर नामा खण्ड ११७

‡ मुहणोत नैणसी की ख्यात भाग १ पृष्ठ १११ काशी संस्करण

जाने पर अजमेर सूबा के अन्तर्गत एक सरकार वना दी गई जिसके नीचे बून्दी और कोटा के परगने रक्खे गये।

जो कुछ भी हो लेकिन यह सत्य है कि राव सुर्जन को अकबर ने लोभ देकर अपने पक्ष मे मिलाया था।

इन हाडो ने भी वाद मे मुगलो का वरावर साथ देकर उनके राज्य विस्तार मे योग दिया। कहते है कि राव सुर्जन के विना लडे रणथम्भोर का किला वादशाह अकवर को सौप देने पर मेवाड के सरदारो मे उसकी वडी वदनामी हुई। अन्तिम दिनो मे राव सुर्जन ने अपना राजकाज अपने पुत्र दूदा को सौंप दिया और स्वय काशी मे ही रहने लगा।

अपनी जातियो मे वह चाहे लज्जित हुआ हो लेकिन वह वादशाह अकवर द्वारा वहुत ही सम्मानित हुआ। रणथम्भोर सौंपने के वाद वादशाह ने उसे हजारी जात और मनसब तथा गढकटगा (मध्य प्रदेश) की जागीर इनाम मे दी। वहा उसने वहा के आदिम निवासी—गोडो का दमन किया तथा उनकी राजधानी वारीगढ पर मुगल अधिकार स्थापित किया। इस पर वादशाह सुर्जन पर वहुत प्रसन्न हुआ और उसे रावराजा की उपाधि दी तथा ५,००० का मनसव दिया* वादशाह ने उसे बून्दी के निकट के २६ परगने तथा वनारस के निकट २६ परगने दिये।† अत नवम्बर १५७५ से वह अपने जागीर के परगनो मे ही रहने लगा तथा वहा वनारस (काशी) को अपना निवास स्थान वना लिया। वनारस मे इसने कई इमारतें, महल, घाट और वाग वनाये।

काशी मे उसके निवास करते समय उसके अनुरोध से ही चन्द्रशेखर कवि‡ ने वही "सुर्जन चरित" नामक सस्कृत काव्य स० १६३५ (ई० सन् १५७८) के आसपास वनाना शुरू किया था। (सर्ग २० श्लोक ६४) परन्तु उसकी समाप्ति से पूर्व ही सुर्जन का स्वर्गवास स० १६४२ (ई० सन् १५८५) मे हो गया और यह ग्रथ उनके पुत्र भोज के समय समाप्त हुआ। इसमे चौहान वश की वशावली

---

* वश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २२८४-८५

† उपरोक्त २२८६, अकवर ने उसे वनारस व चुनार का हाकिम भी नियुक्त किया।

‡ यह कवि गौड देश (वगाल) निवासी अम्वष्ठ (वैद्य) जाति के जितामित्र नामक व्यक्ति का पुत्र था।
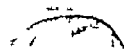
भी महवान के वंशधर वासुदेव से लेकर राव सुर्जन तक दी है।* इस काव्य में पृथ्वीराज रासो के निर्माता चन्द कवि का नाम भी मिलता है†। इससे यह भी ज्ञात होता है कि सुर्जन ने मालवा अधिपति का किला अपने पराक्रम से छीना था।

राव सुर्जन के तीन राजकुमार दूदा भोज और रायमल तथा एक पुत्री पुरबाई थी। पुरबाई ने विधवा हो जाने के बाद बून्दी में पीताम्बर (विष्णु) का मन्दिर बनवाया।‡ रायमल को जागीर में पलायथा मिला था जो इस समय कोटा राज्य में है। राव सुर्जन के काशी में रहने के कारण बून्दी का राज्य उसका पुत्र दूदा सम्भालता था। १५७६ में दूदा और भोज में बून्दी के शासन प्रबन्ध के मामले को लेकर आपस में अनबन हो गई। स्वयं सुर्जन ज्येष्ठ पुत्र दूदा से नाराज था क्योंकि वह अकबर से मेल रखने के विरुद्ध था।§ इस कारण भोजदेव को बून्दी का राज्य देना चाहा। इस पर दूदा अगस्त १५७६ में विद्रोही हो गया। बादशाह ने विद्रोह को दबाने के लिये दो बार सेना भेजी। दूदा अन्त में हार कर उदयपुर पहुँचा और महाराणा की सहायता से लूट-खसोट करने लगा। इधर बादशाह ने बून्दी राज्य राजकुमार भोज को १५७७ के पिछले महीनों में दे दिया। बाद में १५७८ में शाहबाजखां की सिफारिश से उसके अपराध क्षमा किये गये और वह दरबार में पहुँचा। बादशाह ने दूदा को पंजाब की ओर नियुक्त किया परन्तु दूदा वहाँ से भाग निकला और विद्रोही हो गया। उसने फिर बून्दी पर कब्जा पाने का प्रयत्न किया लेकिन असफल रहा।

---

* इस २ सर्ग (अध्याय) के महाकाव्य में ११६७ श्लोक हैं। यह काव्य सर्व प्रथम राजेन्द्र लाल मित्र को वि सं १९२७ (ई सन् १८७०) में काशी निवासी भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के यहाँ से प्राप्त हुआ था (देखो "नोटिस आफ संस्कृत मेनुस्क्रिप्ट्स" बाई राजेन्द्रलाल मित्र जिल्द १ न ७१ सन् १८७० ई) तत्पश्चात् महा महोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री एम ए सी आई ई को यह काव्य प्राप्त हुआ था और उनके द्वारा ही सरस्वती भण्डार लाइब्रेरी बून्दी (क्रमांक नम्बर १४१) में यह काव्य पहुँचा। (देखो हरप्रसाद शास्त्री डिस्क्रिप्टिव कैटालोग व जिल्द ४ नं १ ८४ सन् १९२१ ई)

† अथ भगवन् भूवलयं बिभ्रन्—भोमावलीभाष्यविलासभाषम्
चन्द्रामिव पूर्वे मनेन विशेषिणी स्फुरता नगाभवन्ती छन्द १ सर्ग ११५२ श्लोक

‡ पुरबाई की आज्ञा से आगामी रामचन्द्र ने फाल्गुन सुदि ८ गुरुवार (वि सं १६५२) को पीताम्बर चरित नामक खण्डकाव्य बनाया था। इसके शुरू में राजवंश स्तुति तथा विष्णु स्तुति है। उक्त पं रामचन्द्र कवि के पिता का नाम जनार्दन तथा पितामह का पं पुरुषोत्तम था (श्लोक १११)।

§ अकबर ने दूदा का नाम लकड़ खां रख दिया था।

वहा इधर-उधर मारा-मारा फिरता रहा। अन्त मे सितम्बर १५८५ मे (वि० स० १६४२ मे मालवा मे मर गया।* इस प्रकार राजकुमार भोज के राजमार्ग का काटा निकल गया।

राव सुर्जन वडा धार्मिक, उदार बुद्धिमान और प्रतापी नरेश था। अकबर के कृपापात्र होने के कारण इसने हिन्दू तीर्थ यात्रियो के लिये वहुतसी सुविधाये दिलवाई। काशी मे घाटो की इमारतें और २० जलाशय वनवाये। इससे इनकी बहुत यश-वृद्धि हुई। महाराणा उदयसिह के साथ जव इसने द्वारका की यात्रा की उस समय वहा रणछोडजी का मन्दिर बहुत मामूली सा था, इससे राव सुर्जन ने महाराणा से आज्ञा लेकर नया मन्दिर वनवाया जो अब तक विद्यमान है।†

इनके जीवन का अन्तिम समय काशी मे ही बीता और वि० स० १६४२ (ई० सन् १८८५) मे यह वही परलोक सिधारा।‡ काशी मे मणिकर्णिका घाट के पास ब्रह्मनाल (मुहल्ला) के बीच इसके और उसके साथ सती होने वाली रानियो के समाधि स्थान (चवूतरे) बने हुए है।

---

* बून्दी की ख्यातो में इस घटना का उलेख इस प्रकार दिया गया है 'अपने बेटे दूधा को राजकाज सौंप राव सुर्जन काशी में जा रहे थे। किसी सवव से दोनो भाइयो मे अनबन हो गई और पीछे से राव सुर्जन ने भी अपने बडे बेटे से रजीदा होकर भोज को बून्दी का राज दिलाना चाहा जिस पर दूदा नाराज होकर खुल्लम खुल्ला अपने पिता से वागी होगया और पादशाह से रूखसत हासिल किए विनाही अपने वतन में आकर लडाई का सामान दुरस्त करने लगा। उसकी इस हर्कत से खफा होकर पादशाहने बून्दी भोज को बख्श दी पहले थोडी सी फौज दूधा को मजा देने के वास्ते भेजी। उसे दूधा ने मार भगाई। तव राव सुर्जन के इतिफाक से जीनखा कोकतलाश को फौज देकर भेजा और बून्दी फतह होने पर पादशाह ने राव सुर्जन को दो हजारी मसव अता किया। दूधा फिसाद करने से बाज न रहा तब वादशाह ने शाहवाज खा की मातहती में फौज भेज कर दूधा को कैद कर पनाव की तरफ भेज दिया। मगर वह वहा से भाग आया और मालवे की तरफ जाता हुआ स० १६३८ वि० में रास्ते में मर गया।

† मूता नैणसी भाग १ पृष्ठ १११

‡ टाड राजस्थान तृतीय भाग पृष्ठ स० १४८४

१२ राव भोज–
(वि० स० १६४२ १६६४)

यह राव सुर्जन का दूसरा पुत्र और बांसवाड़ा के रावल जगमाल उदयसिंहोत का दोहिता था।* यह अपने पिता के जीवनकाल में ही सं० १६३३ (ई० सन् १५७७) से राज्य का प्रबन्ध करने लग गया था † परन्तु राजसिंहासन पर अपने पिता की मृत्यु के बाद स० १६४२ (ई० सन् १५८५) में बैठा। इसका बड़ा भाई दूदा अपने पिता सुर्जन से विद्रोह कर बैठा था और फिर वि सं १६४२ (ई० सन् १५८५) में मर भी चुका था।

राव भोज

यह बहुत समय तक मानसिंह के अधीन शाही युद्धों में रहा और उड़ीसा में इसने अफगानों के युद्ध में वीरता दिखलाई। जिस समय गुजरात में इब्राहीम हुसैन मिर्जा अकबर ने स १६२९ (ई० सन् १५७२) में चढ़ाई की उस समय राव भोज भी युद्ध में था। वि सं० १६३० (ई० सन् १५७३) में सूरत का किला और अहमदनगर का किला सं० १६५७ (ई० सन् १६) में विजय किया गया था। इन युद्धों में राव

† उमराये हनूद पृष्ठ ९५

भोज ने बडी वीरता दिखाई थी । इसी अहमदनगर के युद्ध मे प्रसिद्ध वीरागना अहमदनगर की बेगम चांद बीबी मय अपने ७०० वीर स्त्रियो के देश की स्वतत्रता के लिये लडते लडते काम आई थी ।

अहमदनगर के युद्ध मे भोज की वीरता पर प्रसन्न होकर बादशाह ने भोज के नाम पर वहा के किलो की बुर्ज का नाम भोज बुर्ज रक्खा था ।*

बादशाह अकबर के दरबार मे राव भोज का मसब एक हजारी था ।† ख्यातो मे लिखा है कि राव भोज की बादशाह अकबर से अन्तिम दिनो मे नही बनी । इसका यह कारण बतलाया जाता है कि अकबर ने राव भोज की सुन्दर पुत्री से विवाह करना चाहा, परन्तु भोज ने टालने के लिये यह कह दिया कि मेरी कन्या की मगनी (सगाई) हो चुकी है । इस पर बादशाह ने वर का नाम पूछा । भोज ने दरबार मे खडे हुए राजपूत नरेशो की तरफ प्रश्न भरी दृष्टि से देखा कि कौन वीर ऐसा साहसी है कि जो मेरी कन्या से विवाह करेगा । इस पर किसी ने राव भोज से आँख नही मिलाई, केवल जोधपुर के राठौड मालदेव के पौत्र सिवाणें के राव कल्ला, रायमलोत ने मूछ पर हाथ फेरा । इस इशारे को समझ कर भोज ने कल्ला राठौड को अपना भावी दामाद बता दिया । बादशाह ने कल्लाजी राठौड को सगाई छोडने को कहा पर उस वीर ने नही माना और बून्दी जाकर राव भोज की कन्या मे शादी करली तथा अकबर के क्रोध से अपनी जान व जागीर को खो दिया ।‡

जब बादशाह अकबर का देहात वि० स० १६३२ कार्तिक सुदि १४ (ई० सन् १६०५ ता० १५ अक्टूम्बर) मगलवार को हो गया तब राव भोज भी आगरा से बून्दी लौट आया । तख्त पर बैठने के बाद जहागीर ने आमेर के राजा मानसिह की पोती और जगतसिह की पुत्री जो राव भोज की दोहिती थी उससे विवाह करना चाहा, परन्तु भोज ने इसमें भी रोडा अटका दिया । इससे बादशाह नाराज हो गया और उसने निश्चय किया कि काबुल से लौटने पर राव भोज

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४८५

† उमरायेहनूद पृष्ठ ९५ महासिरल उमरा पृष्ठ २७४

‡ टाड ने अकबर व भोज की अनबन का कारण अन्य ही बताया कि अकबर की बेगम जोधाबाई की मृत्यु हो जाने पर यह ऐलान कराया कि सब सरदार दाढी मूछ मुडवाऐं । राव भोज ने इसका विरोध किया तथा जबरदस्ती करने पर शस्त्रों द्वारा विरोध किया । अकबर ने उसे क्षमा कर दिया और पुन अपनी सेवाओ में लेलिया ।

को सजा दूंगा।* परन्तु इसी वर्ष वि० सं० १६६५ (ई० सन् १६०८) में भोज का देहांत बून्दी में हो गया।† राव भोज ने २२ वर्ष राज किया। इसके चार राजकुमार रतनसिंह हृदय नारायण,‡ केशवदास और मनोहरदास थे।

१३ राव रतन हाड़ा—
(वि० सं० १६६५ १६८८)

इसका जन्म वि० सं० १६२८ सुदि १० रविवार (ई० सन् १५७१ ता० १ जून रविवार को हुआ। वि० सं० १६६४ (ई० सन् १६०७) में यह बूंदी के सिंहासन पर बैठा।

राव रतन हाड़ा

अपने पिता भोज की तरह यह भी सं० १६६५ में सम्राट जहांगीर का कृपा पात्र था। सं० १६७ (ई० सन् १६११) में यह शाहजादा खुर्रम (शाहजहां) के साथ मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह के विरुद्ध लड़ने को भेजा गया था। बाद में सं० १६७१ वि० में शाही फौज के साथ दक्खन में भी गया। वहां कुछ समय तक रहकर थोड़े दिनों के लिये यह अपने देश को चला आया। इसी समय सम्राट् जहांगीर लोगों के बहकाने से शाहजादा खुर्रम से नाराज हो गया।§ खुर्रम ने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। तब राव रतन सं० १६८ में

---

* उमराये हनूद ६५ महासिरुल उमरा पृष्ठ २०४ † उमराये हनूद पृष्ठ ६५

‡ भोज ने गद्दी पर बैठते समय अकबर की स्वीकृति लेकर हृदयनारायण को कोटे का शासक नियत किया। जहां उसने १५ वर्ष तक राज्य किया। हृदयनारायण के वंशज हरदावत कहलाये (डा० मथुरालाल शर्मा कोटा राज्य का इतिहास पृष्ठ ८१)।

§ नूरजहां के कारण जहांगीर व खुर्रम में अनबन हो गई। नूरजहां अपने पहले पति शेरअफगन

शाहजादे पर्वेज और महावतखा के साथ शाहजादे खुर्रम (शाहजहा) का सामना करने के लिये दक्षिण मे भेजा गया। वहा से पर्वेज व महावतखा पूर्व को गये तब रतन को बुरहानपुर जिले का सूबेदार बनाया।* उस समय खुर्रम ने बुरहानपुर का किला लेना चाहा परन्तु राव रतन हाडा ने खुर्रम की सेना का तीन बार मुकाबला कर उसे हटा दिया। अन्तिम हमले मे राव रतन खुद "जगजोत" नामक हाथी पर सवार होकर शाहजादे के मुकाबले को आया और शाहजादे की सेना पर टूट पडा और विजय पाई।† इस युद्ध मे राव के राजकुमार माधोसिह हरिसिंह भी बडी वीरता से लडे और दोनो ही सख्त घायल हुए थे। राव रतन का भाई हृदयनारायण बादशाह के आदेश से इलाहाबाद की ओर गया क्योकि इसके पहिले ही खुर्रम उधर चला गया था। इलाहाबाद के पास झासी नामक स्थान पर शाही सेना और खुर्रम की सेना का सामना वि स १६८० (जुलाई १६२४) में हुआ। खुर्रम इस युद्ध मे हार कर भाग गया। लेकिन हृदयनारायण भी डर कर भाग गया। बादशाह हृदयनारायण की कायरता पर बहुत नाराज हुआ। बादशाह ने उसको कोटा की गद्दी से उतार दिया और राव रतन को कोटा का राज्य स्थायी रूप मे दे दिया।‡

राव रतन की दक्षिण को सेवाओ से प्रसन्न होकर जहागीर ने स १६८२ मे उनका मसब ५ हजारी जात व पाच हजार सवार का कर दिया और "रावराय" (रावराजा) की उपाधि दी। इस प्रकार इसने जहागीर के दरबार मे अपने पिता

द्वारा पैदा लडको के पति (जहांगीर का चौथा पुत्र) को खुर्रम के स्थान पर राज्य दिलाना चाहती थी अत शहरयार खुर्रम को कन्धम् लेने भेजा गया। खुर्रम नूरजहां की चालाकी समझ कर जाने की आनाकानी करने लगा और फिर बाद में विद्रोह कर दिया।

* खफीखा जिल्द १ पृष्ठ ३४८

† महासिरुल उमरा प्रथम भाग पृष्ठ ३१६ (हिन्दी सस्करण)

‡ जहागीरी जिल्द २ पृष्ठ २६४-८६। वश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २४६६। खफीखा जिल्द १ पृष्ठ ३४६-५६। कर्नल टाड ने (भाग ३ पृष्ठ १४८७ तुजु के जहांगीरी) लिखा है कि स० १६३५ कार्तिक सुदी १५ मगलवार (ई० सन् १५७८) को हुआ था और इसी युद्ध में राव रतन का पुत्र माधोसिंह घायल होने से जहागीर ने उसे कोटा का अलग राज्य दिया। परन्तु यह ठीक नही है। "तुजके जहागीरी" के अनुसार बुरहानपुर का यह युद्ध हि० सन् १०३४ (ई० सन् १६२५ वि० स० १६८२) में हुआ। स० १६२५ में तो सम्राट् जहागीर सात वर्ष का बालक था। माधोसिंह को कोटे का राज्य सम्राट शाहजहा ने हि० सन् १०४१ (ई० सन् १६३१ वि० स० १६८८) में राव रतन की मृत्यु के पीछे दिया था।

से भी अधिक यश और सम्मान प्राप्त किया। यह मुगल साम्राज्य का स्तम्भ माना जाता था। इसने शाही सेना की सहायता से मऊ के खीची चौहानों को हराया और उनके गढ़ गागरोण मऊ, बाघरणी आदि स्थानों पर अपना अधिकार कर लिया।* मऊ के इस युद्ध में इसके दोनों भाई हृदयनारायण और केशवदास तथा दोनों पुत्र माधोसिंह और हरिसिंह भी साथ थे। केशवदास अपने सौ साथियों सहित उसी युद्ध में मारा गया था।† दरियाखाँ नामक प्रसिद्ध लुटेरे को जो मेवाड़ व उसके आस-पास लूट-खसोट करता था इसने पकड़ कर सम्राट के पास पहुँचाया। बादशाह ने उस पर प्रसन्न होकर इसे नौबत नक्कारे का शाही निशान राजकीय उत्सवों के लिए पीला झंडा और डेरे के लिये लाल झंडा लगाने की इज्जत दी जो अभी तक प्रचलित है।‡ इसने इस प्रकार हर तरह से बादशाह को प्रसन्न किया और इधर मेवाड़ के महाराणाओं से भी मेलजोल ही रखा। इस तरह इसने अपने राज्य को बढ़ाने के साथ ही साथ अपना यश भी फैलाया। न्यायप्रिय भी यह कम नहीं था। इसने न्यायशीलता का जो परिचय दिया था वह इतिहास प्रसिद्ध है। कर्नल टाड ने लिखा है कि राव रतन के ज्येष्ठ पुत्र युवराज गोपीनाथ का एक ब्राह्मणी से प्रेम था और उसकी चर्चा सारे शहर में फैल गई थी। ब्राह्मण ने एक दिन उसे मार डाला और उसकी लाश रास्ते में फेंक दी। जब राव रतन को यह पता लगा तो वह चुप रहा और किसी को कुछ भी दण्ड नहीं दिया। गोपीनाथ की मृत्यु का कारण फारसी तवारीख "बादशाहनामा" में कुछ और ही बताया है। उसमें लिखा है कि राजकुमार गोपीनाथ दुबला पतला होने पर भी बहुत ताकतवर था। ताकत से बेढब काम करने के कारण वह बीमार होकर २५ वर्ष की आयु में वि० सं० १६७१ (ई० सन् १६१४ हि० सन् १०२३) में मर गया।§ जो हो युवराज गोपीनाथ का देहांत भरी जवानी में हो गया। उसके पांच पुत्र शत्रुशाल इन्द्रशाल¶ बैरीसाल मोहकमसिंह और महासिंह थे।

राव रतन का देहांत वि० सं० १६८८ (ई० सन् १६३१) को बालाघाट (मध्यप्रदेश) के पड़ाव में हुआ जहां उसने बुरहानपुर में अपने नाम पर रतनपुर नाम का कस्बा बसाया था।$ इसके तीन राजकुमार थे। पहिला गोपीनाथ तो

---

* वंश भास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २५७१ † उपरोक्त पृष्ठ २५७१ २५८
‡ टाड। एनाल्स एण्ड एण्टीक्वीटीज आफ राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४८७
§ मुन्शी देवी प्रसाद "शाहजहांनामा" भाग १ पृष्ठ ३६
¶ यह सम्राट शाहजहां के पांच सौ जात व चार सौ सवार के मनसबदार थे।
$ टाड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४८७ बादशाह नामा पृष्ठ ४ १

कुँवरपने मे ही चल वसा था। दूसरा माधोसिंह जो वाद मे कोटा का राजा वना। हृदयनारायण को कोटा को गद्दी से हटाये जान के वाद राव रतन ने कोटा का राज्य माधोसिंह को दे दिया था। माधोसिंह कोटा का राजा माना जाने लगा। उसको वाद मे अलग से कोटा का राज्य सम्राट शाहजहा ने वि स १६८८ (ई सन् १६३१) मे दिया।* हरिसिह को राज्य से पीपलदा की जागीर मिली।

राव रतन के स्वर्गवास के पश्चात् उसका पौत्र और गोपीनाथ का पुत्र शत्रुशाल बूदी को राजगद्दी पर बैठा।†

१४. राव शत्रुशाल हाडा—
(वि० सं० १६८८-१७१५)

ये राव रतन के पोते और गोपीनाथ के पुत्र थे। राव गोपीनाथ के ११ पुत्र और थे। स० १६८८ मे २५ वर्ष की आयु मे राव शत्रुशाल बून्दी के राज-सिंहासन पर बैठा। इसका जन्म वि० स० १६६३ आश्विन सुदि १५ रविवार (ई० सन् १६०६ ता० १९ अक्टूबर) को हुआ था। यह वडा वीर और पराक्रमी नरेश था। इसने अनेको युद्धो मे भाग लिया था। यह बादशाह शाहजहा का वडा कृपा पात्र था।‡ जब यह राज-सिंहासन पर बैठा तब वादशाह ने इसे राव का खिताव तीन हजारी जात व दो हजार सवार का मनसव§ और देकर बून्दी व

---

* महम्मद वारिस वादशाह नामा पृष्ठ ४०१

† वाकीदास एतिहासिक बातें, सख्या ५४९।

‡ शाहजहाँ ने बून्दी का राजा स्वीकार किया और दिल्ली (राजधानी शाही) का सूबेदार वनाया—टाड जिल्द १४८९।

§ मुआसिरुल उमरा हिन्दी सस्करण भाग १ पृष्ठ ४०१-४०२।

खटकड़ आदि परगने जागीर में देकर खानेजमा के साथ दक्खिन में भेजा गया जि

राव शत्रुशाल हाड़ा

स० १६८९ (ई० सन् १६३२) में दौलताबाद का किला जीतने में इसने बड़ी बहादुरी दिखलाई। इस सेवा के उपलक्ष में इसकी मनसब में एक हज़ार सवार की वृद्धि हुई। स० १६९० (ई० सन् १६३३) में परेंडा के किले के घेरे में इसने अच्छा काम किया। सं० १६९१ में जब खानेजमा* बालाघाट का सूबेदार नियुक्त हुआ तब यह भी उसके साथ ही वहाँ रक्खा गया। जब सं० १६९२ (ई० सन् १६३५) में बादशाह साहू भोसला को दण्ड देने के लिये और दक्षिण के मुसल्मानों का दमन करने के लिये खानदेश गया तब उसके बुरहानपुर नगर में पहुँचने पर राव शत्रुशाल खानेजमा के साथ सेवा में पहुँचा।† जब सं० १६९८ (ई० सन् १६४१) में बादशाह ने शाहज़ादा दाराशिकोह को ईरान के बादशाह के हमले से रक्षा करने के लिये कंधार को रवाना किया तब राव शत्रुशाल को भी घोड़ा व खिलअत देकर साथ भेजा। वहाँ से लौटने पर सं० १७०१ (ई० सन् १६४४) में खिलअत सहित अपने राज्य (बून्दी) को जाने की छुट्टी मिली। वि० सं० १७०२ में शाहज़ादा मुरादबख्श के साथ यह बलख और बदख्शाँ की चढ़ाई में भेजा गया।‡ सं० १७०५ (ई० सन् १६४८) में जब यह शाही दरबार में लौटा तब सम्राट ने इसका मनसब साढ़े तीन हज़ार सवार कर इसे शाहज़ादा औरंगज़ेब के साथ क़ज़िलबाशों के विरुद्ध कंधार की चढ़ाई पर भेज दिया। सं० १७०८ तथा १७०९ की कंधार की चढ़ाइयों में भी यह नियुक्त हुआ। इन युद्धों में इसने बड़ी वीरता दिखलाई।§

जब बादशाह शाहजहाँ वृद्ध हो गया तो उसने अपने साम्राज्य को चारों बेटों में बाँट कर उनको अलग अलग प्रान्तों का सूबेदार बना दिया। शुजा

* इसका असली नाम [illegible] था।

† बादशाहनामा पृष्ठ १४ ९ जिल्द १।

‡ मुआसिरुल उमरा भाग १ पृ० ४ १।

§ मुआसिरुल उमरा पृ० ४ १।

बगाल प्रान्त, औरगजेब दक्षिण, मुरादबख्श गुजरात और ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोह दिल्ली मे रहा। उस समय राव शत्रुशाल हाडा दिल्ली का सूबेदार था। जब शाहजादा औरगजेब दक्षिण मे था शत्रुशाल भी उसके मातहत एक उच्च पदाधिकारी था।* औरगजेब ने दक्षिण के बडे-बडे किले दौलताबाद, बीदर, गुलबर्गा और दमोनी जीते।† इन विजयो मे शत्रुशाल की हाडो की सेना ने अपूर्व वीरता बताई। मुगल साम्राज्य की ऐसी उत्तम सेवा के उपलक्ष में ही सम्राट ने शत्रुशाल का मनसब साढे तीन हजारी जात व साढे तीन हजार सवार का कर दिया था। जब वि स १७१४ (वि स १६५७) मे बादशाह शाहजहा बहुत बीमार पडा तब उसके चारो पुत्रो ने तख्त के लिये लडना आरम्भ कर दिया। शाहजादा शुजा बगाल से आगरा की ओर चल पडा। दारा सम्राट के पास ही था। औरगजेब ने चालाकी से मुराद को बहका कर अपने पक्ष मे कर लिया और आगरे की ओर बढने की तैयारी की। इस पर बादशाह ने शत्रुशाल हाडा को दक्षिण से बुलवाया।‡ औरगजेब ने उसे रोका परन्तु जैसे-तैसे वह नर्बदा पार करके बून्दी पहुँच गया और वहा से शीघ्र ही आगरा को चल दिया। शाहजहां ने इसे औरगजेब और मुराद की सम्मिलित सेना को रोकने के लिये दारा के साथ भेजा। विदा करते समय बादशाह ने बारा और मऊ के परगने कोटा के राव मुकन्दसिंह से छीन कर वापस शत्रुशाल को दे दिये।§ दाराशिकोह की सेना सुसज्जित होकर धौलपुर के पास सामूगढ मे जा डटी। औरगजेब व मुराद भी दक्षिण और गुजरात से होते हुए उज्जैन के पास धर्मत (फतहाबाद) की लडाई¶ मे विजयी होकर आगरा से कुछ मील पूर्व की ओर सामूगढ पहुँचे। इस युद्ध में हाडा, राठौर, सीसोदिया और गौड राजपूतो का नेतृत्व शत्रुशाल ने किया और उसके रिश्तेदारो ने अपूर्व वीरता बतलाई। कर्नल टाड ने लिखा है कि जब सेना के बीच मे शाहजादा दाराशिकोह जो हाथी पर सवार था एकाएक गायब हो गया तब सेना तितर-बितर होने लगी। यह देख कर राव शत्रुशाल हाथी पर सवार होकर लडा परन्तु तोप के एक गोले ने उसके हाथी को भगा दिया। इस

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३ १४८६।

† यदुनाथ सरकार—हिस्ट्री ऑफ औरगजेब भाग ४ पृष्ठ २६८, व २७२।

‡ टाड—राजस्थान जिल्द ३ पृ० १४६०।

§ वश भास्कर जिल्द ३ पृष्ठ १३७।

¶ धर्मत के युद्ध में हाडा शत्रुशाल ने जसवन्तसिंह राठोड (जोधपुर नरेश) का साथ नही दिया। क्योंकि उस युद्ध का नेतृत्व राठोड सरदार कर रहा था था जो कि शत्रुशाल को स्वीकार नहीं था (टाड राजस्थान भाग ३ पृ० १४९१।

पर शत्रुशाल हाथी पर से उतर कर एक घोड़े पर सवार होकर लड़ा।* शत्रुशाल ने स्वयं औरंगजेब व मुराद पर भी आक्रमण किया लेकिन वे बच निकले। अंत में अचानक उसके ललाट में एक गोली लगी जिससे वह रणक्षेत्र में ही ज्येष्ठ सुदि ९ (ई सन् १६५८ २९ मई सोमवार) को वीर गति को प्राप्त हुआ।† इस युद्ध में इसके पुत्र भारतसिंह व भाई मोहकमसिंह अपने दो पुत्रों सहित व उदेसिंह आदि भी मारे गये।

इसके चार पुत्र भावसिंह भीमसिंह भगवतसिंह भारतसिंह थे। इसका एक विवाह महाराणा जगतसिंह उदयपुर की राजकुमारी के साथ हुआ था।‡ इसने बून्दी में छत्रमहल और पाटण में केशवराय का मन्दिर बनवाया था।§ शत्रुशाल के अलावा गोपीनाथ के ग्यारह पुत्रों में इन्द्रभाण ने इन्द्रगढ़ में अपनी सत्ता स्थापित की। बेरीसाल ने बलवण पाया। राजसिंह को हरिगढ़ मिला। मुहकमसिंह को आंतरदाह महासिंह को थाणा प्राप्त हुआ।¶

---

१५ राव भावसिंह हाडा—
(वि० सं० १७१५ १७३८)

राव शत्रुशाल के ज्येष्ठ पुत्र राव भावसिंह हाडा का जन्म फागुण बदि ३ मंगलवार (ई सन् १६२४ ता २८ जनवरी को हुआ था। बादशाह औरंगजेब

---

* टाड राजस्थान भाग १ पृष्ठ १४६२।
† बांकीदास ऐतिहासिक बातें संख्या १६१२।
‡ वीर विनोद भाग २ पृष्ठ सं १२१।
§ बांकीदास ऐतिहासिक बातें संख्या १४२ टाड राजस्थान भाग १ पृष्ठ संख्या १४९२।
¶ उपरोक्त पृष्ठ संख्या १४८९।

राव भावसिह हाडा

इसके पिता से नाराज था* लेकिन इसके भाई भगवन्तसिह हाडा को जो पहले से ही दिल्ली मे शाही सेवा मे रहता था व औरगजेब के साथ दक्षिण मे था वादशाह ने राव का खिताव और वून्दी का कुछ भाग मऊ, वारा आदि राज्य परगने देकर वून्दी का अलग राजा बना दिया।† लेकिन उसके कुछ ही समय वाद उसका देहान्त हो गया।‡ तव वादशाह ने ये परगने जगतसिह को मुकाते पर दे दिये। इतना ही नही उसने शिवपुर के राजा आत्माराम गौड और वरसिह वुन्देले को वून्दी पर चढाई करने को भेजा, परन्तु खातोली नामक गाव के पास हार कर वह वापिस लौट गया।§ इस तरह जव भावसिह हाडा कावू मे नही आया तव औरगजेव ने नीति से काम लिया और भावसिह को माफी देकर अपनी नेकनियती की प्रतिज्ञा कर आगरे वुलवाया। ई० सन् १६५८ की नवम्बर मे यह औरगजेव के दरवार मे गया और तीन हजारी जात व दो हजार सवार के मन्सब, डका, झडा, राज की पदवी और वून्दी आदि जिलो की जागीर पाकर सम्मानित हुआ।¶ उसी समय वादशाह ने भावसिह को शाहजादा मुहम्मद सुल्तान के साथ वागी शाहजादा शुजा का सामना करने को भेजा। प्रयाग के पास मुकाम कोडा मे जो युद्ध वादशाह औरगजेव तथा शुजा के बीच माघ वदि ६ (ई० सन् १६५८ ता० २४ दिसम्बर शनिवार) को हुआ उसमे राव भावसिह शाही तोपखाने का अफसर था।$ इसके वाद यह दक्षिण मे छत्रपति

---

* महाराव शत्रुशाल ने मुगल उत्तराधिकारी के युद्ध में दाराशिकोह का पक्ष लिया था। उसकी मृत्यु समुगढ के युद्ध में हुई थी अत औरगजेव इससे नाराज था।

† वश प्रकाश पृ० ७६।

‡ इसकी मृत्यु मऊ में हुई।

§ टाड राजस्थान भाग ३ पृ० १४९२—हाडाओ ने शाही झण्डा और माल असवाब पर अधिकार कर लिया था। बाद में हाडाओ ने गौड शासक आत्माराम की राजधानी शिवपुर पर भी अधिकार कर लिया था।

¶ टाड राजस्थान भाग ३ पृ० १४९३। $ वश भास्कर तृतीय भाग पृ०

शिवाजी के विरुद्ध लड़ने को नियुक्त हुआ। सं० १७१७ (ई० सन् १६६) में इसने अमीरुल उमरा शायस्ताखां के साथ चाकण के किले को घेर कर उस पर अधिकार कर लिया। मिर्जा राजा जयसिंह (आमेर) के दक्षिण पहुँचने पर यह उसके साथ चढ़ाइयों में रहा। सं० १७२२ (ई० सन् १६६५) में दिलेरखां के साथ इसने चांदा के राजा पर चढ़ाई की। यह औरंगाबाद (दक्षिण) का फौजदार नियुक्त होकर बहुत समय तक वहां रहा।* वहां इसने कई इमारतें बनवाई और अपनी वीरता दान और उदार भावों के लिये बहुत प्रसिद्धि प्राप्त की। इसने औरंगाबाद के पास अपने नाम पर भावपुरा नामक गांव बसाया था। उसी गांव में वि० सं० १७३८ वैशाख वदि ८ (ई० सन् १६८१ ता० १ अप्रैल शुक्रवार) को इसका स्वर्गवास हुआ।† इसका एक मात्र पुत्र पृथ्वीसिंह बालपने में ही मर गया था इसलिए इसने अपने छोटे भाई भीमसिंह के पुत्र किशनसिंह को गोद (दत्तक) लिया। बाद में औरंगजेब के इशारे पर अपने कट्टर धार्मिक विचारों के कारण किशनसिंह सं० १७३४ (ई० सन् १६७७) में उज्जैन में मारा गया।‡ यह अपने धर्म का बड़ा पक्का था। जब औरंगजेब ने बून्दी के पास केशवरायजी का मन्दिर तोड़ने को एक सेना भेजी तब किशनसिंह ने सेना से मुकाबला करके मन्दिर की रक्षा की थी। किशनसिंह का पुत्र अनिरुद्धसिंह इसके गोद आया। भावसिंह की एक बहिन का विवाह जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह के साथ हुआ था। भावसिंह बड़ा वीर और शरणागत रक्षक था। इसने बीकानेर नरेश महाराजा कर्णसिंह को दिलेरखां के षड्यंत्र से बचा कर अपने पास औरंगाबाद में आश्रय दिया था। महाराजा जसवन्तसिंह की मृत्यु के बाद अपनी बहिन कमवती के पुत्रों की रक्षार्थ औरंगजेब से लड़े थे।

---

* सरकार शिवाजी पृ० ८   वंश प्रकाश पृ० ७१-८

† टाड राजस्थान जिल्द ३ पृ० [illegible] १४८१। इसकी मृत्यु की तिथि मनुची के उद्धरणों के आधार पर मार्च १६७३—फरवरी १६७८ के बीच है; टाड के आधार पर (सम्वत् १७१८ सम्वत् १६८२) है और वंशभास्कर में सूर्यमल मिश्र सन् १६८१ ता० १ अप्रैल सम्वत १७३८ वैशाख वदि ८ मानता है।

‡ किशनसिंह को दत्तक-पद से [illegible] मुक्त कर दिया जबकि वह [illegible] की मृत्यु के बाद उसकी गद्दी पर बैठ गया था। किशनसिंह कट्टर धर्म प्रकृति का था। जब औरंगजेब ने बून्दी के केशोराय पाटन के मन्दिर को नष्ट करने [illegible] की टुकड़ी भेजी तो किशनसिंह ने वीरता पूर्वक उस मन्दिर की रक्षा की। उज्जैन में शाही सूबेदार ने धर्म के कारण [illegible] भेजी इस पर सूबेदार ने उसे मरवा डाला।

१६. राव अनिरुद्धसिंह हाडा–
(सं० १७३८-१७५२ वि०)

यह राव भावसिंह हाडा के छोटे भाई भीमसिंह का पोता और किशनसिंह का लडका था। इसका जन्म वि० स० १७२३ आषाढ वदि ७ बुद्धवार (ई० सन् १३६६ ता० १३ जून) को हुआ था। यह वि० स० १७३८ (ई० सन् १६८१) मे १५ वर्ष की आयु मे बून्दी की राज-गद्दी पर बैठा। उस समय बादशाह औरगजेब ने इसके लिये खिलअत और हाथी टीके मे भेजा।* बाद मे जब बादशाह ई० १६८२ मे दक्षिण की ओर गया तब राव अनिरुद्ध-सिंह हाडा भी साथ गया। वहा राव ने बडी वीरता दिखाई। एक समय जब बादशाह की बेगमो को मरहठो ने घेर लिया तब इसने शत्रु से लडकर उन्हे बचाया जिससे बादशाह बडा प्रसन्न हुआ और उसने खिलअत (सिरोपाव) व कई परगने इसे जागीर मे दिये। इसके सिवाय अनिरुद्धसिंह की प्रार्थना पर बादशाह ने यह भी स्वीकार किया कि हाडो की सेना शाही सेना मे सब से आगे हरावल मे चलेगी। जब वि० स० १७४३ आश्विन सुदि ५ रविवार को औरगजेब ने

राव अनिरुद्धसिंह हाडा

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४६३।

बीजापुर का किला विजय किया उस समय उसके घेरे व लड़ाई में अनिरुद्धसिंह ने बड़ी बहादुरी दिखाई।

हाड़ा दुर्जनसिंह बून्दी राज्य में बलवन का जागीरदार था। उसके और राव अनिरुद्धसिंह के आपस में मनमुटाव हो गया। कहा जाता है कि दुर्जनसिंह महरठों से मिल गया था जिसकी सूचना राव ने औरंगजेब को दी। इससे दुर्जनसिंह ने शाही सेना से लौट कर बून्दी के राज्य पर कब्जा कर लिया। जब इस घटना की सूचना बादशाह के कानों तक पहुँची तब बादशाह ने दुर्जनसिंह हाड़ा को बून्दी से निकाल देने के लिये मुगलखां भीमसिंह बनेड़ा मन्नासिंह भदौरिया के भाई छत्रसिंह और सय्यद मुहम्मदअली आदि को खिलअत हाथी घोड़े देकर राव अनिरुद्धसिंह की सहायता के लिये बड़ी फौज के साथ बून्दी की ओर रवाना किया।† राव अनिरुद्धसिंह को भी खिलअत हाथी और घोड़ा आदि बिदाई के समय दिये। अनिरुद्धसिंह शाही सेना के साथ बून्दी पहुँचा। दुर्जनसिंह किला छोड़कर भाग गया और अनिरुद्धसिंह ने वापिस बून्दी पर अधिकार कर लिया।‡ बाद में जोधपुर के राठौड़ दुर्गादास ने बीच में पड़कर दुर्जनसाल हाड़ा को राव अनिरुद्धसिंह के पैरों में नमाया और उनमें आपस में मेल करा दिया।§ बाद में यह शाहजादा आजम के पुत्र बेदारबख्त के साथ जुलाई १६८८ में जाट नरेश राजाराम से लड़े थे। इस लड़ाई में यह ज्यादा टिके नहीं रह सका अतः युद्ध के बीच ही बून्दी भाग गया। इस पर बून्दी की सेना का नेतृत्व राजगढ़ (कोटा) के जागीरदार गोवर्धनसिंह ने बून्दी नरेश की पगड़ी और छत्र लेकर किया।¶ कुछ समय तक बून्दी में रहकर अनिरुद्धसिंह ने बून्दी का प्रबन्ध ठीक किया। बाद में बादशाह ने इसे काबुल की तरफ मुगल साम्राज्य की उत्तरी सीमा का झगड़ा तय करने को शाहजादा मुअज्जम और आमेर के राजा बिशनसिंह के साथ भेज दिया। जहां सं० १७५२ (ई० सन् १६९५) में इसका देहान्त हो गया।S

इसके चार पुत्र बुधसिंह जोधसिंह अमरसिंह और विजयसिंह थे। जोधसिंह के लिये प्रसिद्ध है कि सं० १७६३ की चैत्र सुदि १ (ई० १७०६ बुधवार) को

* उपरोक्त १४६४।

† देवीप्रसाद औरंगजेब नामा भाग २ पृ० १२४-१२५।

‡ देवीप्रसाद औरंगजेब नामा भाग २ पृ० १२७।

§ कविराज श्यामलदास ऐतिहासिक वार्ता संख्या १९९४।

¶ डा० शर्मा कोटा राज्य का इतिहास प्रथम भाग पृ० २८।

S टाड राजस्थान जिल्द ३ पृ० १४९४।

जबकि गणगौर का त्यौंहार बून्दी मे मनाया जा रहा था तालाब मे गणगौर की प्रतिमा के साथ जोधसिंह मय अपनी स्त्री स्वरूपकँवर व साथियो के नाव मे सैर करने निकले, परन्तु किसी मस्त हाथी ने उस नाव को उलट दिया जिससे वे मय अपने साथियो और गणगौर के डूब गए।* उस समय से राजपूतो का यह प्रसिद्ध त्यौंहार बून्दी मे नही मनाया जाता है तथा तब से यह कहावत कि "हाडो ले डूबो गणगौर—प्रचलित हो गई।

१७. रावराजा बुद्धसिंह—
(वि० सं० १७५२-१७६६)

यह राव अनिरुद्धसिंह का ज्येष्ठ पुत्र था जो १० वर्ष की आयु मे वि० स० १७५२ पौष बदि १३ (ई० सन् १६९५ ता० २३ दिसम्बर, सोमवार) को बून्दी के राज-सिंहासन पर बैठा। जब स० १७६३ मे बादशाह औरगजेब दक्षिण मे वीमार पडा तब उसने ज्येष्ठ पुत्र वहादुरशाह को अपना उत्तराधिकारी बनाने की इच्छा प्रकट की परन्तु फाल्गुन बदि १४ (ता० २१ फरवरी ई० सन् १७०७) को बादशाह के अहमदनगर (दक्षिण) मे मर जाने पर उसके दोनो पुत्र वहादुरशाह और आजम मे तख्त के लिये लडाई ठन गई। वहादुरशाह कावुल से आगरा के लिये चल पडा और शाहजहा आजम दक्षिण से गुजरात होता हुआ आगरे की ओर बढा। राव वुद्धसिंह हाडा ने जो शाहजादा वहादुर-शाह के साथ ही कावुल मे था, वहादुर

रावराजा बुद्धसिंह

* वीर विनोद भाग २ पृ० ११४।

शाह का साथ दिया। कोटा दतिया आदि के राजपूत नरेशों ने आजम का पक्ष लिया।* कोटे के राव रामसिंह हाड़ा ने शाही फौज की सहायता से बून्दी का मऊ का इलाका अपने कब्जे में कर लिया था तथा बुधसिंह ने पंजाब में बहादुर शाह से मिलकर उसकी सहायता से पाटन वापस अपने राज्य में मिला लिया था। इसलिये बून्दी कोटा में पहिले से अनबन था। फिर भी रामसिंह यह नहीं चाहते थे कि कोटा व बून्दी नरेश दूसरों के लिये आपस में लड़ें। इस कारण राव रामसिंह हाड़ा ने बुधसिंह को आजम का पक्ष लेने का इशारा कराया लेकिन इधर से यही उत्तर मिला कि मैं नमक हरामी करके अपने नाम को बट्टा नहीं लगाऊंगा।† दोनों सेनाओं का मुकाबला आगरा के दक्षिण में ३४ मील पर धौलपुर के पास जाजव के मैदान में वि० सं० १७६४ आषाढ़ बदि ४ रविवार (ई० सन् १७१७ की ८ जून) को हुआ। इस युद्ध में बहादुरशाह की फौज के अध्यक्ष उसके शाहजादे मुइजुद्दीन और आजमशाह थे। दतिया का राजा दलपत बुंदेला कोटा का रामसिंह हाड़ा और शाहजादा आजम मय अपने पुत्र बेदारबख्त और वालाजाह के मारे गये। इस प्रकार बहादुरशाह निष्कंटक होकर आगरे के तख्त पर बैठा।‡

बुधसिंह हाड़ा ने भी इस युद्ध में बड़ी बहादुरी दिखलाई। इससे बहादुरशाह ने बुधसिंह को 'महाराव राजा' का खिताब तथा कुछ परगने जागीर में दिये।§ उस समय बुधसिंह ने कोटे को भी हथियाना चाहा और बहादुरशाह से कोटा की जागीर का फरमान अपने नाम लिखवा कर जोगीराम हाड़ा के सेनापतित्व में कोटा को अपने अधिकार में करने का प्रयास किया।¶ इसमें उसे सफलता नहीं मिली। इससे कोटा व बून्दी में परस्पर शत्रुता हो गई जिसके कारण दोनों के बीच कई लड़ाईयां हुईं। उधर बादशाह शाहजादे कामबख्श की उलझन से दक्षिण की तरफ फंसा हुआ था। उसने दक्षिण में जाते समय बुधसिंह को बुला भेजा।$ वि० सं० १७६७ में जब बादशाह अपने भाई पर विजय पाकर दक्षिण से लौटा उस समय पंजाब में सिक्खों का उपद्रव उठ खड़ा हुआ इस कारण

---

* कोटा के राव रामसिंह आजम के पक्ष में थे। हाड़ा राजपूतों की मुख्य और उपशाखा प्रथम बार खुले युद्ध में आपस में लड़ने लगे।

† टॉड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४९१-९१।

‡ इर्विन लेटर मुगल्स पृ०

§ वीर विनोद भाग २ पृ० ११६।

¶ यही पुस्तक कोटा राज्य का इतिहास पृ० सं० १४१४।

$ बुधसिंह जयपुर होते हुए बेगू विवाह करने गया। वहां से सीधे दक्षिण की ओर चला गया।

बादशाह पजाब की ओर चला गया। वहा ई० सन् १७१२ मे बादशाह की मृत्यु हो गई। बादशाह की मृत्यु का बुद्धसिह को बडा खेद हुआ और वह बून्दी मे ही बैठ रहा। वह नये बादशाह फरुखसियर के राज-गद्दी समारोह तक मे भाग लेने नही गया और कुछ समय पश्चात् अपनी ननिहाल चला गया। तब मौका पाकर कोटा के महाराव भीमसिंह ने फरुखसियर से फरमान प्राप्त कर बून्दी पर कब्जा करने के बाद वहा का सब कीमती सामान कोटा पहुँचा दिया। जहागीर द्वारा राव रतन को दिये केसरिया निशान और नक्कारे भी कोटा ले गये। जब वि० स० १७७२ मे फरुखसियर और उसके प्रधान मत्री सय्यद बधुओ मे अनबन हो गई तब महाराव राजा बुद्धसिह हाडा ने फरुखसियर का पक्ष लिया और बादशाह को प्रसन्न कर बून्दी का राज्य वापिस ले लिया।* सय्यद बधु षडयत्र से फरुखसियर को मारना चाहते थे और इस षडयत्र मे कोटा के महाराव भीमसिंह भी शामिल थे। बुद्धसिह ने जब देखा कि मैं फर्रुखसियर को नही बचा सकता और मेरी जान भी खतरे मे हैं तब वह कुछ बहाना बनाकर दिल्ली से चलकर अपनी सुसराल आमेर जहा के महाराजा सवाई जयसिंह की बहिन अमरकुँवरी के साथ इनका विवाह हुआ था चले गये। बादशाह फर्रुखसियर स० १७७६ ज्येष्ठ सुदि ११ (ई० सन् १७१९ ता० १८ मई) को मारा गया। फर्रुखसियर के बाद सवाई जयसिंह और बुद्धसिह का शाही दरबार मे प्रभाव घट गया। कोटा के भीमसिंह ने सैयद बधुओ को इन दोनो के विरुद्ध कर दिया। सैय्यद-बधु भी जानने लगे कि इनको शक्तिहीन बनाने मे ही लाभ है। अत उन्होंने भीमसिंह को बून्दी पर आक्रमण करने को उकसाया। भीमसिंह यह चाहता ही था अत शाही सेना की सहायता से वि स १७७६ (१७ नवम्बर १७१९) बून्दी पर चढाई कर दी। घमासान युद्ध हुआ। इस लडाई में बुद्धसिह का काका ६००० राजपूतो के साथ मारा गया।‡ बून्दी पर कोटा का अधिकार होगया। भीमसिंह ने बून्दा मे कोई राजसी चिन्ह नही छोडा वहा की नौबत,

---

* फरुखसियर सैयद बन्धुओ से मुक्ति चाहता था। जब सैयद हुसेनअली दक्षिण का सूबेदार बना कर भेजा गया तो उसकी अनुपस्थिति में जयपुर नरेश जयसिंह ने बून्दी के बुद्धसिंह को बादशाह से क्षमा दिलवा कर पुन बून्दी उन्हें दिला दी।

† भीमसिंह ने सैयद बन्धुओ को सलाह दी थी कि फरुखसियर को गद्दी से हटाने का विरोध जयसिंह और बुद्धसिंह करेंगे अत इन्हें राजधानी से दूर रखा जाय। फरुखसियर पर सैय्यदो ने प्रभाव डाल कर जयसिंह को आमेर भेज दिया और भीमसिंह ने बुद्धसिंह को मारने हेतु उसके डेरे पर हमला कर दिया परन्तु बुद्धसिंह बचकर भाग गया और जयसिंह मे जा मिला।

‡ खफीखा जिल्द २ पृ० ८४४-८५१।

नक्कारे आदि कोटा पहुँचा दिये गये। कोटा की ओर से वहाँ फौजदार भगवान दास धाभाई नियुक्त किया गया। वह वहाँ भीमसिंह के देहांत तक (वि सं १७७७) रहा। भीमसिंह की मृत्यु का समाचार सुनकर उसने समझा कि बुधसिंह वापस बून्दी पर आक्रमण करेगा। इस भय से उसने बून्दी राज्य वापस बुधसिंह को दे दिया।*

बुधसिंह इसके बाद सवाई जयसिंह की सहायता से राज्य करने लगे। सवाई जयसिंह ने नागराज धाभाई को बून्दी का मन्त्री बनाया। वह जयसिंह के कहने के अनुसार राज्य करने लगा। यह बुधसिंह को अच्छा नहीं लगा लेकिन अपनी शक्ति-हीनता के कारण विवश था। बाद में बुधसिंह की कछवाहा रानी ने अपने भाई जयसिंह को लिखकर नागराज को हटाने के लिये कहा। जयसिंह ने अपनी बहिन का कहना मान कर नागराज को हटा दिया। इसके बाद बुधसिंह ने सालमसिंह को अपना मंत्री बनाया।†

इसी समय बुधसिंह ने एक अनुचित कार्य्य कर डाला जिसके कारण जयसिंह उसके विरुद्ध हो गया तथा जिसके कारण उसे अपना शेष जीवन बड़े दुःख में काटना पड़ा।

बुधसिंह के चार विवाह उदयपुर जयपुर बेंगू (मेवाड़) और भिनाय (अजमेर) में हुए थे। प्रथम विवाह जयपुर में महाराजा सवाई जयसिंह कछवाह की बहिन अमरकुंवर के साथ हुआ था जिसकी मगनी पहिले बहादुरशाह के साथ की गई थी। बुधसिंह किसी नित्यनाथ नामक कनफटा जोगी के उपदेश तथा पुरोहित गजमुख की प्रेरणा से वैष्णव मत से वाममार्गी हो गया। उसकी कछवाह रानी अमरकुंवर वैष्णव धर्मानुयायिनी थी। इससे उन दोनों में अनबन रहती थी। बुधसिंह अपनी चूंडावत रानी से जो बेंगू (मेवाड़) के चूंडावत राव काली मैंम की पुत्री थी ज्यादा प्रसन्न था। उससे उनके दो राजकुमार हुए थ। कछवाह रानी अमरकंवर अपनी सौत का सुख न देख सकी। इसने छल से अपने को गर्भवती बतला कर किसी का पुत्र मंगवा के उसे अपना पुत्र प्रकट किया परन्तु यह भेद बाद में खुल गया इसलिये रावराजा कछवाही रानी के गर्भ से पैदा हुए पुत्र को अनौरस बतलाता था। अतः जब आमेर में रहते समय कछवाही रानी का पुत्र भवानीसिंह रावराजा बुधसिंह के सामने लाया गया तो उसने अनजान

---

* ई १७२ में दैवरों का प्रभाव समाप्त हो गया अतः भीमसिंह की मृत्यु के बाद कोटे का बून्दी पर प्रभाव न रह सका।

† टॉड राजस्थान तृतीय भाग पृ १४१७।

होकर पूछा कि यह किस का पुत्र है ? सवाई जयसिह ने कहा कि आपका बेटा और मेरा भानजा है। बुद्धसिह कछवाह रानी से नाराज थे ही अत उसने सवाई जयसिह से कहा कि यह लडका मेरा नही है। इसे तो विष देकर मार डालना चाहिये। सवाई जयसिह इससे बुद्धसिह से नाराज हो गये। उसने बुद्धसिह को बून्दी से हटाने के लिये अपनी सेना भेज दी। बून्दी और जयपुर की सीमा पर पाचोलास गाव मे दोनो राज्यो की सेना के बीच लडाई हुई। इस लडाई मे जयपुर के ईसरदा, भावट, सरवाड आदि के पाच बडे जागीरदार तथा दोनो ओर की काफी सेना मारी गई। बुद्धसिह को हार कर अपनी ससुराल बेगू जाना पडा। सवाई जयसिह ने इन्द्रगढ के जागीरदार देवीसिह हाडा को बून्दी की राजगद्दी पर बैठाना चाहा लेकिन उसने मना कर दिया। इस पर उसने करवड के सरदार सालमसिह जो तारागढ का किलेदार और बून्दी नगर का सरक्षक था, के पुत्र दलेलसिह को अपनी अधीनता मान लेने पर वि० स० १७८६ (सितम्बर १७२९) मे बून्दी की राजगद्दी पर बैठाया। दलेलसिह को राज्य देने की स्वीकृति बादशाह पर दबाव डालकर जयसिह ने ले ली।*

बून्दी राज्य मे ऐसी गडबड देखकर कोटा राज्य ने भी बून्दी का कुछ हिस्सा दबा लिया। लेकिन बुद्धसिह यो हार मानने वाला नही था। उसने जयसिह के मालवा की ओर वि० स० १८८६ (ई० सन् १७२९) मे चले जाने पर बून्दो पर वापस कब्जा करने का प्रयत्न किया। इस पर दलेलसिह के पिता सालमसिह ने जयपुर की मेना की मदद से बुद्धसिह की सेना को वि० स० १७८७ (अप्रेल १७३०) को कुशलथ मे बुरी तरह हराया। इस प्रकार शत्रु को हराकर दलेलसिह ने वि० स० १७८७ (१९ मई १७३०) को बून्दी पर पूर्ण आधिपत्य जमाया। इसके बाद अपने को और भी शक्तिशाली बनाने के लिये जयपुर नरेश जयसिह की पुत्री से व्याह किया।†

दलेलसिह बून्दी की राजगद्दी पर बैठकर सुख नही पा सका। दलेलसिह का बडा भाई प्रतापसिह अपने छोटे भाई को राजगद्दी पर देख नही सका। अत वह अपने भाई व पिता के विरुद्ध होकर बुद्धसिह से मिल गया। बुद्धसिह की रानी ने उसे दलेलसिह के विरुद्ध मराठो से सहायता लेने को दतिया भेजा।

---

* टॉड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४९७-१४९९। वास्तव में बुद्धसिंह से बून्दी छीनने का तो यह कारण ही था पर जयसिंह 'वृहत् जयपुर योजना के लिए बून्दी कोटा आदि पर अधिकार करने के लिए ही बून्दी पर चढाई कर उसे अपने अधीन करना चाहता था।

† उपरोक्त पृ० १४९९।

मराठों ने ६ लाख रुपये देने की शर्त पर बून्दी पर आक्रमण करना तय किया (वैशाख बदि १४ वि० स० १७९१ २२ अप्रेल १७३४ सूर्य ग्रहण) दिन मल्हार राव होल्कर तथा राणोजी सिन्धिया ने प्रतापसिंह के साथ बून्दी पर आक्रमण कर दलेलसिंह के पिता सालमसिंह को गिरफ्तार कर लिया। मर वापस अपने देश को चले गये। मराठों के जाते ही जयपुर की सेना ने बून्दी पर चढ़ाई कर वापस दलेलसिंह को बून्दी दिलवा दी।* और सालमसिंह ने २ लाख रुपये मराठों को देकर छुड़वा लिया।†

मराठों के राजस्थान में आने की यह प्रथम घटना थी। इसका प्रभाव राजस्थान पर बहुत बुरा पड़ा। आगे के लिये मराठों के राजस्थान में आने का रास्ता खुल गया। जयसिंह को यह बहुत अखरा। जयसिंह ने इस विषय में विचार विमर्श करने के लिये अक्टूबर १७३४ में राजपूताने के राजाओं की एक सभा भी बुलाई लेकिन उसका कोई महत्वपूर्ण परिणाम नहीं निकला। अब तो मराठों का उत्कर्ष तथा मुगलों का पतन स्पष्ट दिखाई दे रहा था। कहने को मुहम्मदशाह बादशाह था लेकिन उसके आदेशों का कोई पालन नहीं करता था। उसका कोई सम्मान नहीं था। अतः राजपूताने के राजाओं का मुगल बादशाहों से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रहा। अब राजपूत मराठों को ही शक्तिशाली मानकर उनसे सहायता की मांग करते थे। स्वयं मुहम्मदशाह ने भी बाद में मराठों को राजपूत राजाओं से चौथ लेने की अनुमति दे दी।

रावराजा बुद्धसिंह के जीवन के अन्तिम १० वर्ष अपने ससुराल बेगूं में बीते। वहीं वह शराब और अफीम का ज्यादा प्रयोग करने लगा। अतः पागल हो गया और वि० स० १७९६ की बैशाख कृष्णा ३ (ई० सन् १७३९ अप्रेल २६) को इस संसार को छोड़ गया।‡

रावराजा बुद्धसिंह के ६ पुत्र उम्मेदसिंह भगवन्तसिंह, पद्मसिंह उम्मेदसिंह ... सिंह और दीपसिंह थे। उम्मेदसिंह और दीपसिंह चूंडावत रानी से थे और ... में ही रहते थे। सवाई जयसिंह ने उदयपुर के महाराणा को कह कर इन्हें ... से निकलवा दिया अतः ये पांचवा में आकर रहने लगे।§ वि० सं० १८... (ई० सन् १७४३ में सवाई जयसिंह के मरने पर कोटा के दुर्जनशाल हाड़ा की सहायता से उम्मेदसिंह ने वि० सं० १८०५ (२३ अक्टूबर १७४८) में बून्दी पर अधिकार कर लिया।

* वंश भास्कर पृ० ३२१९-३२२२। † वंश प्रकाश ८१।
‡ उपरोक्त ९९। § हाड़ा राजस्थान ३ भाग पृ० १४९९।

महाराव उम्मेदसिंह–
वि० सं० १७८६-१८२७)

इसका जन्म वि० स० १७८६ की आषाढ की अमावस्या (ई० सन् १७२९ की १५ जून, रविवार) को हुआ था।

महाराव उम्मेदसिंह

यह अपने पिता रावराजा बुद्धसिंह की मृत्यु पर वि० स० १७८६ (ई० सन् १७३९) में १० वर्ष की आयु मे बून्दी के रावराजा माने जाकर बेगू मे ही गद्दी पर वैठाया गया। परम्परा के अनुसार इसे गुरु-मत्र सुनाने के लिये वल्लभ सम्प्रदाय का गोस्वामी गोपीनाथ सवाई जयसिंह कछवाहा के डर से नही आया।* इस कारण यह रस्म रामानुज सम्प्रदाय के ब्राह्मण द्वारा सम्पन्न कराई गई।†

वि० स० १८०० की आश्विन शुक्ला १४ (२१ सितम्बर १७४३) को सवाई जयसिंह का स्वर्गवास हो गया। अब सु-अवसर देख कर उम्मेदसिंह ने बून्दी का राज्य वापस लेने की ठानी। कोटा के महाराव दुर्जनशाल, गुजरात के सूबेदार

---

* वीरविनोद में इस वात का उल्लेख है कि जयपुर के महाराजा जयसिंह ने राणा जगतसिंह पर जोर डाला कि वेंगू के चूडावतों के यहा से उम्मेदसिंह व उसके भाई दीपसिंह को निकाल दिया जाय। इस पर उम्मेदसिंह कोटा आकर रहने लगा।

† वंश प्रकाश पृष्ठ ९५

फखरुद्दीन को १ लाख देकर तथा शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह से अनिक सहायता से वि० सं० १८०१ की द्वितीय आषाढ़ शुक्ला १२ (१० जुलाई १७४४) को बूंदी को घेर लिया। १८ दिन जमकर लड़ाई हुई। इस युद्ध में कोटा का सेनापति गोविन्दराम नागर मारा गया तथा उम्मेदसिंह स्वयं घायल हो गया लेकिन जीत उम्मेदसिंह की ही रही। दलेलसिंह नेनवा भाग गया। उम्मेदसिंह का बून्दी पर कब्जा हो गया। लेकिन उसे बून्दी का काफी हिस्सा कोटा नरेश को युद्ध खर्च के एवजाने में देना पड़ा।* शाहपुरा के उम्मेदसिंह को भी १ परगना दिया गया। कोटा नरेश ने पंचायणा के बापजी रूपसिंह को बून्दी राज्य में अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया तथा अन्ता के महाराजा अजीतसिंह को किलेदार बनाकर तारागढ़ उसके सुपुर्द किया।† उम्मेदसिंह को दुर्जनशाल का यह व्यवहार बहुत ही बुरा लगा अतः वह उससे असंतुष्ट होकर मारवाड़ नरेश अभयसिंह के पास सहायता के लिए गया लेकिन वहां से भी उसे बहुत कम सहायता मिली।‡

इधर सवाई जयसिंह के उत्तराधिकारी ईश्वरीसिंह ने दलेलसिंह को बून्दी वापस दिलाने के लिये दिल्ली से सहायता मांगी लेकिन वहां से इच्छित सहायता नहीं मिली। अतः उसने मराठों से सहायता§ लेकर बून्दी पर कब्जा कर लिया और कोटे को घेर लिया। दो माह के घेरे के बाद सन्धि हो गई। इस घेरे में मरहठा सेनापति जियाजी सिंधिया का एक हाथ तोप के गोले से उड़ गया। इसमें जयपुर नरेश ने बून्दी राज्य का पाटण परगना दलेलसिंह हाड़ा से सिंधिया को दिलवाया।¶ मौका पाकर उम्मेदसिंह ने कोटा से १६ लाख रुपयों की मदद लेकर फिर बूंदी पर चढ़ाई की और बून्दी के पास धौधोड़ गांव में वि० सं० १८०२ (२० जुलाई १७४५) को जयपुर की सेना को हराया। इस पर ईश्वरीसिंह कछवाहा ने १८००० की एक सेना वि० सं० १८०३ (ई० सन् १७४६) को नारायणदास खत्री की अधीनता में भेजी। बून्दी से ६ मील दूर गांव दबलाना में लड़ाई हुई। उम्मेदसिंह हार गया और इधर उधर सहायता के लिए फिरता रहा। अन्त में उसे बुद्धसिंह की कछवाहा रानी ने ही सहायता दी। उसके लिए रानी स्वयं

* वंश भास्कर जिल्द ४ पृष्ठ ३३७१ ; टाड : राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १५ ।

† डा० शर्मा : कोटा राज्य का इतिहास जिल्द १ पृष्ठ

‡ वंश प्रकाश पृष्ठ ६४

§ बेगम ने ईश्वरीसिंह की सहायता के लिए मल्हारराव होल्कर और जियाजी सिंधिया को भेजा।

¶ टाड : राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १५

मल्हारराव होल्कर के पास गई। उसे राखीबद भाई बनाया* और उसे उम्मेदसिंह की सहायता के लिये तैयार किया। मल्हारराव भी इन राजपूत राज्यो के आपसी झगडे से लाभ उठाना चाहता था। अत ४ अक्टूबर १७४६ को कोटा का दुर्जनशाल व बून्दी का उम्मेदसिंह महाराणा उदयपुर से नाथद्वारा मे मिले। महाराणा उदयपुर अपने भानजे माधोसिंह कछवाहा को ईश्वरीसिंह से जयपुर का राज्य छीन कर दिलाना चाहता था। अत मल्हारराव होल्कर से विचार विमर्श कर इन्होने तय किया कि (१) माधोसिंह को टोक, टोडा, मालपुरा तथा निवाई के परगने दिलवाये जावे, (२) उम्मेदसिंह को बून्दी दिलाई जावे तथा इसके लिये उम्मेदसिंह मरहठो को युद्ध का कुल खर्चा देवे और (३) कोटा के दुर्जनशाल तथा प्रतापसिंह के कब्जे मे नेनवा, समिधि तथा करवार के परगने रहने की अनुमति ली जावे।

मल्हारराव होल्कर को आरम्भ मे सहायता के लिये २ लाख रुपये दिये गये। इस पर मल्हारराव ने अपने पुत्र खाण्डेराव को १००० घुडसवारो के साथ राजपूत नरेशो की सहायता के लिये भेजा। देवली छावनी के उत्तर मे बनास नदी के दक्षिणी घुमाव पर राजमहल स्थान पर वि० स० १८०४ के प्रथम चैत्र शुक्ला १ (१ मार्च १७४७, रविवार) को युद्ध हुआ जिसमें विजय जयपुर की हुई। उदयपुर की सेना को भारी हानि उठानी पडी। ईश्वरीसिंह ने महाराणा की सेना का भीलवाडा तक पीछा किया तथा भीलवाडा को लूटा। अन्त मे महाराणा ने सधि करली। ईश्वरीसिंह अप्रेल १७४७ मे वापस जयपुर लौट गया। इसके बाद १७ अगस्त १७४९ को ईश्वरीसिंह बून्दी गया तथा वहा कुछ सप्ताहो तक रहा।

वि० स० १८०५ (जुलाई १७४८) मे मल्हारराव होल्कर व गगाधर तात्या ने जयपुर के माधोसिंह कछवाहा को जयपुर राज्य के टोक, टोडा और मालपुरा के परगने दिलवाये। माधोसिंह को मदद मे उम्मेदसिंह और दुर्जनशाल हाडा भी थे। इस सेना ने जयपुर को रौद दिया। कही भी जयपुर की सेना ने सामना नही किया। अत मे बगरु (साभर से २३ मील पूर्व) नामक स्थान पर जयपुर की सेना ने सामना किया। पहली अगस्त १७४८ से ७ अगस्त तक युद्ध हुआ जिसमें भी जयपुर वाले हारे। जयपुर नरेश को सन्धि करनी पडी। इस सन्धि के अनुसार ईश्वरीसिंह को अपने भाई माधोसिंह को जयपुर के ५ परगने देने पडे तथा उम्मेदसिंह को बून्दी लौटाना पडा। ९ अगस्त १७४८ को ईश्वरीसिंह

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३, पृष्ठ १५०१-२

मल्हारराव होल्कर तथा उम्मेदसिंह आपस में मिले तथा इन्होंने पारस्परिक मित्र बने रहने का एक दूसरे को वचन दिया। विजयी पक्ष वहां से १० अगस्त को पुष्कर होकर बून्दी चला गया। बून्दी पहुँचने पर वहां के जयपुरी किलेदार ने वि स १८०५ (१८ अक्टूबर १७४८) को बून्दी उम्मेदसिंह को लौटा दी। इसके ५ दिन बाद उम्मेदसिंह बून्दी की राजगद्दी पर बैठा*।

उम्मेदसिंह ने मरहठों को इस सहायता के बदले में १ लाख रुपये देना स्वीकार किया। इसमें से २ लाख उसने वि स १८०६ (ई सन् १७४९) में दिये। इसके बाद १८ जून १७५१ को ३ लाख रुपये मल्हारराव व जयअप्पा को तथा ५ लाख रुपये सतारा के खजाने में जमा कराने का तय किया गया। इसके अलावा मल्हारराव व जयअप्पा को बून्दी नैनवा आदि स्थानों की सन् १७५१ की जून से चौथ वसूल करने तथा सतारा राज्य में ७५००) सालाना कर देने का तय किया।

उम्मेदसिंह ने बून्दी राज्य मिलने पर राज्य मुहर में अपने इष्टदेव 'रंगनाथ' का नाम खुदवाकर रामानुज सम्प्रदाय को महत्त्व दिया क्योंकि उनकी ही प्रेरणा से उन्हें राजगद्दी मिली थी।† राजगद्दी पर बैठने के बाद उसने शासन व्यवस्था सुधारने की चेष्टा की और राज्य की आमदनी बढ़ाने के लिये विशेष ध्यान दिया। उसे १४ वर्ष के बाद बून्दी का अधिकार मिला था इससे खजाना सब खाली हो चुका था। मल्हारराव होल्कर जो उम्मेदसिंह का मामा बना हुआ था इस समय कुछ भी मदद न कर सका। तब प्रथम भादवा से १८०६ (अगस्त १७४७) में उम्मेदसिंह सतारा में पेशवा से मिलने गया। रास्ते में खानदेश के बाफ गांव में और पूना में उसका अच्छा स्वागत किया गया। उन दिनों जब मल्हारराव की पुत्री की शादी हुई तब उम्मेदसिंह ने अपने मौद के रिश्ते को निबाहते हुए अमूल्य सौगात भेंट की। पौष बदि ३ सं १८ ६ धुन (१५ दिसम्बर १७४९) में राजा शाहू के मृत्यु समाचार सुन कर मल्हारराव और उम्मेदसिंह सतारा गये जहां पर नये शासक रामराज का राज तिलक हुआ। इस समय रघुजी भोंसले व पेशवाओं के बीच में जो विवाद था वह शान्त होगया। सावन बदि २ गुरुवार वि स १८ ७ २ जुलाई १७५ को उम्मेदसिंह बून्दी लौट आये। इसके २ मास बाद जब मल्हारराव ने जयपुर के हरगोविन्द नाटाणी दीवान के कहने से जयपुर पर चढ़ाई की और वहां के महाराजा ईश्वरसिंह ने

---

* वंशभास्कर १३१४ ४२। टाड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १२ ४ १२ ५
† वंशप्रकाश पृष्ठ ८१

अपने दीवान के विश्वासघात को जानकर वि. स १८०७ की पौष कृष्णा १२ (१२ दिसम्बर १७५०) को विष खाकर प्राण दे दिये तब उम्मेदसिंह का काटा सदा के लिये निकल गया।*

महाराजा ईश्वरीसिंह के बाद माधोसिंह जयपुर की राजगद्दी पर बैठा। माधोसिंह का बर्ताव बून्दी के साथ अच्छा रहा। वि स १८१६ (ई सन् १७६२ मे जब माधवराव सिन्धिया ने बून्दी को घेर लिया तब जयपुर के माधोसिंह और शाहपुरा के उम्मेदसिंह ने उम्मेदसिंह की सहायता की। इस सहायता के फलस्वरूप सिन्धिया कुछ फौजखर्च ही लेकर चला गया। बाद मे जब वि स १८२४ की पौष कृष्णा ६ (१० दिसम्बर १७६७) को भरतपुर और जयपुर के बीच लडाई हुई तब उम्मेदसिंह ने भी अपने पुत्र अजीतसिह को जयपुर की सहायता के लिये भेजा।

वि स १८१२ (ई. सन् १७५५) मे जब रणथम्भोर का किला बादशाही किलेदार के द्वारा महाराजा माधोसिंह को सौंप दिया गया तब माधोसिंह और कोटा नरेश के बीच युद्ध हुआ। इस युद्ध मे उम्मेदसिह ने कोटा की मदद नही की। माधोसिंह की सेना वि स १८१८ की मगकेर शुक्ला ४ (१७६१ की ३० नवम्बर) को मरवाडा की लडाई मे हार गई।† कोटा के विजयी होजाने पर कोटा नरेश दुर्जनशाल ने बून्दी को दलेलसिह के पुत्र किशनसिह को दिलाना चाहा। लेकिन इसमे उसको सफलता नही मिली।

अपनी शक्ति स्थापित करने के बाद उम्मेदसिह ने इन्द्रगढ पर आक्रमण किया। वह दबलाना की हारके बाद रावके व्यहार‡ का बदला लेना चाहता था। इन्द्रगढ का शासक देवसिह उस समय जयपुर गया हुआ था। उस समय उम्मेदसिह की शादी का नारियल जयपुर महाराजा के यहा पहुँचा ही था।

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १५०४। इस प्रकार उम्मेदसिह १४ वर्ष घुमक्कड जीवन बिताने के पश्चात बून्दी की गद्दी पर निश्चिन्त होकर बैठ गया। परन्तु इस राजनैतिक विप्लव के कारण मराठो का राजस्थान में प्रवेश हुआ और मुगलो के अध पतन पर राजपूत शासको के आपसी युद्ध के निर्णायक मराठा शासक बन गए।

† उम्मेदसिह सेना सहित भटवारे के युद्ध में दुर्जनसिह की सहायता के लिए आया था परन्तु युद्ध के दौरान में वह तटस्थ रहा इस पर दुर्जनशाल उम्मेदसिह से क्रोधित होगया था।

‡ दबलाना के युद्ध के बाद हारा हुआ, घायल उम्मेदसिह इन्द्रगढ के राव के पास शरण लेने गया परन्तु राव ने यह कहकर उसे पनाह नही दी कि वह बून्दी और इन्द्रगढ की बरबादी का कारण है। इस पर उम्मेदसिह ने इन्दरगढ छोड कर कारवेन का रास्ता लिया। इन्द्रगढ की सीमा में उसने पानी तक नही पिया। टाड राजस्थान तृतीय जिल्द पृष्ठ १५०१

देवसिंह की सलाह पर वह मारियस बून्दी लौटा दिया गया। उम्मेदसिंह प्रति शोधित हुआ। सम्वत् १८१३ (१७५७ ई) में उम्मेदसिंह वैजमनी माता के दर्शन करने कारवार गया हुआ था। यह मन्दिर इन्दरगढ़ के पास था। उम्मेदसिंह ने देवसिंह को मिलने के लिए बुलाया। देवसिंह कुटम्ब सहित पहुँचा। वहाँ एक रात को चुपके से उम्मेदसिंह की आज्ञा पर देवसिंह उसका लड़का व पौत्र मार डाले गए। उनके शव पासकी झील में फेंक दिए गए और इन्द्रगढ़ का इलाका उम्मेदसिंह ने अपने छोटे भाई दीपसिंह को दे दिया।* इस प्रकार उम्मेदसिंह हाड़ा का शासनकाल मुसीबतों और दौड़ धूप में ही बीता। उसे कभी चैन से बैठकर राज करने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ।

उम्मेदसिंह वीर साहसी और कठिनाइयों में घबराने वाला पुरुष नहीं था। जहाँ एक ओर वह कठोर निरकुश व बदला लेने की भावना रखता था वहाँ दूसरी ओर दयालु भी था। जीवन के संकट काल में जहाँ उसे निराशा नहीं हुई वहाँ उसने वृद्धावस्था में सम्वत् १८२७ (सन् १७७१) में सन्यास लेलिया। राज्य का भार युवराज की पदवी के सहित राजकुमार अजीतसिंह को सौंप दिया। अजीतसिंह की उस समय उम्र १७ वर्ष की थी।

सन्यासी जीवन में वह बून्दी के पास के एक केदारनाथ आश्रम में रहा। धार्मिक स्थानों पर इसने यात्रा भी प्रारम्भ की। एक ओर वह गंगा तट पर, हिमालय की पहाड़ियों मे धर्म केन्द्रों पर घूमते रहा। दूसरी ओर उन्होंने दक्षिण में रामेश्वर तक की यात्रा भी की। बगाल के अराकान क्षेत्र क सीताकुंड उड़ीसा के जगन्नाथ द्वारका में कृष्ण मन्दिर के दर्शन भी किये। इसकी तीर्थ यात्रा की एक विशेषता यह थी कि वह अपने पूरे अस्त्रशस्त्र के साथ ढाल तलवार बरछी भाला तीर कमान क साथ धार्मिक यात्रा करता था। एक बार काबों के एक भुण्ड मे उसे घेर लिया परन्तु इसने उनके छक्के छुड़ा दिए। और उनके नेताओं को गिरफ्तार कर प्रतिज्ञा करवाली कि आगे से वे द्वारका के किसी यात्री को नहीं सतायेंगे। उम्मेदसिंह जिस रजवाड़े में जाता था उसका शाही स्वागत होता था। वह विद्वान व चमत्कारी गिना जाता था।† इस जीवन में उसकी पदवी 'श्री जी' हो गयी थी।

इस प्रकार के सन्यासी के जीवन में उन्हें सूचना मिली कि उसके लड़के का देहान्त हो गया (वि स १८३) सन् १७७३। अजीतसिंह का पुत्र विष्णुसिंह

---

* टाड राजस्थान तृतीय जिल्द पृष्ठ १५ ८

† टाड राजस्थान तृतीय जिल्द पृष्ठ १५११

उम ममय साढे चार मास का ही वालक था। अत 'श्रीजी' ने विष्णुसिंह के युवा होने तक अभिभावक का काम किया। विष्णुसिह जव युवा हो गया तो उम्मेदसिंह पुन सन्याम लेकर काशी चला गया। वि. स १८६१ (सन् १८०४) आसोज वद ४ को ७५ वर्प की अवस्था मे उसका स्वर्गवास हुआ।

महाराव अजीतसिंह
(सं० १८२७-१८३०)

यह राजपि महाराव उम्मेदसिंह का ज्येष्ठ राजकुमार था और वि स १८२७ मे अपने पिता के वैरागी हो जाने पर राजसिंहासन पर बठा। मेवाड और वून्दी की सरहद पर मीनो का उपद्रव देख कर महाराव अजीतसिंह ने विलेटा नामक गाव मे एक किला वनवाया और वहा अपना एक किलेदार रक्खा। इस कार्य मे महाराणा अरिसिंह (दूसरे) की सम्मति नही ली गई। इसलिये दोनो नरेशो मे मनमुटाव हो गया। स १८२८ मे महाराव अजीतसिंह हाडा महाराणा के पास आया और उसके निमन्त्रण पर महाराणा अरिसिंह अमरगढ के पास सूअर का शिकार खेलने आया। वसन्त ऋतु का ममय था। गौरी पूजन के लिये सूअर के शिकार को दोनो निकले। जगल में मौका पाकर महाराव अजीतसिह ने धोके से महाराणा की छाती मे वर्छा भोक दिया जिससे महाराणा की तत्काल

अजीतसिंह

मृत्यु हो गई। महाराणा के साथ के सरदार खमूसिंह (मनवाड़) और दौलतसिंह (बावलास) भी मारे गये। लेकिन महाराणा के छड़ीदार रूपा ने महाराव अजीतसिंह पर ऐसे जोर से छड़ी मारी कि वह बेहोश हो गया। यह घटना वि सं १८२६ चैत्र वदि १ (ई सन् १७७३ ता ६ मार्च मंगलवार) को हुई।*

इस घटना का विवरण 'चौहाण कुल कल्पद्रुम' ग्रन्थमें इस प्रकार दिया है कि जयपुर नरेश की दो पुत्रियों में से एक का विवाह बून्दी नरेश अजीतसिंह हाड़ा के साथ हुआ था और दूसरी का उदयपुर नरेश महाराणा अरिसिंह (दूसरे) के साथ। जिस समय दूसरी बहिन का विवाह महाराणा अरिसिंह से होनेवाला था तब उस समय महाराव अजीतसिंह हाड़ा की कछवाही रानी जयपुर गई थी। वहां महाराणा अरिसिंह ने कपट से उसका हाथ पकड़ लिया। महाराव अजीतसिंह की रानी ने उस हाथ को अपवित्र जानकर काटडाला और आकर अपने पति को सब वृतान्त सुनाया। इसलिये अजीतसिंह ने महाराणा से बदला लेने के लिये आखेट का निमन्त्रण देकर उसे धोखे से मार डाला।

महाराणा अरिसिंह के मारे जाने के दो मास बाद ही वैशाख सुदि १५ वि सं १८३० (ई सन् १७७३ की ६ मई गुरुवार) को २० वर्ष की उमर में महाराव अजीतसिंह हाड़ा कोढ़ की बिमारी से इस ससार से चल बसा इसके एक पुत्र विष्णुसिंह (बिशनसिंह) था।

महाराव राजा विष्णुसिंह
(वि० सं० १८३० १८७८)

इस का जन्म वि स १८२१ पौष वदि ११ (ई स १७७२ तारीख २ दिसम्बर रविवार) को हुआ था। जब वि सं १८३० ज्येष्ठ वदि ११ सोमवार

---

* टाड राजस्थान भाग १ पृष्ठ ५ ७ तथा भाग ३ पृष्ठ १५१२ १५११ वंशभास्कर पृष्ठ १७१४ १८ वीरविनोद भाग २, पृष्ठ १५७६

(१७ मई १७७३) को यह राज गद्दी पर बैठा उस समय केवल साढे चार मास का था। इससे इसके दादा उम्मेदसिंह ने धाय भाई सुखराम को राज्य का प्रधानमत्री नियुक्त कर पौत्र की शिक्षा दीक्षा का और राज्य की देखभाल करने का काम सभाला। बालक महाराव का प्रथम विवाह केवल चार वर्ष की आयु मे बीकानेर नरेश महाराजा गजसिंह की चार वर्ष की कन्या पन्ना कुवर से हुआ। दूसरा विवाह १३ वर्ष की उमर मे वि १८४३ मार्गशीर्ष (मगासर वदि १२ को २८ नवम्बर १७८६ सोमवार) करोली नरेश महाराजा माणिक्यपाल की कन्या अमृत कुवर से हुआ था।

विशनसिंह

जब यह बालिग हुआ तब स्वार्थी लोगो (नाथावत हमीरसिंह कछवाहा आदि) के बहकाने मे आकर इसने अपने दादा राजर्षि उम्मेदसिंह से अनबन करली। श्रीजी ने नवयुवक महाराव को समझाया कि वह कोटा के दीवान जालिमसिंह की कन्या से विवाह न करें क्योकि इसमे वश की शोभा नही। वह शक्तिमान होने पर भी हमारे छुट भैया (कोटा) का कामदार है। विवाह और वैर शत्रुता बराबर वालो ही के साथ अच्छा होता है। कहा भी है—"समान शीले व्यसनेसु सख्यम्" अर्थात्—समान स्वभाव वालो की मैत्री होती है। जालमसिंह झाला बडा राजनीति निपुण, अगुली पकडते ही पहुँचा पकडने मे सिद्धहस्त और बडा शक्तिशाली था। उस समय ऐसे बहुत ही कम रजवाडे होगे जो जालिमसिंह से न दबते हो। कोटा नरेश तो उसके हाथ की गुडिया थे। इस कारण भी उससे विवाह सम्बन्ध होने मे राजर्षि उम्मेदसिंह बून्दी का भला नही समझते थे। परन्तु महाराव विष्णुसिंह ने अनुभवी दादा की उचित सलाह नही मानी और वि स १८५० आषाढ सुदि १० को १८ जुलाई १७९३, गुरुवार को जालमसिंह झाला की कन्या अजनकुवर से व्याह कर लिया।

बून्दी से सम्बन्ध होते ही जालिमसिंह झाला ने चुपचाप अपने कई आदमियो को बून्दी के राजकाज मे लगवा दिया। अनुभवी वयोवृद्ध स्वामीभक्त धाय भाई

सुखराम बून्दी के प्रधान मंत्री पद से हटाया जाकर मामूली बात पर एक लाख रुपये के जुर्माने से दण्डित करवाया गया।*

इस प्रकार का रंग ढंग देखकर महाराव विष्णुसिंह का चाचा सरदारसिंह अपने पुत्र ईश्वरीसिंह सहित जयपुर चला गया। जयपुर महाराव के सेवक जालिमसिंह से मिल गये। उधर सं १८५५ (ई सन् १०९८) में राजर्षि उम्मेदसिंह दूसरी बार जगन्नाथ की यात्रा को रवाने हुआ। यह यात्रा करके जब काशी पहुँचा तब पौत्र महाराव विष्णुसिंह ने दो कर्मचारियों को भेजकर राजर्षि को कहलाया कि आप काशी ही में निवास करें। आपके खर्च के लिये यहां से रकम पहुँच जाया करेगी। 'उम्मेदसिंह यह रंगढंग देखकर कुछ काल तक काशी में ही रहा। पश्चात् 'श्रीजी' अपने कर्तव्य का विचार कर बून्दी को रवाना हुआ। कर्नल टाड ने लिखा है कि जब उम्मेदसिंह काशी से बून्दी आरहा था तब अनेक राजाओं के कर्मचारी मार्ग में मिल कर अपने अपने राजाओं के संदेश कह-कह कर अपने राज्यों में लिवा ले जाने का "श्रीजी' से आग्रह करते रहे परन्तु वह कहीं न गया क्योंकि सीधे बून्दी जाने का उन्होंने संकल्प करलिया था। अपने दामाद जयपुर नरेश महाराजा प्रतापसिंह कछवाहा का विशेष आग्रह होने से वह केवल जयपुर ठहरा। उसने उसका बड़ा आदर सत्कार करके यहां तक कहा कि यदि आप चाहें तो अपने सेना बल से आपको बून्दी व कोटा राज्य दिलवा सकता हूँ परन्तु उम्मेदसिंह ने उत्तर दिया कि मुझे संसार से अब क्या लेना देना है। ये सब राज्य तो मेरे ही हैं। कोटा में मेरा भतीजा है और बून्दी में मेरा पोता है।†

इस प्रकार का उत्तर देकर जयपुर से रवाना होने के बाद श्रीजी ने बून्दी कहला भेजा कि मैंने काशी में रहने का निश्चय कर लिया है। मैं वहां ही रहूँगा अभी केवल श्रीरंगनाथजी के दर्शन करने बून्दी आता हूँ। दर्शन करके लौट जाऊँगा। बून्दी राज्य में जब श्रीजी पहुँचे तब वहां के दीवान और सरदार आदि आपके दर्शन व स्वागत के लिये सामने आये और कुछ दिन तक केदारनाथ

---

* टाड ने इस कथा का उल्लेख नहीं किया है। वह लिखता है कि जब उम्मेदसिंह और विष्णुसिंह में अनबन होगई तो फौजदार जालिमसिंह झाला ने दोनों के बीच सन्धि करवाई। यह सत्य प्रतीत नहीं होता है क्योंकि टाड जालिमसिंह का घनिष्ठ मित्र था। जालिमसिंह की कुटिलता का पता लेकर अंग्रेजी राज्य का उसे मित्र समझता था।

† टाड राजस्थान तृतीय भाग पृष्ठ १२१२

महादेव के निकट अपने आश्रम मे रहे। एक दिन मौका पाकर आप अचानक श्री रगनाथजी के दर्शन करने के लिये महलो मे पधारे। वहा जाकर अपने पौत्र (महाराव विष्णुसिह) से मिले। मिलने पर आपने अपनी नगी तलवार अपने पौत्र के हाथ मे देकर कहा कि "मेरा बुरा इरादा तुम्हारे प्रति नही है। यदि तू मेरे से सन्तुष्ट नही है तो इस तलवार से अभी अपने हाथ से मेरा शिर काटले। किन्तु इन बदमाशो से मेरी बदनामी न करवा। और श्रीजी के इस कथन का उन पर पूरा असर हुआ और वह जान गये कि इन दुष्टो को मारे विना मै अब निष्कटक राज्य न कर सकूगा। इस पर इसने पूज्य पितामह का बल पाकर झालाओ के चक्र से छुटकारा पाया। तब से महाराव राजा विष्णुसिह निष्कटक राज करने लगा।*

वि स १८६७ (ई सन् १८१०) मे महाराव विष्णुसिह के चचेरे भाई बलवन्तसिह (जागीरदार गोठडा) ने उपद्रव खडा किया और उसने नेनवा किले पर अपना अधिकार करलिया।† इस पर महाराव ने सेना भेज कर उसका दमन किया। जिस वर्ष (वि स १८६१) राजर्षि उम्मेदसिह का स्वर्गवास हुआ उसी वर्ष अग्रेजो की सेना कर्नल मानसन के सेनापतित्व मे जसवतराव होल्कर से लडने कोटा राज्य मे गई लेकिन मुकन्दरे के घाटे मे उसे हार खाकर लौटना पडा।‡ इस हारी हुई अग्रेज सेना को बून्दी राज्य ने जहा तक बन सका सहायता दी। इसका फल यह हुआ कि होल्कर बून्दी का कट्टर शत्रु होगया और वि स १८६१ (ई सन् १८०४) से स १८७४ (ई सन् १८१०) तक होल्कर व सिंधिया की मराठी सेनाओ ने तथा पिन्डारियो की लगातार लूट खसोटो ने बून्दी को तबाह करदिया। मरहठो तथा पिन्डारियो ने बून्दी से खिराज वसूल किया। वास्तव मे होल्कर तथा सधिया ने बून्दी को आपस में बाट लिया। महाराव विष्णुसिह नाममात्र का राजा रह गया। राज्य की आय १० लाख से घट कर ३ लाख रु० ही रह गई।§

तग आकर अग्रेजी सरकार से बून्दी राज्य को स १८७४ माघ सुदि ५ (ई सन् १८१८ ता० १० फरवरी मगलवार को) सधि करनी पडी। अग्रेज

---

* टाड का कथन है कि जालिमसिंह ने पोते दादा की मित्रता कराई।

† वश प्रकाश पृष्ठ ११३

‡ वश प्रकाश पृष्ठ ११२। वश प्रकाश में उल्लेख है कि मुकन्दरे की घाटी के युद्ध में अग्रेजो की सहायता के लिए वकील सादुल्ला खा, टोकरावास के मगनसिह घमनसिह महासिघोत आदि को भेजा।

§ वश भास्कर चतुर्थभाग

पिंडारियों का दमन करना चाहता था इसमें बून्दी के राज्य की सहायता आवश्यक थी। अतः इस संधि के अनुसार बून्दी अंग्रेज सरकार के संरक्षण में आ गया। जो खिराज होल्कर को दिया जाता था वह अंग्रेज सरकार द्वारा माफ कर दिया गया। बून्दी के जो परगने होल्कर ने ५० वर्ष पहले दबालिये थे बून्दी को वापिस दिलवा दिये गये। इसी प्रकार जो सिंधियाने परगने दबालिये थे वे भी बून्दी को वापिस लौटाये गये। महाराव राजा ने अंग्रेज सरकार को ८० हजार रुपये खिराज में देना स्वीकार किया।* परन्तु बाद में यह रकम घटाकर ४० हजार ही रखी गई। वि सं १९०४ (ई स १८४७) में सिंधिया (ग्वालियर) की सहमति से केशोराय पाटन का परगना बून्दी को १८ हजार रु वार्षिक सिंधिया को देते रहने की शर्त पर सौंपा गया।

स १९१७ (ई सन् १८६) में सिंधिया के साथ अंग्रेज सरकार की संधि हुई तब केशोराय पाटण का परगना अंग्रेज सरकार के कब्जे में आया जिसने बून्दी को सदा के लिये ८ हजार रु वार्षिक खिराज पर सौंप दिया। इसके सिवाय सं १७७४ (ई सन् १८१८) के अहदनामें के अनुसार ४० हजार रु सालाना भी बून्दी की तरफ से सरकार को देना तय हुआ।†

कोटा राज्य के अन्तर्गत खातौली बलबन गैंता पीपल्दा आंतरदा करवाड़ और करवाड़ नामक ८ ठिकाने जो कोटारियात कहलाते हैं पहले बून्दी राज्य के अधीनस्थ थे। वास्तव में ये जागीरें भी बून्दी राज्य में से उनको मिली थी। ये ठिकाने किला रणथम्भोर के साथ लगे हुए थे। जब रणथम्भोर का किला बादशाह अकबर के हाथ लगा तो उसने इन कोटारियात से कर (खिराज) मांगा क्योंकि इनकी इस किले से बहुत रक्षा होती थी। लगभग सं १८११ (ई सन् १७५४) में रणथम्भोर का किला जयपुर राज्य में आ गया और जो खिराज दिल्ली वाले लिया करते थे वह जयपुर दरबार लेने लगे। उस खिराज की वसूली के लिये प्रायः जयपुर राज्य की सेना हाड़ोती में आया करती थी। बून्दी वालों से खिराज पहुंचाने का प्रबन्ध बराबर नहीं होता था। अतः वि सं १८७४ पौष बदि ३ शुक्रवार (ई सन् १८१७ ता २६ दिसम्बर) को जब दिल्ली में अंग्रेज सरकार का अहदनामा कोटा राज्य के साथ हुआ तब वहां के प्रधान मंत्री राजराणा जालमसिंह झाला ने सरकार के प्रतिनिधि देहली

---

* एचीसन ट्रीटीज एंगेजमेण्ट्स एण्ड सनदस जिल्द ३ पृष्ठ २२१

† एचीसन ट्रीटीज एंगेजमेण्ट्स एण्ड सनदस जिल्द ३ पृष्ठ ३-७

रेजीडेन्ट श्री मेटकाफ से कह सुनकर उक्त कोटरियो को* वि स १८८० (१८२३ A D) मे कोटा के अधीन कर लिया और इन कोटरियो के खिराज के रु० १४,३९७।।।-) प्रति वर्ष जयपुर राज्य को अग्रेज सरकार के द्वारा देते रहने की शर्त सधिपत्र मे लिखदी जो आज तक कोटावाले देते आ रहे है। चतुर दीवान जालमसिह झाला ने इन ठिकानो के जागीरदारो को फिर कोटा राज्य से जागीरे दिलवादी व वून्दी की अपेक्षा उनकी इज्जत ज्यादा वढाई और इस प्रकार उन्हे अपने पक्षमे कर लिया।†

वि स १८७७ (ई सन् १८२०) मे कोटा के महाराव किशोरसिह हाडा अपने दीवान जालिमसिह झाला से तग आकर कोटे से वृन्दी चले आया। तव विष्णुसिह ने उसका वडा आदर सत्कार किया और उसे सात्वना दी। कुछ समय के वाद महाराव किशोरसिह दिल्ली चला गया।‡

वि स १८७८ की आषाढ सुदि १५ (ई सन् १८२१ ता० १५ मई रविवार) को महाराव विष्णुसिह का हैजा से स्वर्गवास हो गया। इसके दो पुत्र रामसिह और गोपालसिह थे। रामसिह ११ वर्ष की आयु मे अपने पिता की मृत्यु के वाद गद्दी पर वैठा। विष्णुसिंह ने अपने पीछे सती होने की मनाई करदी थी। यह वीर और साथ ही दयालु नरेश था। शिकार से इसे वडा प्रेम था। इसने कई शेर, चीते तथा सूअर मारे थे। शिकार मे इसकी एक टाग भी टूट गई थी। यह एक मितव्ययी राजा था। जव पिंडारियो के धावो से इसका खजाना खाली हो गया तव वडी मितव्ययता से इन्होने काम चलाया और राज कोष को वढाने का इसने एक नया और अनोखा तरीका अपनाया। इसने एक इन्द्रजीत नाम का एक लम्वा चौडा जूता वनवाया था। और किसी को अपना दीवान वनाते समय यह शर्त कराते थे कि यदि १०० रु० रोज से खजाने को नही वढाया तो इन्द्रजीत जूते से मरम्मत की जायगी।

महाराव राजा विष्णुसिह को हनुमानजी का वडा इष्ट था इसलिये दूसरे वून्दी शहर के पश्चिम की ओर वजरग विलास वाग की नीव डाली। इसकी

* डॉ शर्मा कोटा राज्य का इतिहास जिल्द २ पृष्ठ ५३७

† डॉ शर्मा कोटा राज्य का इतिहास पृष्ठ ५३७

‡ डॉ शर्मा कोटा राज्य का इतिहास वून्दी में किशोरसिह को हटाने के लिए कम्पनी के एजेन्ट और जालिमसिह ने वून्दी नरेश के नाम खरीते भेजे जिससे किशोरसिह वृन्दावन चला गया पृष्ठ ५६७

किशनगढ़ वाली रानी ने बून्दी के दक्षिण में धर्मशाला बनवाकर उसमें हनुमानजी की मूर्ति स्थापित की और इसकी एक उपपत्नी सुन्दर शोभा ने तालाब पर सुन्दर घाट बनवाया।

महाराव राजा रामसिंह
(वि० सं० १८७८ १९४६)

इसका जन्म वि सं १८६८ की पौष सुदि ३ बुधवार (ई सन् १८११ की १८ दिसम्बर) को हुआ था। यह बून्दी के राजसिंहासन पर वि सं १८७८

रामसिंह

की श्रावण वदि १२ (ई सन् १८२१ ता० २६ जुलाई गुरुवार) को दस वर्ष की आयु मे बैठा। इसके दो बडे भाई इन्द्रसिंह व बलदेवसिंह कुवर पद मे ही स्वर्ग सिधार गये थे। इसका राज्याभिषेक प्रसिद्ध इतिहासज्ञ कर्नल जेम्स टाड* की उपस्थिति मे बडे समारोह से हुआ था। पहले राजप्रबन्ध का काम चार सरदारो की एक कौंसिल के हाथ मे रहा। बाद मे राजमाता अमान कुवर राठौड की, जो किशनगढ की राजकुमारी थी, देखभाल मे होने लगा† परन्तु प्रबन्ध ठीक नही हो सका और महाराव राजा के नैतिक जीवन की सभाल भी अच्छी नही रही। इसलिये राजमाता से अधिकार लेलिये गये और राज प्रबन्ध धायभाई किशनराम को सौंपा गया। उसने राज्य का अच्छा प्रबन्ध किया और राज्य की आय भी बढाई। महाराव राजा का प्रथम विवाह जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह राठोड की राजकुमारी स्वरूप कवर के साथ स १८८१ की फागुण वदि ८ (ई सन् १८८० ता० २५ दिसम्बर, गुरुवार) को हुआ था। इस अवसर पर वून्दी नरेश तथा महाराजा मानसिंह ने एक थाल मे भोजन किया और वरात एक मास तक जोधपुर मे रही। इस विवाह के लिये वून्दी ने कोटा के सेठो मे दो लाख रु० कर्ज लिये थे। जोधपुर महाराजा ने इस रकम को अपने पास से चुका दी। दहेज भी बहुत दिया। यह सब कुछ होते भी स्वरूप कवर की आयु रामसिंह से अधिक थी और इन दोनो मे बनती न थी। राजा की आज्ञा का पालन भी यथावत् मुसाहिब (दीवान) किशनराम धायभाई नही करता था। इसलिये एकबार रानी के नौकरो व वून्दी वालो के बीच झगडा हो गया। जोधपुर के महाराजा मानसिंह के सकेत से स० १८८६ (ई० सन् १८२९) मे सालू नामक राजपूत ने कचहरी मे बैठे हुए दीवान धाय भाई किशनराम को मार डाला। महारानी स्वरूप कवर राठोड के निजि मकान मे जो मारवाडी आदमी थे वे समय पर सालू की सहायता को न पहुँच सके अतः सालू भी वून्दी वालो के हाथ से मारा गया। वून्दी सेना ने महारानीजी के साथ मे आये हुए मारवाडियो के निवास स्थान को घेर लिया और तीन दिन तक पानी भी उनके डेरे मे न पहुँचने दिया तब घबरा कर घिरे हुए मारवाडी भाग निकले और उनमे से

---

* जेम्स टाड उस समय राजस्थान की रियासतो पर ए० जी० जी० नियुक्त किया गया था। ए० जी० जी० को नए राजा के सिंहासन पर बैठते समय उपस्थित रहना पडता था। उसकी अनुपस्थिति में उसका प्रतिनिधि रहता था। तब ही नए राजा को वैधानिक तौर पर राज्य का अधिपति स्वीकार किया जा सकता था।

† टाड लिखता है कि राज माता बहुत स्नेहशील व नम्र स्वभाव की थी। टाड जिल्द ३ पृ० १५२०

कामदार सिंघी सरदारमल तथा धांगानी रूपराम गिरफ्तार किये जाकर मार डाले गये।* जोधपुर के बूड़सू ठिकाने का सरदार प्रतापसिंह मेड़तिया जिसकी जागीर महाराजा मानसिंह राठोड़ ने जब्त करली थी और जो उन दिनों कोटा में रहता था उसने मौके पर पहुँच कर बाकी मारवाड़ियों को भगा दिया। महाराजा मानसिंह ने उससे प्रसन्न होकर बूड़सू ठिकाना उसको वापिस दिया। इधर जोधपुर से पोकरण ठाकुर बभूतसिंह दो सो सवार और तीन सौ पैदल लेकर बून्दी आ पहुँचा। झगड़ा अधिक बढ़ता देख कर अंग्रेज सरकार ने बीच-बचाव करके कोटा के पोलिटिकल एजन्ट चार्ल्स ट्रयसियन द्वारा सुलह करादी।† संवत् १८९८ की पौष सुदि २ (ई. सन् १८४२ ता० १३ जनवरी गुरुवार) को महाराव पूर्व के तीर्थों की यात्रा के लिए रवाना हुए और संवत् १९ आषाढ़ सुदि १३ (२५ जून १८४३ रविवार) को राजधानी लौटे। इनमें दसाहरा माम में मथुरा वृन्दावन प्रयाग काशी गया और चित्रकूट आदि बहुत से तीर्थों की यात्रा की। सं १९२२ में महाराव ने फिर काशी (बनारस) की यात्रा की। पहले से ही आश्विन और चैत्र मास की नवरात्रि में देवी के पूजन के वक्त बहुत से भैंसे और बकरे यहाँ बलिदान के नाम से मारे जाते थे। इसने सिवाय १ या २ स्थानों के अन्य सब स्थानों पर यह प्रथा बन्द करा दी।‡

सं १९ ४ (ई. सन् १८४७) में अंग्रेज सरकार ने केशोराय पाटण जिले का दो तिहाई हिस्सा सिन्धिया से लिया था। वह महाराव राजा रामसिंह को वापस दे दिया। इसके एवज में बूंदी से प्रति वर्ष ८० हजार रुपये अंग्रेज सरकार को देना तय हुआ। इसी महाराव के समय में वि. सं. १९१४ (ई. सन् १८५) का इतिहास प्रसिद्ध विप्लव हुआ। सारे देश में अंग्रेजों के विरुद्ध आग भड़क उठी। महाराव ने उस समय अंग्रेजों की सहायता नहीं की क्योंकि महाराव राजा का उन दिनों कोटा के साथ मनमुटाव था।§ इस कारण सरकार ने बूंदी

---

* वीर विनोद भाग २ पृ. ११९ वंश प्रकाश पृ. ११७-११८

† वंश प्रकाश पृष्ठ ११९

‡ अन्य सुधारों में इसने सम्वत् १८९१ में जो राजपूतों के लड़की जन्मने को अपशकुन मानकर लड़कियों की हत्या करदी जाती थी उस प्रथा को बन्द करा दिया। अंग्रेजों ने सम्वत् १९ १ में इस प्रकार का कानून बून्दी में लागू किया।

§ एचिसन ट्रीटीज जिल्द ३ पृ. २१८ वंश प्रकाश में यह उल्लेख है कि गदर में विद्रोह के समय मेजर बर्टन को बून्दी की सहायता प्राप्त हुई थी। वंश प्रकाश पृ. १२११ इसके अलावा वंशप्रकाश का लेखक यह भी लिखता है कि जब बागियों की फौज कोटे आई तो बून्दी की फौज ने उसे शिकस्त दी (पृष्ठ १२२ १२३)

मे ३ वर्ष तक पत्र व्यवहार बद रखा। वि० स० १९१५ की आषाढ शुक्ला ८ (२१ जुलाई १८५८) के दिन जन-भारतीय विद्रोहियो की सेना बून्दी की ओर आई तब महाराव ने नगर और किले के द्वार बन्द कर विद्रोहियो पर तोपो के फायर करवाये जिससे उन्हे वहा से चला जाना पडा।

महाराव राजा ने अपने छोटे भाई गोपालसिंह को दुश्चरित्र होने के कारण नजर कैद कर दिया। वह उसी दशा मे वाद मे मर गया। स० १९१९ (ई० सन् १८६२) मे महाराव और उसके वशजो को गोद लेने की सनद मिली। स० १९३४ माघ वदि २ सोमवार (ई० सन् १८७७ की १ जनवरी) को लार्ड लिटन ने देहली मे दरवार किया। इस अवसर पर महाराव भी वहा गये। महारानी विक्टोरिया की ओर से इन्से सितारे हिन्द प्रथम श्रेणी का तगमा (जी० सी० एस० आई) और महारानी का सलाहकार की उपाधि मिली।* दिल्ली से पीछे लौटते हुए जयपुर के महाराजा सवाई रामसिंह ने महाराव को कुछ दिन जयपुर मे महमान रखा जिससे दोनो राज्यो का आपस का विरोध मिट कर पूर्ण स्नेह हो गया। स० १८८८ (ई० स० १८३१) मे अजमेर मे महाराव ने वेंटिक से तथा स० १९३२ (ई० सन् १८७५) मे आगरा मे लार्ड अलनवरा से मुलाकात की।† स० १९३९ माघ कृष्णा ३ (ई० सन् १८८३ की २७ जनवरी शुक्रवार) को इसके महाराज कुमार रघुवीरसिंह का विवाह जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंहजी की बहन सौभाग्यकवर के साथ हुआ। स० १९४२ (ई० स० १८८५) मे इसके छोटे राजकुमार का विवाह किशनगढ मे हुआ। वि० स० १८९० (ई० सन् १८३३) और १९२५ (ई० सन् १८६८) के भारी अकालो मे इसने अपनी प्रजा का पालन अच्छी तरह किया। यह प्रजा के हितो का पूरा ध्यान रखते थे। ये पुराने विचारो के रईस थे। ये अग्रेज व मुसलमानो से छने पर मुलाकात करने के बाद नहाते और कपडे भी धुलवाते थे।

वाल्यावस्था मे सस्कृत पढने मे इन्सने अच्छा परिश्रम किया था और इन्से धार्मिक ग्रन्थो का परिशीलन करते और विद्वानो की सगत करने का भी शौक था। इसके दरबार मे कई विद्वान रहा करते थे यथा पडित गगादास मुख्य थे जो सस्कृत के धुरन्धर विद्वान थे। ये पत्रकार भी थे। इन्होने अपनी देखरेख मे भादो सुदि १० वि० स० १९२८ को एक भौगोलिक यत्र बनवाया था। एक दूसरा खगोल यत्रराज पौष सुदि ३ वि० स० १९२८ में बनवाया था। इन्सने

---

* एचिशन ट्रीट्रीज जिल्द ३ पृ० २१८,

† वशप्रकाश पृष्ठ १२८ इस मुलाकात के बाद में इसने काशी की यात्रा कर शुद्धि की थी।

श्रीमद् भागवत की टीका भी लिखी थी। इसके दरबार में एक वैद्यराज बाबा आत्माराम सन्यासी थे जिसकी कई दवायें अति प्रसिद्ध थीं। इसके अलावा आमानन्द जीवनलाल पठान हमीदखाँ आदि प्रसिद्ध विद्वान थे। 'वंशभास्कर' नामक उत्तम पद्यात्मक चौहाण वंश के इतिहास का रचयिता कवि सूर्यमल चारण (मिश्र) इन्हीं का आश्रित था और दादूपंथी साधु निश्चलदास 'विचारसागर' नामक वेदान्त ग्रंथ का रचयिता इन्हीं के समय में हुआ था। महाराव रामसिंह को वेदान्त पर विचार विमर्श करने का बड़ा चाव था। इसके समय में बून्दी में संस्कृत पढ़ाने के लिये ४ पाठशालायें थीं इससे बून्दी नगर दूसरा काशी माना जाने लगा था। राज्य प्रणाली में प्रत्येक बात पुराने ढंग की रखने का इसे शौक था और अपने आपको पुराने ढंग का एक राजपूत रईस मानने में व अपना गौरव समझते थे। पुराने ढंग का होते हुए भी इन्होंने अपने राज्य से कई कुप्रथाओं तथा अंध-विश्वास की बातों को हटा दिया था। इसके समय में साधारणतया और विशेषकर जंगली कौमों में यह प्रथा थी कि बूढ़ी औरतों को डायन कह कर उन पर बच्चे व मनुष्यों को खा डालने का दोष लगा देते और उनको जीते जी पानी में डुबा देते थे या उन्हें नाना प्रकार के दुःख देते थे। सं० १८८६ (ई० सन् १८२९) में महाराव ने राज्य भर में यह घोषणा करा दी कि कोई ऐसी औरतों को डायन कहकर नहीं मारे तथा दुःख नहीं देवे। इसी प्रकार ज्यादातर लोग भूत प्रेतों के अंध-विश्वास में पड़े हुए थे। उनका भ्रम दूर करने के लिये भी महाराव राजा रामसिंह ने घोषणा कराई कि भूत को प्रत्यक्ष बतलाने वाले को २० बीघा जमीन दी जायगी परन्तु कोई भी भूत-प्रेत साबित नहीं कर पाया। सं० १९१५ (ई० सन् १८५८) में जब खराड़ के मीनों ने बलवा किया तो महाराव रामसिंह ने उनको दबा दिया। गोठड़ा के जागीरदार भीमसिंह हाड़ा ने अपने पिता बलवंतसिंह हाड़ा की तरह राज्य की आज्ञाओं का उल्लंघन किया और राज विद्रोह फैलाया इससे उसकी जागीर जब्त करके उसे राज्य से निकाल दिया गया। पश्चात् यह अपने भाई रामसिंह के पुत्र धोकलसिंह और फतहसिंह से मारा गया।*

इस प्रकार इसका शासन बड़ा कड़ा था। जिन लोगों ने इसका सामना किया उनको पश्चात्ताप होना पड़ा। सं० १९३९ माघ वदि १४ शुक्रवार (ई० सन् १८८२ की १८ जनवरी) में अंग्रेज सरकार के साथ नमक बनाने के विषय का अहदनामा हुआ जिससे बून्दी राज्य में नमक बनाना बंद किया गया और

* बून्दी राज्य का इतिहास १२८

सिवाय उस नमक के जिस पर सरकारी चुगी लगती हो किसी प्रकार का नमक बाहर से लाना व भेजना बद हो गया। इस नमक के ऐवज मे बून्दी राज्य को ८ हजार रु० वार्षिक अग्रेज सरकार की तरफ से दिया जाना तय हुआ।*

स० १९४२ (ई० सन् १८८६) मे महाराव राजा ने पुराने सिक्के की जगह अपने नाम का नया सिक्का चलाया। इस सिक्के मे एक तरफ अग्रेजी भाषा मे महारानी विक्टोरिया १८८६ ई० और दूसरी तरफ बून्दी का भक्त रामसिह १९४२ अकित था। यह रामशाही रुपये के नाम से प्रसिद्ध हुआ। स० १९४३ (ई० सन् १८८६) मे महाराव ने दूसरा रुपया ढलवाया जिसमे एक ओर कटार का चिन्ह और महारानी विक्टोरिया का नाम अग्रेजी मे तथा दूसरी ओर बून्दी का रामसिह १९४३ अकित था। यह कटारशाही सिक्का ई० सन् १९४० तक† इसी रूप मे बून्दी राज्य मे बनता रहा। उस पर रामसिह का नाम भी अकित होता रहता परन्तु उसके साथ मे सवत् बदलता रहता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह एक बडी भूल थी क्योकि भविष्य मे नवीन सवत् को रामसिह के नाम के साथ देख कर इतिहास-वेत्ता महाराव रामसिह को इस समय का करार दे सकते हैं।

स० १९४६ चैत्र वदि १२ गुरुवार (ई० सन् १८८९ ता० २८ मार्च) को सवा अठतर वर्ष की आयु मे ६८ वर्ष राज करके महाराव राजा रामसिह का स्वर्गवास हुआ। इसके भीमसिह, रगनाथसिह, रघुवीरसिह, रगराजसिह और रघुराजसिह नामक पाच राजकुमार तथा अर्जुनसिह और गोवर्द्धनसिह व जगन्नाथसिह तीन अनौरस पुत्र उप-पत्नियो (पडदायतो) से थे। इनमे से पाटवी महाराज कुमार भीमसिह ३२ वर्ष की आयु मे स० १९२५ मे तथा दूसरे महाराजकुमार रगराजसिह स० १९१३ मे ही चल वसे थे। इससे तृतीय महाराजकुमार रघुवीरसिह वि० स० १९४६ (सन् १८८९ ई०) मे अपने पिता के उत्तराधिकारी हुए।

---

* एचिशन ट्रीट्रीज जिल्द ३ पृ० स० २१९।

† १९४० तक जबकि दीवान ए० डब्ल्यू० रोबर्टसन् ने भारतीय सिक्के का प्रचलन किया। बून्दी के १००) भारतीय सिक्के १२५) के बराबर होते थे।

महाराव राजा सर रघुवीरसिंह बहादुर
(वि० सं० १९४६ १९८४)

इसका जन्म वि० सं १९२६ आश्विन वदि १ मंगलवार (ई सन् १८६९ ता० २१ सितम्बर) को हुआ और वि सं० १९४६ चैत्र सुदि ११ शुक्रवार

महाराव राजा सर रघुवीरसिंह बहादुर

(ई सन् १८८९ ता १२ अप्रेल) को बीस वर्ष की आयु में वह बून्दी की राज गद्दी पर बैठा। वि सं १९४६ माघ वदि ३ बुधवार (ई सन् १८९० ता ९

जनवरी को राजा के पूर्ण अधिकार अग्रेज सरकार ने इन्से सौंपे।

स० १६४८ (ई० सन् १८६१) मे अजमेर जाकर वह वाईसराय से मिला। स० १६५१ (ई० सन् १८६४) मे उसको के सी आई, स० १६५४ (ई० सन् १८६७) मे के सी. एस आई, स १६५८ (ई सन् १६०१) मे जी सी आई ई स १६६६ (ई सन् १६१२) में जी सी वी ओ और स. १६७६ (ई. सन् १६१६) मे जी सी एस आई की उपाधिया अग्रेज सरकार से मिली। स १६६० (ई सन् १६०३) और स १६६८ (ई सन् १६११) के देहली दरवारो मे भी सम्मिलित हुए। स १६६८ (ई सन् १६११) मे राजराजेश्वरी महारानी मेरी को वून्दी राजधानी* मे निमत्रण देकर इन्होने उसका वडा आदर सत्कार किया और जव माघ स १६६८ (ई सन् १६१२ जनवरी) मे सम्राट पचमजार्ज व सम्राज्ञी मेरी वापस विलायत जाने लगे तो महाराव राजा उनको वम्वई तक पहुचाने गये। प्रथम महायुद्ध (ई सन् १६१४-१६१८) मे और बाद मे अफगान युद्ध (ई सन् १६१६) मे महाराव राजा ने अपनी और अपने राज्य की सेवाओ को अग्रेज सरकार के अर्पण किया और तनमन व धन से सहायता दी। इसके समय मे स १६५६ (ई सन् १८६६) का भयकर अकाल पडा। स० १६६२ (ई सन् १६०५) मे इन्सने रेल्वे को वून्दी राज्य मे होकर निकालने के लिये जमीन दी।† इन्से १७ तोपो की सलामी थी। इसके विवाहित रानियो से कोई राजकुमार (पुत्र) न था केवल उपपत्नी (खवास-पासवान) से एक अनौरस पुत्र भवानीसिंह नाम का था जिसे इन्होने "महाराज" की पदवी दे रखी थी। इससे महाराव राजा के सगे छोटे भाई महाराव राजा रघुराजसिंह के पुत्र ईश्वरीसिंह को गोद लिया गया। महाराव राजा की मृत्यु स १६८४ सावण बदि १३ मगलवार (ई० सन् १६२७ ता० १६ जुलाई) को ५८ वर्ष की आयु मे ३ बज कर १५ मिनट पर शामको हुई। इन्होने ३६ वर्ष तक राज्य किया।‡

---

* महारानी मेरी शिकार की बहुत शोकीन थी। बून्दी के जगलो में शेर का शिकार करने के लिए वह बून्दी आई थी।

† एचिशन ट्रीट्रीज जिल्द ३ पृ० २१६।

‡ महायुद्ध की समाप्ति पर १६२० में बून्दी के महाराव ने केशोराय पाटण को बून्दी राज्य में मिलाने तथा १८४७ की सन्धि की ५ वी धारा रद्द करने की प्रार्थना की। अग्रेजी सरकार ने १६२४ में महाराव सर रघुवीर के साथ नई सन्धि कर ८०,०००) रुपये वार्षिक कर के बदले में पाटण बून्दी को दिया। एचिशन पृष्ठ २१६ जिल्द ३। कोटा बून्दी का आपसी मनमुटाव सन् १७०७ जून १० जाजव के युद्ध से चला आ रहा था। यह मह मनमुटाव इनके समय में दूर हुआ। सम्वत् १६८० (सन् १६२३) में जब सर रघुवीर बिमार पड़े तब कोटा के महाराव उम्मेदसिंह इसकी सकुशलता पूछने आए और सम्वत् १६८४
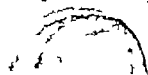
महाराव राजा सर ईश्वरीसिंह जी सी आई ई
(वि० सं० १९८४ २००२)

आप स्वर्गीय बून्दी नरेश महाराव राजा सर रघुवीरसिंह बहादुर के सहोदर

ईश्वरीसिंह

कनिष्ठ भ्राता स्वर्गीय महाराव रघुराजसिंह के पुत्ररत्न और महाराव राजा सर

(१९२० ई०) में सर रघुवीर मरे तो कोटा राज्य में शोक मनाया गया। महाराव उम्मेदसिंह कुटुम्ब सहित शोक प्रकट करने बून्दी आए। (डा० शर्मा कोटा राज्य का इतिहास भाग २ पृष्ठ ७१८) १९१९ ई० के इण्डिया एक्ट के अनुसार नरेन्द्रमण्डल का निर्माण हुआ जिसमें इनको सर्व प्रथम सदस्यता प्राप्त थी।

रामसिंह के वंश में यही एकलौते वंशधर थे। आपका जन्म जोधपुर के स्वर्गीय महाराजा जसवन्तसिंहजी के छोटे भाई महाराज मुहब्बतसिंह की पुत्री देवकुँवर के उदर से वि० स० १९४९ चैत्र वदि ६ बुद्धवार (ई० सन् १८९३ ता० ८ मार्च) को हुआ था। स० १९६२ मगलवार सुदि ८ सोमवार (ई सन् १९०५ ता ४ दिसम्बर) के दिन अपने पूज्य पिता महाराज रघुराजसिंह के स्वर्ग सिधारने पर आप अपनी वासी की जागीर के स्वामी हुए, जो इनके दादा स्वर्गीय महाराजा रामसिंह ने वि० स० १९४१ (ई सन् १८८४) मे प्रदान की थी। आपकी पढाई का प्रबन्ध घर पर ही हुआ था। आपने हिन्दी, उर्दू और कुछ कुछ अग्रेजी का भी अभ्यास किया था।

महाराव राजा सर रघुवीरसिंह बहादुर के एकलौते राजकुमार की अकाल मृत्यु हो जाने पर महाराज ईश्वरीसिंहजी ही एकमात्र राज्य के अधिकारी रह गये थे। अत स १९८४ (ई सन् १९२७) मे रघुवीरसिंह के स्वर्ग सिधारने पर स १९८४ की श्रावण वदि १३ मगलवार (ई० सन् १९२७ ता० २६ जुलाई) को महाराज ईश्वरसिंह बून्दी के राज-सिंहासन पर बैठे। आपका राज्याभिषेक उत्सव स १९८४ श्रावण सुदि १० सोमवार (ई सन् १०२७ ता ८ अगस्त) को बडी धूमधाम मे हुआ।

महाराव राजा सर ईश्वरीसिंह को राज-शासन के पूर्ण अधिकार स १९८४ आसोज सुदि १ सोमवार (ई सन् १९२७ ता २६ सितम्बर) को मिले।* इन अधिकारो के मिलने के कुछ वर्ष बाद सन् १९३१ के जून मास मे राज्य के जनाने महलो के निकट कर्मचारी पुरोहित रामनाथ कुदाल (दाहिमा ब्राह्मण) को राज-कोप का भाजन बनना पडा। इसको खुलेआम राज्य की पुलिस ने निर्दयता से १२ जून को मार डाला। इस अन्याय से जनता अप्रसन्न हो गई और उनकी श्रद्धा राज्य शासन से उठने लगी। इस कुकर्म की निन्दा व विरोध में ९ दिन तक वहा हडताल भी रही। इस हत्याकाड का फैसला ४-९-३१ ई को बून्दी की चीफकोर्ट से हुआ। उसमे ७ मुसलमान व एक हिन्दू को सजा हुई।† १९३८ मे भारत सरकार ने इस राज्य का खिराज १,२०,००० से घटा कर ७०,४००) कर दिया। इनके कोई राजकुमार न होने से इन्होने कापरेन ठिकाने के कुवर बहादुरसिंह को वि स १९९० चैत्र वदि ६ शुक्रवार (ई सन् १९३३ ता १७ मार्च) को गोद (दत्तक) लिया। महाराव राजा साहब को अग्रेज सरकार की ओर

---

* एचिशन ट्रीट्रीज जिल्द ३ पृ० २१९।

† बाम्बे क्रोनिकल, १९ जून १९३१।

से जी सी आई ई की उपाधि भी १९९४ वैशाख (ई सन् १९३७ मई) मास में मिली थी। इनके काल में दूसरा महायुद्ध (१९३९ ४५) हुआ। इन्होंने अपनी तथा राज्यकीय सेवायें अंग्रेजी सरकार को अर्पित की और अपने लड़के बहादुरसिंह को युद्ध में सक्रिय भाग लेने भेजा। इनकी मृत्यु २३ अप्रेल १९४५ को बून्दी में हुई।*

महाराव राजा बहादुरसिंहजी (१९४५ १९४७)

महाराव राजा बहादुरसिंह का जन्म १७ मार्च १९२१ को कापरेन वंश में सुप्रसिद्ध राजा बुद्धसिंह (१६९५ १७३९) से फटे हुए ठिकाने कापरेन में हुआ था। बून्दी के महाराव के पास १९३१ में गोद आये। आपकी शिक्षा मेयो कालेज अजमेर में हुई थी। १९४ में आपने पुलिस ट्रेनिंग कालेज मुरादाबाद और १९४१ में इण्डियन सिविल सर्विस प्रोबेशनर्स कोर्स की भी शिक्षा प्राप्त की थी।

महारावजी ने पिछले युद्ध में स्वयं भाग लिया था। आपने १९४२ में एक केडेट के रूप में आफिसर्स ट्रेनिंग स्कूल बंगलौर के द्वारा सेना में प्रवेश पाया। वहां का कोर्स समाप्त करते ही आपने इण्डियन आर्मड कोपस के साथ बर्मा के

* इनके शासनकाल में दूसरा महायुद्ध हुआ जिसमें इन्होंने अंग्रेजी सरकार की बून्दी फौज व युद्ध फण्ड में बहुत सहायता दी। राजकुमार बहादुरसिंह स्वयं अंग्रेजी फौज में भरती होकर बर्मा के युद्ध क्षेत्र में गए जहां उन्होंने जापानियों से डटकर मुकाबला किया और मेकटिला में वीरता का प्रदर्शन करने पर १९४५ में सैनिक वीरता पदक मिला।
बून्दी महाराव ने १८ अक्टूबर १९४१ को प्रतिनिधि धारा सभा का निर्माण किया जिसमें चुने हुए व्यक्तियों का बहुमत था। १९ अक्टूबर को धारा-सभा में १९४१-१९४२ का बजट एकाउन्टेन्ट जनरल ने रखा। इस धारा-सभा ने प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य करदी। टाइम्स ऑफ इण्डिया बम्बई, २७ अक्टूबर १९४१ पृ ५।

[illegible]

महाराव बहादुरसिंह

उनका विवाह रतलाम की ज्येष्ठ राजकुमारी के साथ अप्रेल १९३८ मे हुआ था। इस विवाह से राजकुमार रणजीतसिंहजी का जन्म १३ सितम्बर १९३९ को तथा एक राजकुमारी ६ फरवरी १९४२ को हुई।

आपका राजतिलक राजमहलों में १४ मई १६४५ को हुआ। उसी दरबार में सरदारों व उच्च अफसरों ने नजरें व न्यौछावर कर अपनी राज भक्ति प्रदर्शित की। इसके बाद ४ अगस्त को तत्कालीन राजपूताने के रैजीडेन्ट गिब्सन की उपस्थिति में आपने भावी सुधारों व प्रजा के हित को सदा ख्याल में रखने की घोषणा की। शीघ्र ही राज्य की धारा सभा का दूसरा अधिवेशन अगस्त १६४५ में बुलवाया। १६४६ में दीवान राबर्टसन ने त्याग-पत्र दे दिया। राबर्टसन सन् १६३६ से बून्दी का दीवान था। उसके दीवान काल के समय बून्दी राज्य की आय १४ लाख से १० लाख हो गई और १६४६ में राज्य का रिजर्व फण्ड २७ लाख रुपये का था। १६४७ ई० को भारत के स्वतन्त्र होने पर बून्दी राज ने वृहत् राजस्थान के बनने के लिए पूर्ण सहयोग दिया। २५ मार्च १६४८ को जब राजस्थान संघ बना तब बून्दी राज्य भी उसमें सम्मिलित हो गया। अब महाराज को सरकार से प्रिवीपर्स के २८१०० मिलते हैं।

बून्दी राज्य का मुसलमानों से सम्बन्ध

वीर विनोद के लेखक कविराज श्यामलदास के तथ्यों के आधार पर बून्दी देवीसिंह हाड़ा से राव सुर्जन हाड़ा तक चितौड़ के राणाओं के आश्रित रहा। अत बून्दी राज्य की स्थापना वि सं १३६८ (सन् १३४१) से स १६२६ (सन् १५६६) तक उसका दिल्ली के सुल्तानों से सम्बन्ध मेवाड़ के राज्य के अन्तर्गत ही रहा। कर्नल टाड ने बून्दी के संस्थापक देवीसिंह को सिकन्दर लोदी के दरबार में जाने का उल्लेख किया है।* यह सत्य प्रतीत नहीं हो सकता क्योंकि देवा राव का काल सन् १३४० १३४२ ई में दिल्ली का सुल्तान मोहम्मद

* टाड: राजस्थान हमीरवाल ग्रह सं १५६४

विन तुगलक था न कि सिकन्दर लोदी जिसका समय १४३२ स १४६० तक था। राव देवा का इस प्रकार सौ वर्ष जीवित रहना सम्भव नही। राव देवा के बाद उसका पुत्र समरसी ई सन् १३४३ मे गद्दी पर बैठा। वश भास्कर मे लिखा है कि समरसी वादशाह अलाउद्दीन खिलजी (वि स १३५३-७२) के मुकावले वम्बावदा मे मारा गया।* यह तथ्य भी तर्क सगत नही जचता है। समरसी का राज्य काल वि स ७४०० (७३४३ ई) से वि स १४०३ (सन् १३४६) था। उस काल मे अलाउद्दीन दिल्ली के सिंहासन पर राज्य नही करता था। उसका काल तो ई स १२९६ से १३१४ ई तक रहा है। उस समय मे मुहम्मदबिन तुगलक दिल्ली के राज्य सिंहासन पर राज्य करता था। उसके शासन मे इतनी उथल-पुथल थी कि उसके लिए राजपूताने की ओर स्वय आना या सेना भेजना मुश्किल था। मुगलो के आने के पहले बून्दी के हाडाओ का दिल्ली सल्तनत से प्रत्यक्ष सम्बन्ध की कोई तथ्यपूर्ण वार्ता प्राप्त नही हुई है। जो कुछ भी रहा होगा वह महाराणा उदयपुर के सामन्त के रूप मे रहा होगा। यो तो फरिश्ता के आधार पर यह स्वीकार किया जा सकता है कि मालवा के वादशाह महमूदखिलजी ने बून्दी कोटा पर तीन वार चढाई की। पहली सन् १४५९ मे, दूसरी वार १४५३ मे तथा तीसरी सन् १४५९ की। आखीरी चढाई मे सुल्तान अपने छोटे शाह-जादा फिदाईखा को वहा का मालिक बना कर आया। राव बैरीसाल सन् १४५९ मे महमूदखिलजी के विरुद्ध युद्ध करते हुए मारा गया। बैरीसाल के दो पुत्र मुसलमानो द्वारा पकडे गए† जिन्हे मुसलमान बना दिया गया। उनका नाम मुसलमाने अमरकन्दी और समरकन्दी रक्खा। जिन्होने बून्दी पर अधिकार कर ११ वर्ष तक राज्य किया‡ इसी समय मेवाड के राणा कुम्भा ने हाडोती प्रदेश को विजय कर वहा पर अपनी प्रभुता पुन स्थापित की।§ वश प्रकाश मे तथा बून्दी राज्य की ख्यात और टाड राजस्थान मे इस बात का उल्लेख है कि समर-कन्दी या उसके पुत्र दाउदखा को मार कर राव नारायणदास ने बून्दी पर हाडाओ की पताका पुन फहरादी।¶

राव नारायणदास (१५०३–१५२७ ई) ने मेवाड का नेतृत्व पुन स्वीकार किया। वह चित्तौड के राणा रायमल और महाराणा सग्रामसिंह का समकालीन

---

* वशभास्कर तृतीयभाग पृष्ठ स० १६७८

† टाड तृतीयभाग पृष्ठ स० १४७३

‡ वशभास्कर पृष्ठ १७०८

§ राणकपुर का शिलालेख वि० स० १४९६

¶ वशप्रकाश ५१, ८

था। राणा रायमल की पुत्री का विवाह राव नारायणदास से हुआ था।*

१५२५ ई० में बाबर ने भारत पर आक्रमण किया। १५२६ ई० में उसने लोदी सुल्तान इब्राहीमखां को पानीपत के मैदान में बुरी तरह हरा कर दिल्ली आगरा पर अधिकार कर लिया। १५२७ ई० में बाबर खानवा के मैदान में राणा सांगा के विरुद्ध आ खड़ा हुआ। राणा सांगा के नेतृत्व में समस्त राजपूताने के शासक लड़ रहे थे। बून्दी के राव नारायण ने राणा सांगा की अधीनता में बाबर के विरुद्ध युद्ध किया। विजय बाबर की रही परन्तु हाड़ा ने मुगल अधीनता स्वीकार नहीं की।‡ राव नारायण के छोटे भाई नर्बदे की पुत्री कर्मवती महाराणा सांगा को ब्याही थी। जिसके पुत्र विक्रमादित्य व उदयसिंह थे। महाराणा सांगा की मृत्यु के बाद विक्रम व उदयसिंह व उसकी माता को रणथम्भोर सौंपा गया था जहां वे बून्दी के राव सूर्य्यमल हाड़ा की निगरानी में रहते थे। गुजरात के बादशाह बहादुर शाह ने चितौड़ पर सन् १५३५ में आक्रमण किया तो बून्दी का राव अर्जुन बून्दी की ५ हजार सेना का अधिपति होकर चितौड़ आया। रानी कर्णावती हाड़ी ने मुगल बादशाह हुमायू को राखी भेजकर अपनी सहायता के लिए बुलाया परन्तु हुमायू ठीक समय पर न आ सका। बहादुरशाह ने चितौड़ विध्वंस कर दिया। सुरंग बना कर और उसमें बारूद भर कर चितौड़ का बुर्ज उड़ा दिया जिसमें अर्जुन हाड़ा व उसके साथी काम आए। रानी कर्णावती ने जौहर किया। बहादुरशाह का चितौड़ पर अधिकार हो गया।

अकबर के समय से मुगलों व बून्दी के हाड़ों का सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से स्थापित होने लगा था। अकबर साम्राज्यवादी शासक के रूप में राजपूताने की स्वतन्त्र रियासतों को अपने अधीन करने में संलग्न था। उसने हर तरह के साधनों को युद्ध कूटनीति षड्यंत्र आदि अपना कर अपनी साम्राज्य-लिप्सा को पूर्ण करना चाहा। कालान्तर में अकबर ने राजपूतों के सहयोग से अपने साम्राज्य व वंश की दृढ़ता स्थापित की। राजपूताने के राज्यों में असन्तुष्ट वर्ग विशेषकर असन्तुष्ट राजवर्ग अकबर के दरबार में शरण पाया करते थे। बून्दी के राव सुरजमल के दर्दनाक अन्त के कारण उसका आठ वर्षीय बालक सुरताण गद्दी पर बैठा। उसकी शादी महाराणा उदयसिंह के पुत्र शक्तिसिंह की पुत्री से हुई।† सुरताण बड़ा अत्याचारी और मूर्ख नरेश था। उसने प्रजा व सरदारों को अपने कार्यों से नाराज कर दिया। वह भैरव का इष्ट रखने के कारण नरबलि चढ़ाया

---

* उपरोक्त पृष्ठ १७७५

† वंशभास्कर तृतीयभाग पृष्ठ २ ९१

‡ नैणसी की ख्यात भाग १ पृष्ठ ११

करता था। सरदारो ने इस अत्याचार के विरुद्ध सगठित होकर सुरताण को गद्दी से उतार दिया। उसे सुरथानपुर का गाव दे दिया। और राव माणदेव के पुत्र नर बुद्ध के पुत्र अर्जुन को राजसिंहान पर बैठा दिया। सुरताण अपने विरोधियो के विरुद्ध सहायता प्राप्त करने के लिए मुगल बादशाह अकबर की शरण मे गया। ऐसे समय मे अकबर राजपूतो पर अधिकार स्थापित करने के लिए क्षुब्ध राजपूत वर्ग को प्रोत्साहन दे रहा था। अकबर ने उसे तोपखाने का अफसर बना दिया। जब अकबर ने चितौड पर सन् १५६७ ई मे आक्रमण किया उस समय सुरताण अकबर के साथ था। मार्ग मे से थोडी-सी शाही सेना लेकर उसने बून्दी पर चढाई कर उसे लेना चाहा पर उसे सफलता नही मिली।*

बून्दी के हाडो और मुगलो के बीच का सम्बन्ध राव सुर्जन हाडा के काल से दृढ हुआ। राव अर्जुन जब सन् १५३४-३५ मे चितौड मे बहादुरशाह के साथ युद्ध मे मारा गया तो उसका लडका राव सुर्जन गद्दी पर बैठा। वह रणथम्बोर का हाकिम था और मेवाड के राणाओ के अधीन था। इसकी शक्ति का विकास डोकरखा व केसरखा से पुन कोटा प्राप्त करने पर बढ गई। कोटा के उत्तर के बडौद व सीसबली के परगनो पर भी इसने अधिकार कर लिया। ठीक इसी समय अकबर ने चितौड विजय कर रणथम्बोर पर अधिकार करने की योजना बनाई।

रणथम्बोर का दुर्गम व सुदृढ किला महाराणा सागा ने मालवे के सुल्तान महमूदखिलजी से सन् १५१५ मे छीना था।† बाद मे यह किला शेरशाह के हाथो मे चला गया।‡ परन्तु शेरशाह की मृत्यु के बाद अफगान राज्य को क्षति होने और मुगलो की पुन स्थापना के मध्यकाल मे सुर्जन हाडा के नेतृत्व मे पुन रणथम्बोर स्वतन्त्र हो गया। अकबर ने अक्टूबर १५५८ मे रणथम्बोर लेने का प्रयत्न किया लेकिन वह असफल रहा। मुगलाई हमले बारबार रणथम्बोर पर होते रहे इससे रणथम्बोर के पठान किलेदार ने धन लेकर सुर्जन को सन् १५५६ के अन्तिम दिनो मे सौप दिया।§ सुर्जन ने रणथम्बोर के आसपास के परगनो को भी अपने अधिकार मे कर अपनी शक्ति बढ़ाई। अकबर के लिए

---

* वशभास्कर भाग २, पृष्ठ २२५३-५४

† तुजुके बाबरी (बेवरीज अनुवाद) पृष्ठ ४८३

‡ डा० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव मुगलकालीन भारत पृष्ठ १०६

§ टाड राजस्थान जिल्द ६, पृष्ठ १४८०, टाड लिखता है कि बैदला के चौहान शासक ने रणथम्बोर का किला राव सुर्जन को इस शर्त पर दिलाया कि वह मेवाड के सामन्त के रूप में राज्य करे।

असहनीय था कि यह दुर्ग और उसका अधिपति स्वतन्त्र रहे। अप्रैल १५६८ ई० में अकबर ने एक सेना रणथम्बोर विजय करने के लिए भेजी परन्तु मालवा के विद्रोही मिर्जा के आक्रमण हो जाने पर यह मुगली सेना वापिस बुला ली गई। फरवरी १५६९ में अकबर ने स्वयं सेना का नेतृत्व कर रणथम्बोर का घेरा डाल दिया।* लगभग डेढ़ मास तक घेरा पड़ा रहा लेकिन राव सुर्जन ने आत्म समर्पण नहीं किया। अन्त में जो काम शस्त्र बल से न हो सका वह युक्ति और प्रेम से किया गया। नागोर के राजा भारमल (भगवानदास) के समझाने से राव सुर्जन ने २१ मार्च सन् १५६९ को मुगलों की अधीनता स्वीकार करली जब आमेर का भगवानदास सुरजनराय से भेंट करने गया तब उसके साथ छद्मवेश में अकबर भी था। राजपूतों ने अकबर को पहचान लिया। इस पर अकबर ने स्वयं अपने आपको प्रकट कर दिया और बातचीत स्वयं करने लगा। रणथम्बोर में सुरजन की ओर से सावतसिंह हाड़ा किलेदार था। उसने इस प्रकार आत्म-समर्पण करने का विरोध किया परन्तु उसका विरोध व्यर्थ ही रहा† राव सुर्जन और अकबर के बीच एक सन्धि हुई जिसकी निम्नलिखित शर्तें थीं।

१—बून्दी के राजाओं से महल में डोला भेजने को नहीं कहा जायगा।

२—बून्दी के राजाओं को अपनी स्त्रियों को नौरोज में भेजने को नहीं कहा जायगा।

३—बून्दी के राजा अटक के पार नहीं जायेंगे।

४—बून्दी के राजा को शस्त्र पहिने दीवानेआम व दीवाने खास में आने की आज्ञा दी जायेगी।

५—बून्दी के राजाओं को दिल्ली राजधानी में लाल दरवाजे तक नक्कारा बजाते हुए आने की आज्ञा रहेगी।

६—बून्दी राजाओं के घोड़ों के शाही दाग न लगाये जायेंगे।

७—बून्दी के राजा कभी किसी हिन्दू सेनापति के नीचे नहीं रखे जायेंगे।

८—बून्दी राज्य से जजिया कर नहीं लिया जायेगा।

---

* वी० ए० स्मिथ दी ग्रेट मुगल पृष्ठ ९८

† टाडजी के अनुसार सुरजनराय को जब यह बात स्पष्ट की गई कि चित्तौड़ जैसा सुदृढ़ किला मुगल आक्रमणों को अधिक समय तक बर्दास्त न कर सका तो रणथम्बोर का किला कैसे मुगल साम्राज्य का विरोध कर सकता है। इसलिए उसने अपने दोनों बेटों दूदा और भोज को अकबर की सेवा में भेज दिया।

९-उनके मन्दिर इत्यादि पुण्य स्थानो का आदर किया जायेगा।

१०-हाडो की राजधानी बून्दी ही रहेगी उन्हे बदलने को लाचार नही किया जायेगा।*

इन शर्तों की पूर्ण सत्यता मे मतभेद है। वश-भास्कर मे प्रथम ७ शर्तों का वर्णन है† लेकिन कर्नल टाड ने १० शर्तों का उल्लेख किया है। इसमे कोई सन्देह नही कि ये शर्तें राजपूत अभिमान की सूचक थी लेकिन इन शर्तों के किए जाने मे कुछ सन्देह है। जिन बातो का उल्लेख इन शर्तों मे हुआ है उनमे कई बाद मे घटित हुई थी। उदाहरण रूप मे जजिया ई सन् १५६४ मे ही बन्द कर दिया गया था, घोडो के बादशाही दाग लगाने की प्रथा बून्दी मे ई. स. १५७४ में शुरू हुई। अटक पार जाने की आशका उस वक्त थी ही नही क्योकि अकबर के राज्य की सीमा उस समय इतनी बढी हुई नही थी। इसलिए इन बातो का समावेश पहले से ही सुलहनामे मे आना वास्तविकता से दूर ले जाता है। इस सुलहनामे का जिक्र न तो अबुल फजल ने अकबरनामे मे किया, न बदाउनी ने और न मुहता नैणसी ने अपनी ख्यात मे लिखा। नैणसी ने इतना तो अवश्य लिखा कि राव सुर्जन ने ५ मार्च १५६९ को बादशाह अकबर की मातहती स्वीकार करते हुए इस शर्त के साथ गढ बादशाह को सौपा कि 'मैने महाराणा मेवाड का अन्न खाया है इसलिए उस पर चढकर कभी नही जाऊँगा।'‡ रणथम्बोर लिए जाने पर अजमेर सूबा के अन्तर्गत एक सरकार बना दी गई जिसके नीचे बून्दी और कोटा के परगने रक्खे गये। तब से बून्दी के हाडा बराबर मुगलो की सेवा मे रहे। अकबर ने हाडा सुर्जन को एक हजारी जात व सवार का मनसबदार बना दिया। तथा गढ कटगा (मध्यप्रदेश) की जागीर इनाम मे दी। वहा राव सुजान ने गोडो का दमन करके बारीगढ पर मुगल अधिकार स्थापित कर लिया। इस पर अकबर ने उसे ५००० का मनसबदार बना दिया।§ बादशाह ने उसे बून्दी के निकट के २६ परगने और बनारस के निकट २६ परगने दिये।¶

राव सुर्जन के काशी मे रहने के कारण बून्दी का राज्य उसका पुत्र दूदा

---

* टाड राजस्थान जिल्द ३, पृष्ठ स० १४८२

† वशभास्कर तृतीयभाग पृष्ठ २२६५

‡ मुहणोत नैनसी की ख्यात भाग १, पृष्ठ १११ (काशी सस्करण)

§ वशभास्कर तृतीयभाग पृष्ठ २२८४-८५

¶ उपरोक्त २२८९। अकबर ने उसे चुनार व बनारस का हाकिम भी नियुक्त किया था।

सम्हालता था और भोज कोटे में नियुक्त था जो बून्दी के मातहती में रहता था। ई. १५७६ में दूदा और भोज में बून्दी के शासन प्रबन्ध के मामले को लेकर आपस में अनबन हो गई। स्वयं सुर्जन ज्येष्ठ पुत्र दूदा से नाराज था क्योंकि वह अकबर से मेल रखने के विरुद्ध था।* इस कारण उसने भोजदेव को बून्दी देना चाहा। इस पर दूदा अगस्त १५७१ में विद्रोही हो गया। बादशाह ने विद्रोह को दबाने के लिए दो बार सेना भेजी। दूदा अन्त में हार कर उदयपुर पहुँचा और महाराणा की सहायता से लूट-खसोट करने लगा। अकबर ने १५७७ में भोज को बून्दी का राजा स्वीकार किया। उसे एक हजारी मनसब दिया गया।†

राव भोज अकबर के सरदारों में बड़ा राज भक्त सरदार था। बहुत समय तक मानसिंह के मंसूरम में शाही युद्धों में जाता रहा व वीरता का परिचय देता रहा। उड़ीसा में अफगानों को दबाने में राव भोज ने अकबर से यश प्राप्त किया। गुजरात के शासक इब्राहीम मिर्जा के विरुद्ध जब १५७२ ई में अकबर ने प्रयाण किया तो राव भोज उस युद्ध में हरावल में लड़े। राव भोज न १५७१ में सूरत के किले और १६०० ई में अहमदनगर के किलों को विजय करने में मुगलों का हाथ बटाया। अहमदनगर के युद्ध में भोज ने जिस वीरता का प्रदर्शन किया उससे प्रसन्न होकर बादशाह ने उस किले की बुर्ज को भोजबुर्ज कहना आरम्भ किया।‡ परन्तु भोज के अन्तिम दिनों में अकबर उससे नाराज हो गया। अकबर भोज की कन्या से शादी करना चाहता था पर भोज ने अपनी कन्या की शादी जोधपुर के राव मालदेव से कर दी थी। इस पर अकबर ने भोज के पद छीन लिए। टाड का कथन है कि इस अनबन का कारण यह था कि अकबर की पटरानी जोधाबाई की मृत्यु पर राव भोज ने दाढ़ी मूछ नहीं मुंडवाई, इससे अकबर नाराज होगया।§ अकबर की मृत्यु के बाद (१६०५ ई) भोज पुनः बूंदी लौटा परन्तु जहांगीर से पुनः झगड़ा मोल ले लिया क्योंकि भोज जहांगीर और जयपुर नरेश की लड़की जोकि भोज की दोहिती थी उसकी शादी का विरोध करता था। जहांगीर उस समय काबुल में था और लौटने पर राव भोज को दंड देना चाहता था। पर इसके पहले ही राव भोज का १६०८ में देहान्त हो गया।¶ राव भोज ने अपने दूसरे लड़के हृदयनारायण को कोटा का

---

* अकबर ने दूदा का नाम लड़क्खां रखदिया था
† महाशिरुलउमरा उमरा पृष्ठ २७४
‡ टाड राजस्थान तृतीयभाग पृष्ठ १४८५
§ उपरोक्त पृष्ठ १४८५
¶ जमनाम देवुर पृष्ठ ८५

राजा बनाकर अकबर से फरमान प्राप्त कर लिया था ।* उसकी मृत्यु के बाद राव रतन गद्दी पर बैठा ।

बूंदी के शासको ने मुगल-प्रभुत्व काल मे बादशाहो के प्रति राज्य-भक्ति का अलौकिक प्रदर्शन किया । वे हमेशा दिल्ली पर आसीन शासक के प्रति वफादार बने रहे और जिन्होने मुगल सल्तनत का विरोध किया उन्हे दबाने मे इन्होंने केन्द्रीय सरकार को सहायता दी । राव रतन (सन् १६०८–१६३१) जहागीर का पचहजारी मनसबदार था । उसे 'सर बुलन्द राय' और 'रामराज' की उपाधिए दी गई थी , केसरिया निशान व नक्कारा शाही इनायत के रूप मे प्रदान हुए थे । खुर्रम (आगे चलकर जो 'शाहजहा' हो गया था) के विद्रोह † को दबाने मे राव रतन ने भरपूर सहायता जहागीर को दी । खुर्रम के विद्रोह को दबाने के लिए राव रतन व उसका भाई हृदयनारायण भेजा गया । राव रतन ने शाहजादा परवेज और महावत खा के नेतृत्व मे दक्षिण की ओर प्रयाण किया जहाँ खुर्रम माडू मे था । माडू पर खुर्रम हार गया तथा नर्मदा पार कर वह दक्षिण की ओर चला । इस समय राव रतन के प्रयास से खुर्रम और महावत खा के बीच सन्धि करने की योजना बनी पर शर्त तय न हो सकने के कारण पुन युद्ध प्रारम्भ हुआ । नर्मदा पार कर राव रतन ने खुर्रम को बुरी तरह हराया ।‡ बुरहानपुर पर शाही अधिकार हो जाने के बाद खुर्रम ने बुरहानपुर का घेरा डाल दिया परन्तु राव रतन व उसके पुत्रो माधोसिह व हरिसिह की वीरता के कारण बुरहानपुर न ले सका । खुर्रम गोडवाला होता हुआ बगाल बिहार की ओर चला। परवेज और हृदयनारायण उसका पीछा करते हुए इलहाबाद की ओर चले । राव रतन को बुरहानपुर का किलेदार नियुक्त किया गया ।§ झूसीके युद्ध मे हृदयनारायण भाग गया । जहाँगीर ने उससे कोटा लेकर अस्थायी रूप से राव रतन को सौंप दिया । झूसी के युद्ध मे हार कर खुर्रम पुन. दक्षिण की ओर लौटा और बुरहानपुर लेने का प्रयास किया । परन्तु इस बार वह हार कर पकडा गया और वही किले पर राव रतन की देखरेख में रख दिया गया ।¶ राव रतन की दक्षिण की सेवाओ से प्रसन्न होकर ५ हजारी मसब तथा 'रावराय'

---

* डा० शर्मा कोटा राज्य का इतिहास जिल्द १ पृष्ठ ८३

† खुर्रम के विद्रोह के लिए देखो डा० आशीर्वादीलाल कृत मुगलकालीन भारत पृष्ठ ३२३

‡ खफीखा जिल्द १ पृष्ठ ३४८

§ टाड राजस्थान जिल्द ३ पृष्ठ १४८७ खफीखा जिल्द १ पृष्ठ ३४८

¶ वशभास्कर तृतीय भाग पृष्ठ २४६६
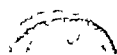
की पदवी दी। राव रतन ने सुअवसर देखकर कोटा का राज्य माधोसिंह को दे दिया और जहांगीर से शाही फरमान की प्रार्थना की। यद्यपि जहांगीर ने शाही फरमान तो नहीं दिया परन्तु माधोसिंह को कोटा देने पर आपत्ति नहीं की। जहांगीर की मृत्यु के बाद १६२८ में शाहजहां ने शाही फरमान देकर कोटा का राजा माधोसिंह को स्वीकार किया। राव रतन की मृत्यु के बाद १६३२ ई० में माधोसिंह ने कोटा का स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया।

मुग़ल उत्तराधिकारी युद्ध व बून्दी के राव

राव रतन के बाद कोटा पर माधोसिंह बून्दी से स्वतन्त्र होकर राज्य करने लगा था। बूंदी पर राव रतन के पुत्र गोपीनाथ का लड़का छत्रसाल गद्दी पर बैठा। गोपीनाथ राव रतन के जीवन काल में ही मृत्यु प्राप्त हो चुका था। राव छत्रसाल शाहजहां का बड़ा कृपा पात्र था। इसे 'राव' का खिताब दिया गया तीन हजारी जात व दो हजारी मनसब दिया गया। दक्षिण में खानेजहां लोदी के साथ रहकर इन्होंने दौलताबाद (१६३२ ई० में) के किले को विजय करने में बहादुरी का परिचय दिया। इस सेवा के उपलक्ष में इसके मनसब में एक हजार सवार की वृद्धि हुई। सन् १६३३ में इसने परेंदा के किले को फतह किया। १६३५ ई० में शाहजहां-शाहू भोंसले संघर्ष में छत्रसाल बूंदी के हाड़ा राजपूतों को लेकर शाही सेवा में पहुंचे। जब कंधार विजय करने के लिए दारा ने शाही फौज का नेतृत्व स्वीकार किया तो छत्रसाल की सेवाएं मांगी। औरंग

जेब के साथ कजिल देशो के विरुद्ध कन्धार की चढाई के समय यह अग्रणीय था।*

शाहजहाँ की बीमारी काल (१६५६–१६५८) मे उसके चारो पुत्रो मे राजगद्दी के लिए युद्ध हुआ। शत्रुशाल ने दिल्ली के सूबेदार की हैसियत से, यद्यपि उस समय शत्रुशाल दक्षिण मे था, वह दिल्ली लौटा और बादशाह की सेवा मे उपस्थित हुआ। शाहजहा ने इसे औरगजेब और मुराद की सयुक्त सेना को रोकने के लिए दारा के साथ भेजा। विदा करते समय शाहजहाँ ने बारा और मउ के परगने कोटा के राव मुकन्दसिह से छीनकर पुन शत्रुशाल को दिए।† धौलपुर के पास सामूगढ के मैदान मे औरगजेब धर्मत विजय के बाद‡ दारा से आ भिडा। इस युद्ध मे हाडा, राठौड, सीसोदिया और गौड राजपूतो का नेतृत्व शत्रुशाल ने किया। इस युद्ध मे उसका पुत्र भारतसिह व भाई मोहकमसिह अपने दो पुत्रो सहित मारे गए। इस युद्ध मे औरगजेब की विजय हुई। बाद मे उसने शाहजहाँ को आगरे के किले मे कैद करके स्वय बादशाह बन गया। बूदी के सिहासन पर शत्रुशाल का पुत्र भावसिह गद्दी पर बैठा। औरगजेब भावसिह से इसलिए नाराज था कि उसके पिता ने उत्तराधिकारी युद्ध मे उसके विरुद्ध दारा की सहायता की थी। राव भावसिह के चाचा भगवन्तसिह ने औरगजेब का साथ दिया था। बादशाह आलमगीर ने उसे 'राव' का खिताब देकर बूदी के मऊ और बारा का भाग उसे देदिए। परन्तु शीघ्र ही उसका देहान्त हो गया। इस पर बादशाह ने ये परगने जगतसिह कोटा नरेश को दे दिये। भावसिह के विरुद्ध औरगजेब ने शिवपुर के शासक आत्माराम गौड और बरसिह बुन्देले को चढाई करने भेजा। परन्तु खाटोली गाव के पास मुट्ठी भर हाडा राजपूतो ने १५००० शाही सेना को बुरी तरह से हरा दिया।§ औरगजेब ने छल द्वारा भावसिह को अधीन करना चाहा। उसे मिलने के लिए आगरा बुला भेजा। वहाँ इसने औरगजेब की अधीनता नवम्बर १६५८ मे स्वीकार कर तीन हजारी जात व दो हजारी सवार का मन्सब प्राप्त किया। उसी समय

---

* मुआसिरुल उम्रा पृष्ठ १३७

† वशभास्कर जिल्द ३ पृ० ११७

‡ धर्मत के युद्ध मे हाडा शत्रुशाल ने जोधपुर के जसवन्तसिह राठौड का साथ नही दिया क्योकि उस युद्ध का नेतृत्व राठौड सरदार कर रहा था जो कि शत्रुशाल को स्वीकार नहीं था। टाड राजस्थान भाग ३ पृ० १४९१

§ टाड राजस्थान तृतीय भाग पृ० १४९३

बादशाह ने भावसिंह को शाहजादा मुहम्मद सुल्तान के नेतृत्व में बंगाल के सूबेदार शाहजादा शुजा का सामना करने को भेजा। प्रयाग के पास मकामकोड़ा में जो युद्ध बादशाह औरंगजेब तथा शुजा में २४ दिसम्बर १६५८ को हुआ था उसमें राव भावसिंह शाही तोपखाने का अफसर था। इसके बाद दक्षिण के छत्रपति शिवाजी के विरुद्ध लड़ने को भेजा गया। इसने शायस्ताखाँ के साथ चाकण के किले को घेर कर उस पर अधिकार कर लिया। पूना में शायस्ताखाँ की शिवाजी द्वारा हार (१६६४ ई० में) सवाई जयसिंह की पुरन्धर विजय के समय शाही सेना के तोपखाने के अध्यक्ष का काम्य कर सफलता प्राप्त की। ई० सं० १६६५ में दिलेरखाँ मुगल सेनापति को चांदा के शासक पर विजय प्राप्त करने में सहायता दी। औरंगाबाद के फौजदार नियुक्त होकर के कई समय तक दक्षिण में रहे। औरंगाबाद के पास ही इसने एक नगर बसाया जिसका नाम भावपुरा रखा। वहीं इसकी मृत्यु १ अप्रल १६८१ में हुई।*
इसका भाई भीमसिंह का पुत्र किशनसिंह† कट्टर धार्मिक विचारों का था। यही कारण था कि औरंगजेब ने उसे उज्जैन भेज दिया वहां के सूबेदार ने उसे मरवा डाला। जब औरंगजेब ने बून्दी के पास केशोरायपाटन के मन्दिर को तोड़ने का प्रयास किया तो किशनसिंह ने शाही सेना का मुकाबला कर मन्दिर की रक्षा की।

किशनसिंह के पुत्र अनिरुद्धसिंह ने औरंगजेब की अमूल्य सेवा की। १६८२ के बाद मृत्यु पर्यन्त औरंगजेब दक्षिण भारत में ही रहा। वहां मराठों की शक्ति के विरुद्ध तीन साल तक लड़ता रहा। इसी बीच में औरंगजेब ने १६८५ में बीजापुर व १६८६-८७ में गोलकुण्डा पर अधिकार कर लिया था। इन सब युद्धों में अनिरुद्धसिंह था। यह दक्षिण में रहता था। बून्दी से कई समय तक अनुपस्थित रहने के कारण व बल्वन के जागीरदार हाड़ा दुर्जनसिंह की बादशाह से शिकायत करने पर हाड़ा रावत विद्रोही हो गया और उसने बून्दी पर अधिकार कर लिया। इस पर औरंगजेब ने अनिरुद्धसिंह का बून्दी पर पुनः अधिकार स्थापित करने के लिए शाही फौज भेजी जिसने बिना कोई युद्ध किए ही बून्दी पर अधिकार कर लिया। औरंगजेब के अन्त समय तक दक्षिण में रहने के कारण

---

* वंशप्रकाश पृ० ७१८

† किशनसिंह को औरंगाबाद में कैद किया था। इसने जयपुरवाले जगतसिंह के पुत्र अजीतसिंह को मुगल दरबार से निकाल कर सुरक्षित स्थान पहुंचाने में मदद की। जगतसिंह की माता व अजीतसिंह की बहिन थी

त्तरी भारत के सूबेदार विद्रोही होने लगे। ऐसी स्थिति मे राजाराम के तृत्व मे जाटो ने उपद्रव कर दिया। सन् १६८६ में औरगजेब ने शाहजादा वेदारबख्त को इस उपद्रव को दबाने के लिए भेजा। जुलाई सन् १६८८ मे एक घमासान युद्ध हुआ जिसमे राजाराम मारा गया। राव अनिरुद्धसिंह ने भी इस युद्ध में भाग लिया परन्तु युद्ध-क्षेत्र से वह भाग निकले। उसकी पगडी गोरधन-सिह हाडा ने पहन कर उसकी इज्जत की रक्षा की* कुछ समय तक वह बून्दी में ही बना रहा। बाद मे बादशाह ने इसे काबुल की तरफ मुगल साम्राज्य का उत्तरी सीमा का झगडा तय करने को शाहेजादा मुअजम और आमेर के राजा बिशनसिंह के साथ भेज दिया जहां सन् १६६५ मे इसका देहान्त हो गया।†

मुगल पतन युग में बून्दी के शासको का मुग़ल सम्बन्ध

औरगजेब की मृत्यु मार्च १७०७ मे अहमदनगर मे हुई। उसके वसीयत-नामे के अनुसार वह अपने चारो पुत्रो मे साम्राज्य का विभाजन करना चाहता था। ज्येष्ठ पुत्र मुअज्जम को दिल्ली का तख्त सौपना चाहता था परन्तु दक्षिण मे उसके साथ उसका दूसरा पुत्र आजम स्वय बादशाह बनना चाहता था। इस प्रकार औरगजेब की मृत्यु के बाद उत्तराधिकारी युद्ध निश्चित था। राजपूताने के राज्यो के शासको ने अपने स्वार्थानुसार दोनो दलो मे से एक का पक्ष लिया। बून्दी के राव बुद्धसिंह ने शाहजादा मुअज्जम का पक्ष लेकर शाहजादा आजम को जाजव के युद्ध मे (१७०७ जून) परास्त किया। इस युद्ध मे कोटा के हाडा शासक रामसिंह शाहजादा आजम के पक्ष मे था। रामसिंह ने बुद्धसिंह को अपनी

* डा० शर्मा कोटा राज्य का इतिहास प्रथम भाग पृ० २०८
† टाड राजस्थान जिल्द ३ पृ० १४६४

और मिला कर आजम का पक्ष लेने के लिए लिखा परन्तु बुद्धसिंह कर्तव्य पथ पर दृढ़ रहा। मुअज्जम विजयी होकर बहादुरशाह के नाम से बादशाह बना। बुद्धसिंह को उसने 'रावराजा' की पदवी तथा पंचहजारी मनसब दिया।* इसके अलावा उसे कोटा पर अधिकार स्थापित रखने की अनुमति भी देदी। बुद्धसिंह ने अपने दीवान गंगाराम धाभाई को कोटे पर चढ़ाई करने की आज्ञा दी। गंगाराम के नेतृत्व में बून्दी की एक सेना ने कोटे पर चढ़ाई की लेकिन वह असफल रही।†

बुद्धसिंह स्वयं जयपुर व बेगू आदि में रहता हुआ बहादुरशाह का फरमान प्राप्त करते ही दक्षिण की ओर चल पड़ा जहां बहादुरशाह अपने भाई कामबख्श के विद्रोह को दबाने गया था। बहादुरशाह १७१२ ई में मर गया। उसके बाद जहांदारशाह तख्त पर बैठा। इसी काल में दिल्ली की राजनीति में सैयद भाइयों अब्दुल्ला व हुसेनअली का प्रभाव बढ़ने लगा। उन्होंने फर्रुखसियर को दिल्ली के तख्त पर बठा दिया। इस राजनैतिक उथल-पुथल में कोटा के राव भीमसिंह ने सैयद भाइयों का साथ दिया। बुद्धसिंह तटस्थ रहे। बादशाह बनने के बाद फर्रुखसियर ने राजपूत शासकों को दिल्ली बुला कर अपनी अधीनता करवाई। परन्तु बुद्धसिंह दिल्ली नहीं पहुंचा। ऐसे अवसर का लाभ उठा कर कोटा के राव भीमसिंह ने बादशाह को बुद्धसिंह के विरुद्ध भड़काया और बून्दी प्राप्त करने का फरमान ले लिया‡ इस फरमान के आधार पर भीमसिंह ने बून्दी पर आक्रमण कर उस पर सन् १७१३ में अधिकार कर लिया। और राव रतन का केसरिया झण्डा और नक्कार कोटा ले आए।§

शीघ्र ही फर्रुखसियर व सैय्यद बन्धुओं में अनबन होने लगी। फर्रुखसियर ने सैयदों के प्रभाव से मुक्त होने के लिए दक्षिण के सूबेदार निजामुलमुल्क को राजधानी में बुला भेजा और हुसेनअलीखां को उसके स्थान पर दक्षिण का सूबेदार नियुक्त किया। इस प्रकार दोनों भाइयों को पृथक कर वह सम्पूर्ण शक्ति अपने पास रखना चाहता था। ऐसी स्थिति में सवाई जयसिंह ने बुद्धसिंह को पुनः बून्दी दिलाने का प्रयास किया और सैय्यद भाइयों के विरोध में शक्ति एकत्रित करने व राजपूत शासकों का सहयोग पाने के लिए फर्रुखसियर ने पुनः

* वीर विनोद भाग १ पृष्ठ ८२८
† उपरोक्त भाग ४ पृ २१११
‡ वंशभास्कर चतुर्थ भाग पृष्ठ ३२ ३२
§ टाड राजस्थान दूसरा भाग पृ [illegible]

बून्दी का फरमान बुद्धसिंह को दे दिया। भीमसिंह को मऊ और बारा के परगने के अलावा बून्दी बुद्धसिंह को लौटानी पड़ी*। १७१६ ई० में मराठों की सहायता से हुसैनअली ने दिल्ली के तख्त से फर्रुखसियर को गद्दी से हटा दिया। कहीं बुद्धसिंह व जयसिंह फर्रुखसियर का पक्ष न लेले इसलिए जयसिंह को जयपुर जाने की आज्ञा मिल गई और भीमसिंह ने बुद्धसिंह की हत्या करने हेतु उस पर दिल्ली के मकान पर आक्रमण किया परन्तु बुधसिंह बच कर जयसिंह के पास चला गया।† उसके बाद बून्दी पर भीमसिंह ने पुन आक्रमण किया और १७१६ में बून्दी पर अपना राज्य स्थापित किया।

फर्रुखसियर की मृत्यु के बाद दिल्ली तख्त पर कई शाहजादों को बैठाया गया परन्तु सब निकम्मे थे। अन्त में सैय्यद बन्धु मोहम्मदशाह को गद्दी पर बैठा कर स्वयं शासन करने लगे। अलाहाबाद का सूबेदार छबेलाराम ने जो सैयदों का विरोधी था विद्रोह कर दिया। बुधसिंह ने इस विद्रोह मे भाग लिया। करीब १० हजार हाडा सैनिकों के साथ बुधसिंह ने छबेलाराम का साथ दिया। इस पर सैयदों ने बुधसिंह के खिलाफ १७ नवम्बर सन् १७१६ को शाही सेना भेजी। जनवरी १७२० के आसपास बुधसिंह से लडाई हुई। जिसमे बुधसिंह का काका मारा गया और उसमे लगभग ६००० राजपूत काम आए।‡ परन्तु ठीक इसी समय निजाम दक्षिण से बडी फौज लेकर दिल्ली पर आक्रमण करने आ रहा था अत बून्दी सैयदों का फरमान भीमसिंह, गजसिंह तथा दिलावरखा को प्राप्त हुआ कि वे निजाम को रोकने के लिए शीघ्र प्रस्थान करें। निजाम के खिलाफ लडाई मे भीमसिंह काम आया (१७२०) और सैयद बन्धुओं का दिल्ली की राजनीति मे प्रभाव समाप्त हो गया। बून्दी मे कोटा की ओर से भगवानदास धा-भाई शासन कर रहा था पर भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसने बून्दी का राज बुधसिंह को दे दिया। यह मुगलों का अन्तिम प्रभाव था जिसके बाद बून्दी पर जयसिंह का प्रभाव स्थापित हुआ और उसके मुक्त करने के लिए बुधसिंह के पुत्र उम्मेदसिंह ने मराठों की शरण ली।

---

* वंशभास्कर चतुर्थभाग पृष्ठ ३०६५-६७, इरविन लेटर मुगल्स जिल्द १, पृष्ठ ३७६।
† उपरोक्त जिल्द २ पृष्ठ १०–११।
‡ खफीखा जिल्द २ पृ[illegible]

बून्दी राज्य का मरहठों से सम्बन्ध

शिवाजी के महाराष्ट्र के निर्माण के बाद भारत में हिन्दू राज्य की स्थापना की भावना ने हिन्दुओं को बहुत प्रेरित किया परन्तु उनकी मृत्यु के बाद ई० सन् १६८० से लेकर १७१९ ई० तक यह भावना अखिल भारतीय-स्तर पर कार्यान्वित नहीं हो सकी। १७२० ई० में बाजीराव पेशवा ने इस नीति को पुनः प्रचारित किया और उत्तरी भारत में मराठों का प्रभाव बढ़ने लगा। मुगल साम्राज्य उस समय अपनी अधोगति की ओर जा रहा था। राजपूत शासकों पर जब मुगलों की निरंकुशता समाप्त हुई तो वे आपस में लड़ने लगे तथा अपने झगड़ों के निर्णायक के रूप में बढ़ती हुई मराठों की शक्ति का स्वागत करने लगे। मराठों को जहां ऐसी स्थिति में एक सुदृढ़ साम्राज्य स्थापित करना चाहिए था वहां वे राजपूतों के गृहकलह को दुधारी गाय समझ कर प्रोत्साहन देते रहे। राजपूताने में मरहठों का प्रवेश इसी उद्देश्य से कि राजपूत शासकों का धन पूना की ओर तथा उनके सामन्तों के खजानों में जाता रहे हुआ। बून्दी के प्रारम्भिक गृह-कलह सन् १७२९ के बाद से मराठों का प्रभाव बून्दी पर स्थापित होने लगा और सन् १८१७ तक जब तक कि उन्होंने अंग्रेजी राज्य से सन्धि कर उनकी सुरक्षा नहीं प्राप्त करली बना रहा।

बून्दी का राव भीमसिंह औरंगजेब के शाही तोपखाने के अध्यक्ष के रूप में शिवाजी के खिलाफ लड़ाई में गया था। बाद पुरन्दर विजय में वह मरहठा विरोधी तटस्थ न था। उसका पुत्र अनिरुद्धसिंह भी मराठों के खिलाफ औरंगजेब के साथ दक्षिण भारत में रह कर मुगल शक्ति के पतन को रोकता रहा। परन्तु मराठी शक्ति उन दिनों में निरुत्साह में थी और अपने जीवित रहने के लिये बराबर संघर्ष करती रही। राजपूत शक्तियां का इस प्रकार मुगलों को सहयोग देकर

उन्हे समाप्त करना उस समय तक प्रत्यक्ष सघर्प नही था। तव तक मुगल सम्राट अत्यन्त ताकतवर थे और वे राजपूतो को अपने आधीन रखने की क्षमता रखते थे।

बून्दी के शासको ने मुगल राजनीति मे कभी भी इतना महत्व प्राप्त नही किया कि वे मुगलो के शासन को प्रभावित कर सके या मुगल सूवो के कर्त्ता-धर्ता वन जाय। वे सिर्फ युध्द-क्षेत्र मे जाने वाली सेनाओ का साथ देने तक ही सीमित रहे। मराठो की उनसे टक्कर लडाई के मैदान मे होती रही लेकिन राज-नीति क्षेत्र मे नही। राव वुधसिंह (१६९६–१७३९) का बून्दी मे राज्यकाल उथल-पुथल का समय था। १७१३ ई० मे बून्दी कोटा के अधीन चला गया। १७१५ ई० में पुन बून्दी वुधसिंह के अधिकार मे आ गया परन्तु १७१९ ई० मे फरुखसियर की मृत्यु के वाद कोटा के राव भीमसिंह ने बून्दी पर चढाई कर उसे अपने अधिकार मे कर लिया। वहा का शासन चलाने के लिए भगवानदास का भाई नियुक्त कर लिया गया जिसने भीमसिंह की मृत्यु के वाद १७२० मे बून्दी राज्य वुद्धसिंह को दे दिया।*

ऐसे समय मे आमेर का राजा जयसिंह बून्दी पर अधिकार करना चाहता था। मुगल साम्राज्य की शक्तिहीनता का लाभ उठा कर जयसिंह ने वृहत् जयपुर निर्माण करने की योजना बनाई। कोटा व बून्दी जो आपसी जातीय कलह में सलग्न थे, उनकी स्थिति का लाभ उठा कर वह इन दोनो राज्यो पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहता था। वुद्धसिंह का पुन बून्दी पर अधिकार हो जाने पर वह सवाई जयसिंह की सलाह से राज्य करने लगा। सवाई जयसिंह ने नागराज धाभाई को बून्दी का मन्त्री वनाया। वह जयसिंह के कहने के अनुसार राज्य करता था। शीघ्र ही जयसिंह और बुद्धसिंह मे अनबन हो गई। इस अनवन का कारण टाड के अनुसार वुद्धसिंह का कच्छवाही रानी जो कि जयसिंह की वहिन थी, के प्रति दुश्चरित्रता का कलक लगाना था।† इस अपमान का बदला लेने के लिए जयसिंह ने बुद्धसिंह को गद्दी से उतारने का निश्चय किया। पहले तो इन्द्रगढ के ठाकुर को गद्दी सौंपी गई। वह उसके लिए तैयार नही हुआ। फिर यह पद तारागढ के किलेदार व करवाड के ठाकुर सालमसिंह को सौंपा गया। जयसिंह की सहायता से पाचोलास गाव के पास बुद्धसिंह को सालमसिंह ने हरा कर बून्दी पर अधिकार कर लिया और अपने पुत्र दलेलसिंह को बून्दी

---

* सैय्यद वन्धुओ का प्रभाव उस समय तक समाप्त हो चुका था।

† टाड राजस्थान जिल्द ३, पृष्ठ १४९७-९-यही पुस्तक, बून्दी का इतिहास पृष्ठ ८०–८१।

का शासक घोषित किया। जयसिंह ने इस शासन को कानूनी स्वीकृति देने के लिए बादशाह मोहम्मदशाह से शाही फरमान ले लिया और उसे शक्ति प्रदान करने के लिए जयसिंह ने अपनी लड़की की शादी दलेलसिंह से करदी।*

बून्दी के इस गृह-कलह ने मराठों का बून्दी की ओर प्रयाण प्रारम्भ किया। कोटा का राव दुर्जनशाल जयसिंह के आमन्त्रण पर बून्दी के नए राजा के अभिषेक पर बून्दी गया और दलेलसिंह को विवशता की स्थिति में राजा स्वीकार कर लिया और दलेलसिंह को सरोपाव और घोड़े सत्कार रूप में दिए।† बुधसिंह भाग कर बेंगू पहुँचा। वहां से महाराणा उदयपुर से सहायता की प्रार्थना की। महाराणा उदयपुर कोटा राव दुर्जनशाल से मिल कर सहायता देना चाहता था। पर बुधसिंह ने इस योजना के प्रति कोई सक्रिय योग नहीं बताया।

दूसरी ओर बून्दी की राजनीति में पलटा आया। सालमसिंह के दो पुत्र दलेलसिंह और प्रतापसिंह थे। दलेलसिंह बून्दी के सिंहासन पर बैठ गया। वह अपने बड़े भाई प्रतापसिंह से ठीक व्यवहार नहीं रखता था। कभी कभी उसका अपमान भी कर देता था। इस पर प्रतापसिंह ने बदला लेने की भावना से प्रेरित होकर दक्षिण के मराठों की सहायता लेने का निश्चय किया।‡ प्रतापसिंह कोटा से रवाना होकर दक्षिण गया और बाजीराव पेशवा से मुलाकात कर यह सन्धि करली कि बून्दी की गद्दी पर बुधसिंह बैठा दिया जाय तो वह ६ लाख रुपये मराठों को देगा।

पेशवा ने यह काम मल्हारराव होल्कर व राणोजी सिन्धिया को सौंपा। २२ अप्रेल १७३४ ई० को बून्दी पर मराठों का पहला आक्रमण हुआ। सालमसिंह व दलेलसिंह बून्दी से भाग गए। पुन बुधसिंह को बून्दी का शासक घोषित कर दिया गया।§ कछवाही रानी ने होल्कर का अपना राखी-बन्द भाई बनाया। जब बेंगू में बुधसिंह को यह सूचना मिली तो वह होल्कर से मिलने नहीं आया।¶ बून्दी में मुख्य सलाहकार प्रतापसिंह बनाया गया। परन्तु मराठी सेना के जाते ही जयसिंह ने २ ० सेना लेकर मराठों पर चढ़ाई की। प्रतापसिंह व

---

* टाड जिल्द १ पृ १४९७-९९

† वंशभास्कर चतुर्थ भाग पृ ३११२-९१

‡ वंशभास्कर चतुर्थ भाग पृ ३२१५

§ वंशभास्कर चतुर्थभाग पृ ३२१६-१८।

¶ वंशभास्कर चतुर्थभाग पृ ३२२ सरकार फाल ऑफ दी मुगल एम्पायर जिल्द १ पृ २५१-२५२।

कछवाही रानी ने विना युध्द किए बून्दी छोड दिया ।* बून्दी पर पुन. दलेलसिंह बैठाया गया । जयसिंह ने सालमसिंह को जिसे मराठो ने गिरफ्तार कर लिया था, २ लाख रुपये देकर छूडाया ।†

सन् १७३९ ई० मे बुद्धसिंह का देहान्त बेगू मे हो गया । उसका बडा लडका उम्मेदसिंह उस समय १७ वर्ष का था । उम्मेदसिंह अत्यन्त महत्वाकाक्षी था । बेगू के ठाकुर ने महाराणा के दवाव मे आकर जिसे जयसिंह ने दवाया था, उम्मेदसिंह और उसके भाई दीपसिंह को बेगू से निकाल दिया था । ये कोटा चले गए और महाराव दुर्जनशाल से सहायता की आशा की । सन् १७४१ ई० मे महाराव दुर्जनशाल नाथद्वारा एक धर्म महोत्सव मे आया और महाराणा उदयपुर से मुलाकात कर उम्मेदसिंह को पुन बून्दी दिलाने की सन्धि की । यह तय हुआ कि माधोसिंह को जयपुर की गद्दी पर विठाया जाए और उम्मेदसिंह को बून्दी की, परन्तु जयसिंह के जीवित रहते यह कार्य करना दुर्जनशाल को सम्भव प्रतीत नही हुआ ।‡

सन् १७४३ ई० मे जयसिंह की मृत्यु हो गई । शाही फरमान के अनुसार जयपुर की गद्दी पर ईश्वरसिंह बैठा । परन्तु सवाई जयसिंह की महाराणा उदयपुर की वैवाहिक सन्धि के अनुसार उसकी सीसोदिया राणी का पुत्र माधोसिंह गद्दी पर बैठना चाहिए था । § अतः महाराणा उदयपुर ईश्वरसिंह के विरुद्ध सयुक्त मोर्चा स्थापित करने लगे । महाराव कोटा उम्मेदसिंह के लिए बून्दी चाहते थे जो ईश्वरसिंह नही देना चाहता था । अत महाराणा के उस मोर्चे मे उम्मेदसिंह, और दुर्जनशाल भी शामिल हो गए । दुर्जनशाल ने जोधपुर शासक महाराजा अभयसिंह व गुजरात के सूबेदार नवाब फर्रुखुद्दौला से सहायता मागी । शाहपुरा के शासक उम्मेदसिंह भी इसमे आ सम्मिलित हुए । अभयसिंह ने सहायता नही भेजी ।

इस सेना ने १७४४ में बून्दी पर आक्रमण किया । ईश्वरसिंह ने दलेलसिंह की सहायता के लिए फौज भेजी लेकिन दलेलसिंह बून्दी से निकाल दिया गया और राव दुर्जन ने बून्दी पर अपना अधिकार कर लिया ।¶ उम्मेदसिंह को यह बुरा लगा । उसने अभयसिंह से सहायता मागी । इसी बीच मे ईश्वरसिंह ने

---

* वशभास्कर चतुर्थभाग पृ० ३२२१ ।

† वश प्रकाश पृ० ८९ ।

‡ वशभास्कर चतुर्थभाग पृ० ३३२० ।

§ वीर विनोद भाग २ पृ० ९७३–७७ ।

¶ वशभास्कर पृ० ३३७१ ।

बून्दी पर पुन: अधिकार स्थापित करने के लिए मराठा से सहायता मांगी। उसने राजभक्त सभी को मराठों से सैनिक सहायता प्राप्त करने के लिए भेजा। उसने फौज खर्च के एक करोड़ रुपया के बदले में राणोजी सिन्धिया तथा रामचन्द्र पंडित को अपनी ओर मिला लिया।* पर वे ठीक समय पर न आ सके। उधर महाराणा उदयपुर ने माधोसिंह का पक्ष लेकर ईश्वरसिंह से युद्ध करने के लिए राव दुर्जन से सहायता मांगी। पर राव दुर्जन ने जयपुर के विरुद्ध सक्रिय भाग नहीं लिया। सन् १७४७ में ईश्वरसिंह ने पेशवा बालाजी बाजीराव के दबाव में आकर उम्मेदसिंह को बून्दी का शासक स्वीकार कर लिया।† परन्तु पेशवा के दक्षिण में जाते ही उन्होंने राणोजी सिन्धिया के पुत्र जियाजी सिन्धिया से बातचीत कर बून्दी पर आक्रमण करने के लिए मराठों से सहायता मांगी। बून्दी में दलेलसिंह राजगद्दी पर बैठा। इसके बाद कोट पर होल्कर व दलेलसिंह सहित ईश्वरसिंह ने आक्रमण किया।

उम्मेदसिंह पुन घुमक्कड़ जीवन व्यतीत करने लगा। परन्तु वह निराश नहीं हुआ। जोधपुर नरेश अभयसिंह से थोड़ी सेना लेकर नीमखेड़ी के स्थान पर दलेलसिंह को हराया। दलेलसिंह भाग कर जयपुर पहुंचा और पुन: बून्दी न जाने की इच्छा प्रकट की। पर ईश्वरसिंह बून्दी छोड़ना नहीं चाहता था। अमरपुरा में उम्मेदसिंह ईश्वरसिंह से हार कर घुमक्कड़ी हो गया। इस बार महाराव दुर्जनसाल ने मल्हारराव होल्कर को उम्मेदसिंह की सहायता के लिए लिखा। ७ अगस्त १७४८ ई० में बगरू के स्थान पर होल्कर, कोटा व उदयपुर की सेना ने ईश्वरसिंह को बुरी तरह हरा कर उम्मेदसिंह को बून्दी का शासक बना दिया।‡ होल्कर की सहायता प्राप्त करने के लिए कछवाही रानी ने पुन: अपने राखीबन्द भाई को राखी भेजी थी। इस प्रकार मराठों की सहायता से १४ वर्ष तक घुमक्कड़ जीवन व्यतीत कर २१ अक्टूबर १७४८ में उम्मेदसिंह बून्दी की गद्दी पर बैठा। इन्हीं दिनों ईश्वरसिंह ने निरन्तर परेशान होकर आत्म हत्या करली।

मल्हारराव की इस सेवा के बदले में उम्मेदसिंह ने पाटण का परगना उसे दे दिया। पेशवा ने पाटण को तीन भागों में बांट कर पेशवा होल्कर व सिन्धिया को दे दिया। चूंकि पेशवा का भाग नाम मात्र का था अत: होल्कर

---

* वंशभास्कर पृ० ३३७४
† वीर विनोद भाग ३ पृ० १९३७।
‡ वंशभास्कर चतुर्थ भाग ३३६०—१ टाड राजस्थान भाग ३ पृ० १२४–५।

ही उसका लाभ उठाया करता था।* इसके अलावा मल्हारराव को १० लाख रुपये दिए। इसमे से २ लाख उसी समय दिए गए। इसके बाद १८ जून १७५१ को ३ लाख रुपये मल्हारराव व जयअप्पा को तथा ५ लाख रुपया सतारा के खजाने मे जमा कराना तय हुआ। मल्हारराव व जयअप्पा को बून्दी नेनवा आदि स्थानो की चौथ वसूल करने तथा सतारा राज्य मे ७५,०००) सालाना रुपये देने का १७५१ की जून को तय हुआ।

उम्मेदसिंह ने महाराव दुर्जनशाल की सहायता से भी खोया हुआ राज्य प्राप्त किया था। अत कोटा के शासक उम्मेदसिंह से हर परिस्थिति मे सहायता की आशा करते थे। जब १७६१ ई० मे माधोसिंह ने कोटा पर आक्रमण किया तो महाराव शत्रुशाल ने उम्मेदसिंह से सहायता मागी। उम्मेदसिंह सेना सहित भटवाडे के मैदान मे आ डटा पर युद्ध मे तटस्थ रहा। विजय शत्रुशाल की हुई। परन्तु वह उम्मेदसिंह से अत्यन्त नाराज हो गया और उसे दण्ड देने का निश्चय किया। ऐसे ही समय मे मराठो के विरुद्ध उम्मेदसिंह ने महाराजा अभयसिंह जोधपुर नरेश को सहायता दी। यद्यपि अभयसिंह ने मराठो से ८०,००० रुपये देकर सन्धि करली परन्तु उम्मेदसिंह के इस व्यवहार मे मराठे अप्रसन्न हो गए। ऐसा अवसर देखकर शत्रुशाल ने मराठो की सहायता प्राप्त कर उम्मेदसिंह को दण्ड देने की सोची। सन् १८६२ मे महादजी सिन्धिया से सहायता प्राप्त की गई और कोटा सिन्धिया की सयुक्त सेना ने बून्दी को घेर लिया। हारकर उम्मेदसिंह ने सिन्धिया से सन्धि करली।† सिन्धिया को बून्दी की चौथ का अधिकार दिया गया। सिन्धिया ने महाराव शत्रुशाल को १७,१२०) रुपये चालीस दिन साथ रहने का सैनिक खर्च दिया।‡

इसके बाद जसवन्तराव होलकर तथा महादजी सिन्धिया समय-समय पर बून्दी से चौथ वसूल करते रहे। बून्दी के शासक मरहठो की निरकुश धन लेने की प्रणाली का विरोध न कर सके।§ जब भारत मे अग्रेजी सरकार की स्थापना हो गई और लार्ड वेलेजली की सहायक प्रथा ने मराठो को छोड सब

---

* टाड : राजस्थान तीसरा भाग, पृष्ठ १५०५ फुटनोट

† वशभास्कर चतुर्थ भाग, पृ० ३७१०

‡ डा० शर्मा कोटा राज्य का इतिहास, द्वितीय भाग, पृष्ठ ४५१, फुटनोट २

§ नाना फडनवीस के मन्त्री काल में पाटण का परगना जो पेशवा को उम्मेदसिंह ने जयसिंह के विरुद्ध सहायता देने पर दिया था, होल्कर व सिन्धिया में विभाजित कर दिया गया। एक तिहाई भाग होल्कर को तथा दो तिहाई भाग सिन्धिया को प्राप्त हुआ। एचिसन ट्रीटीज, जिल्द ३ पृ० २१७

प्रकार की शक्तियों को अपनी ओर कर लिया उन्ही दिनों में बून्दी के राव उम्मेदसिंह की मृत्यु हो गई।

महाराव विष्णुसिंह मराठों से तंग आ चुका था। इसी समय सिन्धिया ने अंग्रेजों से हारकर सुर्जी अंजनगांव के स्थान पर १८०३ ई० में सन्धि करली। होल्कर पर विजय प्राप्त करने के लिए दिल्ली से कर्नल मानसन भेजा गया जो केप्टन लूकन की सहायता से कोटा की ओर चला ताकि वहां से पश्चिम की ओर से वह होल्कर पर हमला कर सके। कोटा के जालिमसिंह ने मानसन को सहायता पहुंचाई। बून्दी के राव विष्णुसिंह ने उस समय तो मानसन को कोई सहायता नहीं पहुंचाई जब कि वह सफलता प्राप्त कर रहा था। परन्तु जब मुकन्दरा की घाटी में जसवन्तराव होल्कर ने मानसन को बुरी तरह हराया और वह रक्षार्थ मारा-मारा फिर रहा था तब बून्दी के राव ने उसे शरण दी और दिल्ली की ओर उसे जाने दिया।* वंश प्रकाश में इस बात का उल्लेख है कि होल्कर के विरुद्ध मानसन की सहायता के लिए वकील सादुल्लाखां और टोकरा वास के मगनसिंह, छगनसिंह तलोदा के तिलोकसिंह सांवत के हरिसिंह और गौड़ धीरसिंह आदि के साथ बून्दी की फौज को भेजा जो सिन्धिया और होल्कर की फौज का रास्ता रोकते रहे।† मुकन्दरा की हार के बाद मानसन तो दिल्ली चला गया। बून्दी की ख्यात तथा टाड ने इस बात का उल्लेख किया है कि बून्दी नरेश को दंड देने के लिए होल्कर और सिन्धिया ने बून्दी पर आक्रमण कर उसे अपने आधीन कर लिया। महाराव नाम के राजा रहे।

बून्दी के राव ने १८१७ ई में अंग्रेजी सरकार को पिंडारियों के विरुद्ध पूर्ण सहायता दी। १८१८ ई० में बून्दी सरकार ने अंग्रेजों से मातहती की सन्धि कर ली। जो खिराज बून्दी नरेश होल्कर को देते थे वह माफ कर दिया गया और होल्कर से उनके परगने बून्दी को दिलाये गये। सिन्धिया के खिराज का हिस्सा ८० ० रुपया सालाना अंग्रेजी सरकार को देना तय किया गया जिसके एवज में परगना पाटन जो सिन्धिया व होल्कर के कब्जे में था बून्दी को दिलाया गया। बाद में पाटण का हिस्सा सिन्धिया ने अंग्रेजों को दे दिया और सन् १८५७ ई में कुल पाटण अंग्रेजों की ओर से बून्दी को इस शर्त पर मिला कि वे उसकी एवज में ८ •) रुपया सिन्धिया को देते रहेंगे। १८६० ई० में यह पाटण का खिराज ८) का तथा १८१८ की सन्धि के

---

* टाड राजस्थान भाग ३ पृष्ठ १५१६ १७

† वंश प्रकाश पृष्ठ ११२

अनुसार ४०,००० रुपया अंग्रेजी सरकार के खजाने मे जाने लगा।*

बून्दी राज्य का अंग्रेजों से सम्बन्ध

हाडा चौहानो की भूमि बून्दी और उसके शासक जो सदियो तक मुगल सल्तनत के सहायक बने रहे, वे बिना युद्ध किए अंग्रेजो के अधीन हो जाए, इस पृष्ठभूमि मे मराठो का प्रभाव इस युग की दर्दनाक कथा है। अंग्रेजो और बून्दी के राव का प्रथम सम्बन्ध ई सन् १८०४ मे होल्कर के विरुद्ध मानसन के मुकन्दरा युद्ध मे हुआ था जबकि लौटती हुई थकी व हारी हुई सेना को बून्दी महाराव ने सहायता दी। इसके बदले मे उन्हें सिन्धिया व होल्कर का कोप भाजन बनना पडा।† ई सन् १८१७ के पिण्डारी युद्ध मे भी बून्दी के राव ने अंग्रेजो को सहायता दी। इस प्रकार बून्दी के राव के मराठी विरोधी दृष्टिकोण व नीति से अंग्रेजो को उत्तरी भारत मे मराठो व पिण्डारियो को नष्ट करने मे सहायता प्राप्त हुई। बून्दी के महाराव मराठा पतन के समय स्वतन्त्र इकाई के रूप मे रखने की शक्ति नही रखते थे और न अंग्रेजी साम्राज्यवादी नीति भारतीय शासको को इस रूप मे रखना चाहती थी। अत. अंग्रेजी सरकार ने बून्दी महाराव को अंग्रेजो से सन्धि करने को बाध्य कर दिया। यह सन्धि महाराव विष्णुसिंह से १० फरवरी सन् १८१८ ई० में हुई। इस सन्धि की निम्नलिखित शर्तें थी—

(१) महाराव बून्दी व उसके उत्तराधिकारियो और अंग्रेजी सरकार के बीच मित्रता और सहयोग बना रहेगा।

---

* टाड राजस्थान भाग

† टाड उपरोक्त पृ १५

(२) अंग्रेजी सरकार बून्दी महाराव को अपनी सुरक्षा के अन्तर्गत रखेगी।

(३) बून्दी का महाराव अंग्रेजों की सार्वभौमिकता को स्वीकार कर उनसे हर रूप में सहयोग करेगा। बून्दी का शासक अंग्रेजी सरकार की सहमति के बिना किसी अन्य राज्य पर हमला नहीं करेगा। यदि ऐसा हुआ तो अंग्रेजी सरकार के निर्णय को स्वीकार करेगा। राजा अपने राज्य में स्वतन्त्र रहेगा और अंग्रेजी सत्ता का उसमें प्रवेश नहीं होगा।

(४) अंग्रेजी सरकार बून्दी के राजा का वह खिराज जो होल्कर महाराजा को दिया जाता था और जो होल्कर से अंग्रेजी विजय पर उन्हें दे दिया था मुक्त करेगी। अंग्रेजी सरकार बून्दी का वह भाग जोकि होल्कर के आधीन था वह बून्दी को लौटा देगी।

(५) बून्दी महाराव अंग्रेजों को वही खिराज देगा जोकि वह सिन्धिया को दिया करता था। यह खिराज इस प्रकार था—

पूर्ण खिराज	८) (दिल्ली सिक्का)
पाटण परगना का दो-तीहाई हिस्सा	४)
परगना मारेला समन्धी कुरवार भामा	
बूरम्हून का एक तिहाई का खिराज	
बून्दी की चौथ	४ ०)
	८० ०)

(६) अपनी शक्ति के अनुसार बून्दी के महाराव अंग्रेजी सरकार को आवश्यकता पड़ने पर सहायता देते रहेंगे।

इस सन्धि के बाद अंग्रेजी सरकार को यह ज्ञात हुआ कि पाटण का परगना होल्कर और सिन्धिया ने बून्दी से जबरदस्ती नहीं छीना था बल्कि महाराव उम्मेदसिंह ने पेशवा को जयपुर के विरुद्ध सहायता देने पर दिया था और नाना फड़नवीस के मन्त्रित्व काल में इस परगने का एक तिहाई भाग होल्कर और दो तिहाई भाग सिन्धिया में विभाजित कर दिया गया था। इस क्षेत्र से बून्दी होल्कर और सिन्धिया को कोई खिराज नहीं देता था। होल्कर के अंग्रेजों की मन्दसौर सन्धि तथा ग्वालियर के साथ सन्धि में केशोराय पाटण के खिराज का

उल्लेख नही था सिर्फ बून्दी के खिराज का ही उल्लेख था। अत जब बून्दी का पाटण का भाग अग्रेजो को सन्धि के द्वारा प्राप्त हुआ तो यह होल्कर व सिन्धिया की सन्धियो के अनुसार अवैध हो जाता था। अत पाटण से ४०,००० खिराज अग्रेजी सरकार ने नही लिया परतु बून्दी को होल्कर का जो एक तिहाई भाग दिया गया था, वह पुन होल्कर को लौटाया गया और अग्रेजी सरकार ने होल्कर को इसके मुआवजे के प्रतिफल स्वरूप ३०,०००) रुपया वार्षिक देना तय किया।*

महाराव विष्णुसिह की मृत्यु १८२१ ई० मे हो गई। उसका पुत्र रामसिह गद्दी पर बैठा परन्तु वह १० वर्ष का ही होने के कारण राज्य का शासन भार चार सरदारो की एक परिपद् को सौंपा गया जो अग्रेजी रेजीडेन्ट के तत्वावधान में कार्य करने लगी। सन् १८३१ मे राव रामसिह ने अजमेर मे राजपूताने के राजाओ के सम्मेलन मे उपस्थित होकर लार्ड विलियम बैंटिङ्क को जोकि उस समय अग्रेजी भारत का गवर्नर जनरल था और अजमेर आया हुआ था, अपनी राज्य भक्ति प्रदर्शित की। १८४४ मे सिंधिया ने अग्रेजी सरकार को केशोराय पाटण के परगने का खिराज देना स्वीकार किया। बून्दी के महाराव ने इस क्षेत्र को तब उनसे मागा परतु सिंधिया अपनी सार्वभौमिकता इस क्षेत्र से हटाना नही चाहता था। बाद मे २९ नवम्बर, १८४७ई० को बून्दी, सिंधिया और अग्रेजो के बीच एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार केशोराय पाटण का परगना बून्दी को दे दिया गया। इसके बदले मे बून्दी द्वारा ८०,०००) रुपया अग्रेजो को खिराज के रूप मे देना निश्चित हुआ। इसके अलावा ३४३०।≡)।।। इस परगने के कर्मचारियो की पेन्शन भी देने का इकरार महाराव बून्दी ने किया। पाटण परगने के सम्बन्ध मे सिंधिया ने जिस प्रकार की सार्वभौमिकता अग्रेजो की स्वीकार की, उसी प्रकार की सार्वभौमिकता बून्दी के शासक ने भी स्वीकार की।

महाराव रामसिह के काल मे अग्रेजो के विरुद्ध १८५७ ई० की क्राति हुई। इस क्राति का प्रभाव राजपूताने मे भी पडा। नसीराबाद की छावनी तथा नीमच मे विद्रोह हुए। जोधपुर के आउवा ठाकुर ने क्राति मे भाग लिया। कोटा 'कन्टीन्जेन्ट' ने कोटा मे अग्रेजो की सत्ता को उखाड फेंका। बून्दी के महाराव का कोटा के शासक रामसिह से अनबन हो गई थी। अत बून्दी के महाराव की सहानुभूति क्रातिकारियो के साथ रही। इस पर अग्रेजी सरकार ने

---

* एचीसन ट्रीटीज तृतीय भाग, पृष्ठ २१७–२१८

महाराव रामसिंह से पत्रव्यवहार तीन साल तक बन्द रक्खा ।* वंश प्रकाश में इस बात का उल्लेख है कि नीमच के विद्रोही तत्वों का शास्त करने मेजर बर्टन जब गए तो बून्दी की सेना ने उन्हें सहायता दी और जब विद्रोहियों ने बून्दी पर धावा किया तो बून्दी की सेना ने उन्हें परास्त किया ।†

१८५७ की क्रांति के बाद १८५८ में महारानी विक्टोरिया ने जो घोषणा की उसमें ईस्ट इण्डिया कम्पनी का अन्त हो गया तथा भारतीय नरेशों को गोद लेने की भी अनुमति प्राप्त हो गई ।‡ १८६२ ई० में बून्दी के शासकों व उनके उत्तराधिकारियों को गोद लेने का अंग्रेजी आज्ञापत्र प्राप्त हुआ । १८११ की संधि से दोनों शक्तियों ने बून्दी के शासक व अंग्रेजी राज्य—एक दूसरे के अपराधी को सौंपने का वादा किया परन्तु इस सन्धि में ई सन् १८८८ में यह संशोधन कर दिया गया कि अंग्रेजी राज्य से भागे हुए अपराधी जो बून्दी में प्रवेश करेंगे उन्हें अंग्रेजी सरकार को सौंपा जायगा । ई सन् १८६७ में अंग्रेजी सरकार ने राव रामसिंह को १७ तोपों की सलामी देकर सम्मानित किया । ई सन् १८७७ में लॉर्ड लिटन ने देहली दरबार के अवसर पर बून्दी नरेश को जी सी एस आई का पदक दिया और महारानी के परामर्शदाता की उपाधि भी दी गई । ई सन् १८८२ में बून्दी राज्य में नमक उत्पादन करने का पूर्ण अधिकार अंग्रेजी राज्य को सौंप दिया गया जिसके बदले में अंग्रेजी सरकार ने वार्षिक आठ हजार रुपया बूंदी को देना तय किया ।

१८९० तक अंग्रेजी प्रभाव बूंदी पर स्थायी रूप से जम गया था परन्तु केवल कानूनी तौर पर अंग्रेज समय समय पर बूंदी राज से सुविधा प्राप्त करने की संधि करते गए । इस प्रकार की एक संधि महाराव रघुवीर सिंह के साथ १९ ५ में हुई जिसके द्वारा नागदा—मथुरा रेल मार्ग के निर्माण के लिए बूंदी का भाग प्राप्त किया गया । प्रथम महायुद्ध (१९१४–१९१९) के समय महाराव रघुवीरसिंह ने बूंदी के समस्त साधन अंग्रेजी सरकार को सौंप दिये थे जिससे युद्ध में सहायता दी जा सके । युद्ध के बाद १९२ ई में महाराव बूंदी ने केशोराय पाटण की सार्वभौमिकता प्राप्त करके व १८४७ की संधि

* एचीसन जिल्द ३ पृ २१
† वंश प्रकाश पृ १२१–१२३
‡ लार्ड डलहौजी ने ई सन् १८४७ में गोद न लेने की प्रथा प्रारम्भ की जिसके द्वारा भारतीय नरेशों के लुप्त हो। ई सन १ ५७ की क्रांति में था

की धारा ५ को समाप्त करने की प्रार्थना अग्रेजी सरकार से की ।* इस सबन्ध मे एक नई सधि २६ अप्रेल, १६२४ मे हुई जिसके आधार पर केशोराय पाटण के परगने का पूर्ण अधिकार बून्दी को दिया गया और ८०,००० रु जो नाम मात्र का लगान था, वह खिराज मे बदल दिया गया यह धनराशि दो किश्तो में देनी तय हुई—जो जनवरी व जुलाई माह मे कोष मे जमा होती थी। यह भी तय हुआ कि पेन्शनरो के वशजो को व उनके उत्तराधिकारियो को ६६६) रु तेरह आना वृत्ति के रूप मे बून्दी राज्य दिया करेगा ।† रघुवीरसिंह की मृत्यु (१६२७) के बाद उसका भतीजा ईश्वरीसिंह बून्दी की गद्दी पर बैठा । उसे अंग्रेजी राज्य ने बून्दी का शासक २८ नवम्वर, १६२७ के फरमान द्वारा स्वीकार किया। इसके काल मे दूसरा महायुद्ध हुआ। सन् १६४२ ई मे इसने अपने दत्तक पुत्र बहादुरसिंह को युद्ध मे सक्रिय भाग लेने के लिए भेजा । बहादुरसिंह बर्मा के युद्ध क्षेत्र में जापानियो के विरुद्ध लडा और विजय प्राप्त की । १६४५ मे ईश्वरीसिंह की मृत्यु के बाद बहादुरसिंह गद्दी पर बैठे । उन्होने बून्दी मे राजकीय सुधारो की घोषणा कर शासन को उदारवादी बना दिया । उन दिनो भारत मे अग्रेजो के विरुद्ध आन्दोलन चल रहा था । बून्दी उससे अछूता न रहा । जब ई. सन् १६४७ मे भारत से अग्रेजो ने प्रस्थान किया तो बून्दी के शासक को यह स्वतन्त्रता देदी गई थी कि वे भारत मे सम्मिलित हो या स्वतत्र रहे लेकिन बून्दी के महाराव बहादुरसिंह ने सयुक्त राजस्थान के निर्माण मे पूर्ण सहयोग दिया। २५ मार्च १६४८ ई को बून्दी, छोटा राजस्थान जो कोटा के नेतृत्व में निर्मित हुआ था, विलीन हो गया ।

बून्दी में राजनैतिक चेतना

बून्दी मे राजनैतिक जागृति ई सन् १६३१ से आरम्भ हुई जब यहा की फौज के एक उच्च अधिकारी श्री नित्यानन्द नागर ने प्रसिद्ध नमक आन्दोलन

---

* इस धारा के अनुसार यदि महाराव बून्दी व उसके उत्तराधिकारी ने अपने खिराज को निर्धारित समय पर नही देंगे या १८४७ की शर्तो को अमान्य करेंगे तो वे केशोराय पाटण का दो तिहाई भाग व बाकी एक तिहाई भाग जो स्वय महाराव के पास था, अंग्रेजो को दे दिया जावेगा ।

† एचीसन जिल्द ३, पृ २३७–२३८

में भाग लिया। श्री नागर की जागीर व सम्पत्ति इस कारण जब्त करली गई।*
१९४२ ई. के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' पर यहाँ के लोगों ने भी उसके समर्थन में जलूस निकाले। इसके बाद १९४६ में और रियासतों की भांति यहाँ भी प्रजा परिषद् की स्थापना हुई। अन्य परिषदों की तरह इसकी स्थापना का उद्देश्य उत्तरदायी शासन की स्थापना करना था। उत्तरदायी शासन की मांग पर एक संविधान का मसविदा तैयार करने के लिए एक समिति नियुक्त की गई लेकिन इस समिति की रिपोर्ट पर अमल नहीं किया गया। जनता ने बाद में अपने शासक के प्रति असंतोष प्रदर्शित करने को सार्वजनिक सभाएं की। इन सभाओं पर सरकार की ओर से लाठियां भी चलाई गई। अतः ई. सन् १९४७ में महाराव ने सुधारों की घोषणा की। सुधारों की घोषणा के बाद ही १५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतन्त्र हो गया। तब महाराव बून्दी ने राजस्थान प्रांत के निर्माण में पूर्ण सहयोग दिया। २५ मार्च १९४८ को यह राज्य राजस्थान संघ में सम्मिलित हो गया।

बून्दी राज्य के सामन्त

बूंदी राज्य के जागीरदारों और सरदारों को अपनी जागीरों पर वंश परम्परागत अधिकार प्राप्त नहीं हैं। उन्हें नकद भत्ता या जागीरें सेवाओं के

* श्री नागर का स्वर्गवास अभी २९.१२.१९५९ को ८ वर्ष की आयु पाकर हुआ है। अपनी स्वतन्त्रता की अदम्य लालसा के कारण उन्होंने वर्षों तक अपना जीवन जेल में ही बिताया। महात्मा गांधी के महाप्रयाण के पश्चात् उन्होंने अपना व अपने समस्त परिवार का कांग्रेस से सम्बन्ध यह कह कर कि "हम जैसों के लिये कांग्रेस में स्थान नहीं रहा" सदा के लिये अलग कर लिया था।

वदले मे मिलती है। इन जागीरो का रखना या जव्त करना दरवार की मर्जी पर निर्भर है।* जागीरदार के सवसे वडे पुत्र की जानशीनी होती है और वह भी वूंदी नरेश की मजूरी से। दरवार से मजूरी हासिल किये विना किसी सरदार को गोद लेने का अधिकार नही है।

इस राज्य मे कुल २७ मुख्य सरदार है, जिनमे से १७ हाडा चौहान और ३ राजाओ के अनौरस पुत्रो की सन्तान मे हैं। इन २० सरदारो को दरवार मे नरेश के दाहिनी तरफ वैठने का अधिकार है। अनौरस पुत्रो (खवास वालो) की जागीरे उनके वश मे केवल तीन पीढी तक रहती हैं। इसके वाद उन पर राज्य का हक हो जाता है और वास्तविक अधिकारियो को नीचे लिखे अनुसार गुजारे की रकम मिल जाती है—

(१) चौथी पीढी मे अर्थात् जिसको सर्वप्रथम जागीर मिली थी उसके प्रपौत्र के पुत्र को जागीर की आय का तीसरा हिस्सा,

(२) पाचवी पीढी मे चौथा और छठी पीढी मे आठवा हिस्सा,

इसके वाद किसी प्रकार की रकम नही दी जाती है और न उन्हे गोद लेने का हक रहता है। ऐसे जागीरदारो के ऋण का उत्तरदायित्व राज्य पर नही होता है और जागीर जव्त हो जाने के बाद ऐसा कर्जा राज्य से वसूल नही किया जा सकता है।†

शेष ७ सरदारो मे से पाँच सोलकी, एक राठौड तथा एक शेखावत (कछवाहा) वश का है जो वाई ओर बैठते हैं। मुख्य सरदार इस प्रकार है—

दुगारी—यहाँ के सरदार महाराज इन्द्रसिंह हाडा, जुनिया ठिकाने के उमराव के तीसरे पुत्र हैं। इनका जन्म स १९४५ वि (ई सन् १८८०) मे हुआ। इस जागीर के उत्तराधिकारी स १९६३ चैत्र (ई सन् १९०० मार्च) मास मे हुए जबकि दुगारी के महाराज शभूसिंह नि सन्तान गुजर गये। इस ठिकाने की आय ९ हजार रु सालाना है और यह ठिकाना सर्व प्रथम स १८२६ (ई सन् १७६९) मे महाराव राजा उम्मेदसिंह के पुत्र महाराव सरदारसिंह को मिला था। यह ठिकाना राज्य को कोई खिराज न देकर केवल चाकरी (सेवा) देता है।

---

* अब कुल जागीरें राजस्थान भूमिसुधार व जागीर पुनर्ग्रहण एक्ट के अन्तर्गत पुनर्ग्रहित कर ली गई है।

† बून्दी एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट सन् १९४०-४१ पृ १४

सुनिया—यहां के सरदार महाराज शिवराजसिंह अपने पिता शिवदानसिंह के उत्तराधिकारी हुए। यह जागीर दुगारी जागीर का ही हिस्सा है जो दो भाई अगूसिंह और शिवदानसिंह ने अपने पिता महाराव देवीसिंह की मृत्यु पर आपस में बांट ली। इस ठिकाने की आय ३ ७५) रु सालाना है। राज्य को खिराज नहीं दिया जाता है पर चाकरी देनी पड़ती है।

अजाबर—यहां के महाराज जसराजसिंह महाराजकुमार गोपीनाथ के पुत्र महासिंह के वंशज हैं। अपने पिता महाराज बैरीशालसिंह के ये वि स १९७६ कार्तिक (ई सन् १९१९ नवम्बर) मास में उत्तराधिकारी हुए। ये जागीर सं १६५८ (ई सन् १५७१) में स्थापित हुई। जागीर की आय ६ ५०) रु है। खिराज की रकम ११०) रु है। तारागढ़ किले में पहले यहां से ४५ पैदल सिपाही भेजे जाते थे। उसके बदले में ४२२) रु सालाना दिया जाता है।

जागरए—यहां के सरदार ठाकुर सिंहसाल सोलंकी वंश के राजपूत हैं। ये स १९७१ (ई सन् १९१४) में अपने पिता ठाकुर इन्द्रसाल के उत्तराधिकारी हुए। सं १८१२ (ई सन् १७५८) में यह जागीर इस घराने को इनायत हुई थी। इसकी आमदनी ५,३०) रु सालाना है तथा यहां से राज्य को खिराज के ३००) रु और ९ घुड़सवारों के बदले ३५ वार्षिक मिलते हैं।

बर्कंवा—यहां के ठाकुर संमूसिंह १८ वर्ष की आयु में ई स १९२५ में अपने पिता स्वर्गीय ठाकुर शिवरामसिंह के उत्तराधिकारी हुए। यह जागीर सं० १८ ५ (ई स १७४८) में महाराव उम्मेदसिंह को मिली थी। यहां की आमदनी २१ ०) रु सालाना है और राज्य को कोई खिराज नहीं दिया जाता है।

मोबड़ा—यहां के महाराज शिवरामसिंह ई सन् १९१८ अक्टूबर मास में अपने पिता महाराज मोड़सिंह के उत्तराधिकारी हुए। ये महाराजकुमार गोपीनाथ के पुत्र महासिंह के वंशज हैं। सं १८ ४ (ई स १७४७) में यह जागीर इस घराने को इनायत हुई थी। यहां के स्वामी १७ घुड़सवारों की सेवा के बदले में ६००) रु और खिराज के ५४) रु सालाना राज्य को देते हैं।

करेड़ का पीपल्या—यहां के स्वामी श्यामसिंह बून्दी नरेश रावरतन के पुत्र हरिसिंह के वंश में हैं। महाराज जसवन्तसिंह के निःसंतान गुजरने पर सं १९८२ (ई सन् १९२५) में जागीर इन्हें मिली। य जागीर सं १६२७ (ई स १७७) में पहले पहल इनायत हुई थी। इसकी वार्षिक आय दो हजार

रु है। यहा से खिराज के १२०) रु तथा चाकरी सेवा के वदले १३०) रु. बून्दी सरकार को मिलते हैं।

सोरा—यहा के स्वामी महाराज चन्द्रभानसिंह है। इनकी आय ३०००) रु है और ये खिराज के १८०) रु तथा चाकरी के बदले २००) रु सालाना देते हैं।

बावडी खेड़ा—यहा के जागीरदार महाराज पृथ्वीसिंह हैं। जागीर की आय ३०००) रु. सालाना हैं। राज्य को कुछ भी खिराज का नही देते है।

जैतगड—यहा के स्वामी महाराज हरिनाथसिंह महाराजकुमार गोपीनाथ के पुत्र महासिंह के वशज हैं। यह जागीर स १८०६ (ई स १७४९) मे इनायत हुई। यहा की सालाना आय ४६००) रु है। ६ घुडसवारो की चाकरी के बदले मे ३००) रु तथा खिराज के २७६) रु यहा से राज्य को मिलते हैं।

दातूडा—यहा के सरदार रावत शिवसिंह शेखावत कछवाहा राजपून हैं। वि स १९७१ चैत सुदि ६, गुरुवार (ई. सन् १९१४ ता० २ अप्रेल) को रावत मुकन्दसिंह की मृत्यु पर ये इस ठिकाने के स्वामी हुए। यह जागीर इस वश को स १८८० वि (ई सन् १८२३) मे इनायत हुई। इस ठिकाने की सालाना आय ३०००) रु हैं और खिराज के १८६) रु और ३ सवारो की चाकरी के बदले २००) रु सालाना राज्य को देते हैं।

नैगढ—यहा के ठाकुर धूलसिंह अपने पिता ठाकुर छत्रसिंह के उत्तरकारी हुए। इस ठिकाने की आय १७५०) है और ये खिराज के १०५) रु. तथा चाकरी के बदले १२०) रु सालाना राज्य को देते हैं।

अजाता—यहा के जागीरदार ठाकुर जवाहरसिंह हैं। आपको इस जागीर से सालाना दो हजार रु की आय है। ये खिराज के ११०) रु व चाकरी (सेवा) के बदले १२०) रु राज्य मे भरते हैं।

मालकपुरा—यहा के शिवराजसिंह को इस जागीर से ३७५०) रु. की आय है। खिराज के २२५) रु. और चाकरी के बदले मे २००) रु. ये राज्य को देते हैं।

बूंदी राज्य का वंश वृक्ष

(१) राव देवासिंह
(२) समरसिंह
(३) नरपाल
(४) हम्मीर
(५) बरसिंह (वीरसिंह)
(६) बैरीसाल
(७) भाणदेव (भांडा)

(८) राव नारायणदास — राव नरबद
(९) राव सूरजमल — (११) राव अर्जुन
(१०) सुरताण — (१२) रावराजा सुर्जन

राव दूदा — (१३) भोज
(१४) रतनसिंह सरबलन्द रावराजा

कु. गोपीनाथ — माधोसिंह (कोटा) — हरीसिंह (पीपलदा)

(१५) शत्रुशाल — इन्द्रसाल (इन्द्रगढ़) — बैरीसाल (बलवन) — मोहकमसिंह — महासिंह

(१६) भावसिंह — भीमसिंह — भगवतसिंह — भारतसिंह

किशनसिंह
(१७) अनिरुद्धसिंह (दत्तक)
(१८) महाराव राजा बुधसिंह

(१९) उम्मेदसिंह — महाराज दीपसिंह (कापरेन)

(२०) अजीतसिंह — बहादुरसिंह (कोठरा) — सरदारसिंह (गुमानी)

(Contd. in last page)
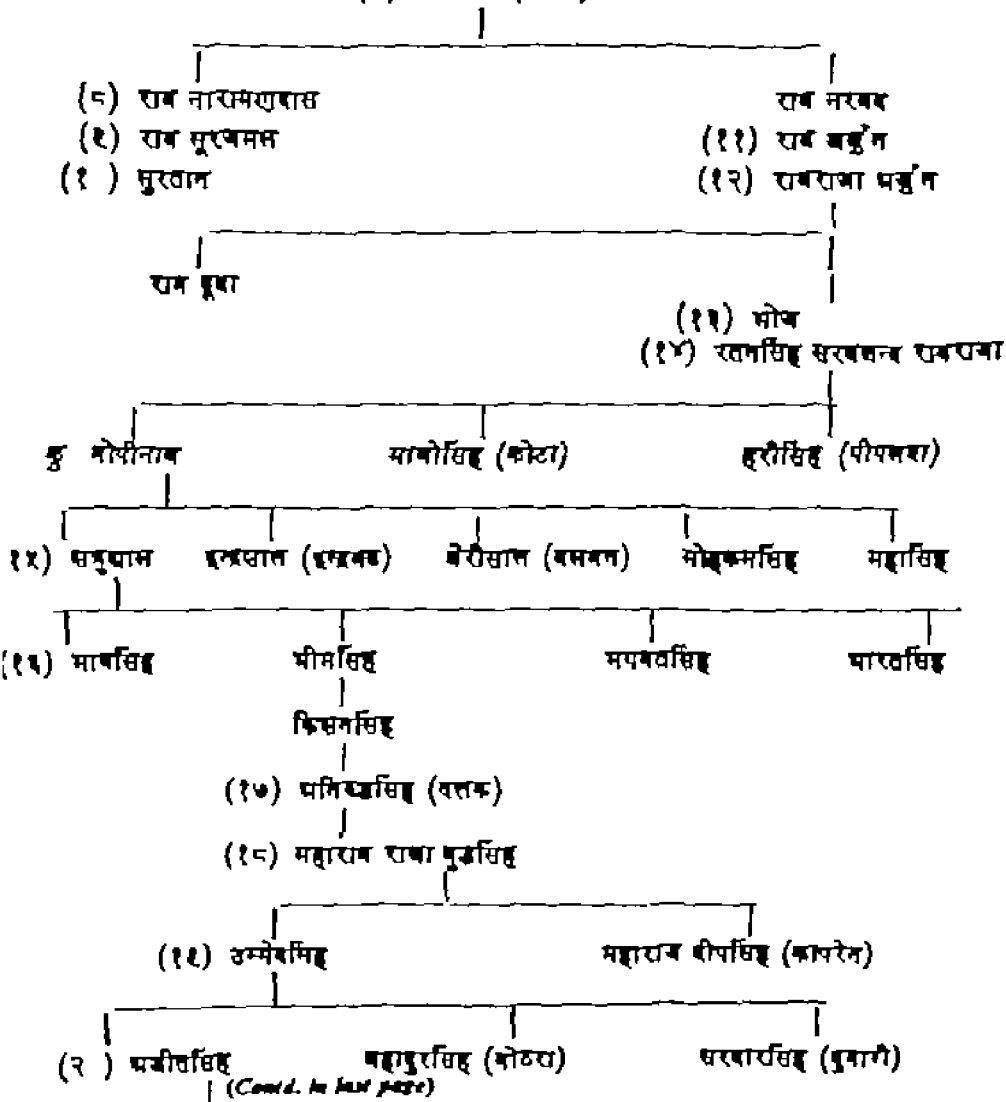
(२१) विशनसिंह
(२२) रामसिंह
गोपालसिंह
भीमसिंह
रणनाथसिंह
(२३) रघुवीरसिंह
रणराजसिंह
रघुराज
रघुवी
रघुवेन्द्रसिंह
(२४) ईश्वरीसिंह
(२५) बहादुरसिंह (दत्तक)
म० कु रणजीतसिंह

शुद्धि-पत्र

●●

पृष्ठ स०	पक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१६	२५	अधिक सिंचित	अधिक कर सिंचित
१७	११	एक सेनापति	एक अन्य सेनापति
३०	४	सवत १६८१ में	सवत १६८१ (सन् १६२४ ई०) में
३०	फुटनोट‡	जिल्द	जिल्द ३, पृ० २४४
३२	फुटनोट*	आदि पर्व पृ० ४६५१	आदि पर्व ४६-५१
३७	६	पन्द्रह वर्ष	वीस वर्ष
३७	७	वि० स ६२५ (ई० सन ८६८)	वि० स० ८६० (ई० सन ८३३)
३७	फुटनोट‡	१५×७=१०५=१०३० —१०५=६२५ वि० स०	२०×७=१४०, १०३७—१४०=८६० वि० स०
३८	१	पुत्र गुवक	पुत्र गुमदू
३८	३	वि० स० ८०० (ई० स० ७४३)	वि० स० ८७२ (ई० सन् ८१५)
३८	४	का है।	का है।*
३८	१६	शासक हुआ	शासक हुआ¶
३८	फुटनोट	*विजोलिया शिलालेख Their Cradle Suchtract Dr D. R Sharma Early Chohan Dynasties Page10	*Indian Antiquity vol. XL Pp. 239-240 and vol XLII Page 58 ¶Their Cradle Such Tract *विजोलिया शिलालेख
३६	२३	महम्मद गोरी	मोहम्मद गोरी
४०	२	वन्धु घाटी	वन्दु घाटी
४०	१२	राव लखरण था या	राव लखरण या
४०	१२	माणिक्य रहा।	माणिक्य रहा हो।
४०	२६,२७	केलख	कोलरण
४१	१	केलरण	कोलरण
४३	फुटनोट १	की कल्पना मानकर इसे	की इसे कल्पना मानकर
४४	फुटनोट* ३	तिथि से	इस तिथि से
४६	५	अधिपति मानते भी	अधिपति मानते हुए भी

४९	६	(ई० सन् १४२६ ई० ८९१)	(ई० सन् १४२६)
५२	फुटनोट‡ १	१११ ई	१५११ ई
५६	फुटनोट‡	टाड जिल्द १ पृ ७४१७	पृ १४७६
५६	७	सं १५११	सं १५८८
५७	१	राजपूत	राजपूत न
६१	२२	समाना शुरू किया	रचना शुरू किया
६२	१६	उसके अपराध	बूंदा के अपराध
६५	१	इसी अहमदनगर के युद्ध	अहमदनगर के इस युद्ध
६५	५	किलों की बुर्ज	किले की एक बुर्ज
६५	फुटनोट‡ ४	अकबर ने	बाद में अकबर ने
६६	१२ १३	बाद में सं १६७१ वि	बाद में वि सं १६७१
६७	१	भांसी	झूंसी
६७	११	१८८	१९८
६७	फुटनोट १	(जहांगीर का चौथा पुत्र) को	शहरयार (जहांगीर का चौथा पुत्र) को
६७	फुटनोट २	अतः शहरयार खुर्रम को कन्धार	अतः खुर्रम को कन्धार
६७	फुटनोट‡	जहांगीरी जिल्द	तुजुके जहांगीरी
६८	१	पायरस्या	बायरोस
६८	फुटनोट	वंश-भास्कर	*वंश भास्कर
६९	९	ये राव ... थे	वह राव ... था।
६९	१२	और लेकर दूसरी	और दूसरी
७०	१	जानेजमा	जानेजहां
७१	फुटनोट‡	मास ४	मास ?
७१	१	नाराज था लेकिन इसके	नाराज था। इसके
७४	फुटनोट‡ १	मनुची	मनूची
७६	४	दुर्जनसिंह मरच्छो	दुर्जनसिंह मरहठों
७९	१२	देखा कि मैं फर्रुखसियर	वह फर्रुखसियर
	१३	और मेरी जान	और उसकी जान
८०	२७	मनोरस बतलाता था	बतलाने लगा।
८७	१५	मनकेर मुक्ता	मिपसर मुक्ता
	१६	मरचाड़ा	भटवाड़ा
९१	२	हमारे छुट भैया	उनके छुट भैया
	२८	सुदि १ को	सुदि १
९२	१	हटाया जाकर	हटाया गया और
	५	(ई० ७८ १ १८)	(ई० सन् १७१८)
९५	५	थिर	फिर
	६	और मौजी	मौजी

९३	७	मैं अब	वह अब
	८	मकू गन	सकेगा
	११	पर अपना अधिकार	पर अधिकार
	१७	१८३०	१८६७
	२७	तथा सधिया	तथा सिंधिया
९४	६	१८ हजार रु०	८० हजार रु०
	१०	वार्षिक सिन्धिया को देते	वार्षिक देते।
	१६	अधीनस्थ	अधीन
९५	२	(१८२३ A.D)	(ई० सन् १८२३)
	६	चले आया।	चला आया।
	१६	इसने एक इन्द्रजीत	इसने इन्द्रजीत
	२२	इसलिए दूसरे	इसलिए
९७	१७	अधिक थी और इन	अधिक होने से इन
९८	११	इन्सने	इसने
१०३	१६	इन्सने	इसने
१०५	२४	बून्दी को	बून्दी के
१०६	४	९४५	१९४५
१०८	८	१० लाख	२० लाख
१०९	६	४००(३४३ ई०)	१४००(१३४३ ई०)
	१५	१४५९	१४४९ ई०
	१६	१४५९ के	१४५९ में
	२०	मुसलमाने अमरकन्दी और समरकन्दी रखा।	मुसलमानो ने अमरकन्दी और समरकन्दी रखा
११२	७	नागोर के	आमेर के
११३	२२	राव सुजान	राव सुर्जन
११४	१४	१६७०	१६००
	२३	स्थापित कर लिया	स्थापित किया।
११७	४	शत्रुशाल ने दिल्ली के की हैसियत से,	शत्रुशाल दिल्ली का सुबेदार था,
१२७	१३	महाराजा अभयसिंह	महाराजा विजयसिंय
	१४	अभयसिंह ने मराठो मे	विजयसिंह ने मराठों को
१२८	१६	मानसन तो दिल्ली	मानसन दिल्ली
	२५	पाटल	पाटण
	२६	यह पाटण	पाटण

MY ESTEEMED FRIEND, the late Shri Jagadish Singh Gahlot, the renowned historian of Rajputana has made himself immortal by his numerous books and articles bearing on the history of Rajputana His worthy son Shri Sukhvir Singh Gahlot is now engaged in bringing out some of the unpublished books of his revered father This is a laudable enterprise worthy of our respect and admiration Among the works taken up for publication I find the histories of Bundi, Kotah and Sirohi States Through the favour of Shri Sukhvir Singh Gahlot, I am in possession of the printed forms of Bundi Rajya (History of Bundi State) Though the States are now merged into Bharata, their history, full of heroism and patriotic fervour, knows no merger Modern historians in India have been doing their best to reconstruct this history and keep it before young India with all its glories in a correct historical perspective The late Shri Jagadish Singh Gahlot spent his life in writing the history of Rajputana on modern lines and produced his *magnum opus* on this history in five big volumes His present history of the Bundi State is written on the same lines, with due regard to historical fact It is charactorised by balanced judgment, strict documentation, accuracy in dealing with chronology as far as possible, and freedom from inflation The book will be very useful to the research workers as also to lay readers with a historical bent of mind I congratulate Shri Sukhvir Singh Gahlot heartily upon the publication of this unpublished work of his father with good many pictures of the rulers of Bundi and some historical sites of this State I am now eager to read the History of the Kotah State

Bhandarkar Oriental Research Institute,
POONA-4

P K Gode

❀ • ❀

मुझे श्री जगदीशसिंहजी गहलोत का बूंदी का इतिहास पढ़कर बड़ी प्रसन्नता है। इसके प्रकाशन से राजस्थान के इतिहास की कमी पूरी होती है। स्वर्गीय लेखक के निधन के बाद उनके सुपुत्र श्री सुखवीरसिंह गहलोत ने इसके प्रकाशन में बड़ा प्रयत्न कर, इतिहास प्रेमियो की आवश्यकता की पूर्ति की है जो स्तुत्य है। इस लडी में अन्य राजस्थानी भागो का इतिहास प्रकाशन में आ रहा है जो बड़ी प्रसन्नता का विषय है।